

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_186546

UNIVERSAL
LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H 541 / 1128D Accession No. H 2963

Autl हरि-भगवान् ।

Title ସି. ଶି. ସି. ଏଚ. ନି. ଆଇ. ଆଇ. ଆଇ.

This book should be returned on or before the date last marked below.

दैनिक जीवन में विज्ञान

रसायन-शास्त्र

हरि भगवान् एम० एससी०, 'विज्ञान रत्न',
रिसर्च स्कॉलर, रसायन-विभाग,
लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

लखनऊ

अशोक प्रकाशन

१९५६ . . .

प्रथम संस्करण १९५६

Checked 1965

(C) १९५६, अशोक प्रकाशन, लखनऊ

Checked 1969

अशोक प्रेस ने अपने प्रेस में कम्पोज किया;
मशीन वर्क पवन प्रेस और भार्गव प्रेस, लखनऊ ने किया

—: समर्पण :-

पूज्य मातामह
रायबहादुर श्री पुत्तनलाल जी विद्यार्थी
को
सादर समर्पित

प्रस्तावना

शिक्षा-शास्त्र के अनेक पंडितों का विचार है कि भारतीय शिक्षा में विद्यार्थियों के मस्तिष्क के निर्माण एवं विकास की ओर नहीं, किन्तु उसको अधिकाधिक तथ्यों से परिपूरित करने का प्रयत्न किया जाता है (Indian Education tends to be informative rather than formative)। हमारी पाठ्य पुस्तकों में विषय को बताने का अधिक प्रयास किया जाता है, विषय को रुचिकर बनाने का साधारणतः उनमें कोई प्रयत्न नहीं होता। फलतः इस प्रकार की पुस्तकें केवल परीक्षा उत्तीर्ण करने के लिए अथवा डिग्री लेने के लिए पढ़ी जाती हैं। कदाचित् अरुचिकर पुस्तकों के कारण ही विद्यार्थी शिक्षालय छोड़ने के बाद पढ़ना त्याग देते हैं, पढ़ा हुआ बहुत कुछ भूल जाते हैं और भविष्य में ज्ञान-वृद्धि नहीं करते। पाठ्य पुस्तकों के साथ-साथ रुचिकर पुस्तकों की भी आजकल बड़ी आवश्यकता है।

प्रस्तुत पुस्तक में रसायन के विद्यार्थी एवं रसायन से अनभिज्ञ पुरुषों को इस विषय की ओर आकर्षित करने का एक विनीत प्रयत्न किया गया है। हिन्दी में इस प्रकार का यह पहला प्रयास है। इसमें रसायन के जीवन-सम्बन्धी उपयोगों का सरल भाषा में एक रेखाचित्र प्रस्तुत किया गया है। मुझे आशा है कि रसायन से अनभिज्ञ व्यक्ति इसका पढ़कर विषय की ओर आकर्षित होंगे और रसायन के विद्यार्थी एवं

शिक्षक इसका पढ़ने के बाद अपने विषय का अधिक उत्साह से अध्ययन करेंगे।

यद्यपि त्रुटियों से बचने के लिए हर प्रकार की सावधानी की गई है, तथापि प्रथम संस्करण में कुछ त्रुटियों का आ जाना संभव होना चाहिए। पुस्तक के अन्त में शुद्धि-पत्र दे दिया गया है। तब भी पृ० १२ और पृ० २६ की त्रुटियों के लिए मैं क्षमा चाहता हूँ। अगले संस्करण में इनके दूर करने का यथाशक्ति प्रयास किया जायगा। मैं उन पाठकों का बड़ा आभारी होऊँगा, जो पुस्तक की अन्य त्रुटियों की ओर एवं पुस्तक को अधिक रुचिकर तथा उपयोगी बनाने के लिए अपने सुझावों की ओर मेरा ध्यान आकर्षित करेंगे।

महेश्वरी सुरेन्द्र बहादुर श्रीवास्तव एम० एससी०, मोहिनी शंकर नक्सेना एम० एससी०, श्याम सुन्दर गुप्त एम० एससी० एवं शंकर प्रसाद अग्रवाल एम० एससी० ने पुस्तक की प्रगति में विशेष रुचि दिखाई है : इसके लिए मैं उनका आभारी हूँ।

विषय-सूची

भूमिका

१. विज्ञान और रसायन	...	...	३
२. पदार्थ-रचना	...	...	१४
३. रसायन की विधि	...	...	२२

उपयोग

४. भोजन--१	...	...	३३
५. भोजन--२	...	...	४८
६. खेती	...	...	५६
७. कपड़ा	...	...	६५
८. घर	...	...	७८
९. धातु	...	...	८६
१०. धातु-संकर	...	...	९७
११. यात्रा	...	...	१०४
१२. मानसिक सम्पर्क	...	...	११२

१३. प्रकाश	...	१२०
१४. पदार्थों की रक्षा	...	१२८
१५. शीशा	...	१३८
१६. सुगंधित पदार्थ	...	१४६
१७. प्लास्टिक और रबड़	...	१५१
१८. रसायन और युद्ध	...	१५८
१९. सफ़ाई	...	१६४
२०. स्वास्थ्य और ओषधि	...	१७२
२१. ईंधन	...	१८२
२२. परमाणु-शक्ति	...	१९२
२३. रसायन और आधुनिक अन्वेषण	...	२०२
शुद्धि पत्र	...	२०७

भूमिका

विज्ञान और रसायन

[विज्ञान क्या है ? ; विज्ञान का विषय-विभाग ; रसायन ; तत्त्व ;
तत्त्वों का नाटक]

आपने बहुधा सुना होगा कि विज्ञान के चमत्कारों से आधुनिक जीवन में अभूतपूर्व परिवर्तन हो गये हैं। विज्ञान ने प्रकृति पर विजय प्राप्त करके, प्रकृति के कार्य-कलापों का अध्ययन करके, प्राकृतिक नियमों को जान करके प्रकृति की शक्तियों को हमारे उपयोग में लगाया है। फलतः मनुष्य को भोपड़ी के स्थान पर महल, पत्तों के स्थान पर सुखप्रद और सुन्दर कपड़े, बैलगाड़ी के स्थान पर मोटर, रेल, वायुयान आदि उपलब्ध है। ये सब परिवर्तन कैसे हुए? साधारण उत्तर है—विज्ञान से ; लेकिन यह विज्ञान है क्या ?

विज्ञान क्या है ?

विज्ञान वास्तव में अनुभवजन्य ज्ञान है। मनुष्य में 'आत्मा' के पश्चात् तार्किक शक्ति, बहस करने की लियाक़त, ही सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है। जीवन को समझने और उसको लाभदायक बनाने के लिए इस तार्किक शक्ति का अधिकतम विकास और उपयोग सम्पूर्ण ज्ञान का ध्येय है। इस तर्कशक्ति का विकास दो प्रकार से किया जा सकता है—दर्शन

से अथवा विज्ञान से। निष्पक्ष भाव उत्पन्न करके जीवन और उसके विभिन्न पार्श्वों का अध्ययन करना दार्शनिक विधि के अन्तर्गत है। इसमें तर्क-शक्ति और निष्पक्ष भावना के विकास की आवश्यकता पड़ती है। दूसरी विधि में, जिसको वैज्ञानिक विधि कहते हैं, तर्क को अनुभव पर आधारित करना होता है—यह देखने के लिए कि विचारधारा ठीक मार्ग पर है या नहीं। इसलिए इसमें प्रयोग की आवश्यकता पड़ती है। विशेष परिस्थितियों में प्रयोग द्वारा प्राप्त निरीक्षणों से ठीक प्रकार की बहस के बाद निष्कर्ष प्राप्त करना वैज्ञानिक विधि है और इस विधि द्वारा प्राप्त किये हुए ज्ञान को विज्ञान कहते हैं।

ज्ञान प्राप्त करने के लिए वैज्ञानिक और दार्शनिक विधियों के मूल अन्तरों को एक उदाहरण से स्पष्ट करना अच्छा होगा। मान लीजिए—आप जानना चाहते हैं कि दो अलग भारवाली वस्तुओं को एक साथ एक ही ऊँचाई से यदि फेंका जाय तो कौन-सी पहले ज़मीन पर पहुँचेगी। वास्तव में सोलहवीं शताब्दी और प्रसिद्ध वैज्ञानिक गैलीलियो के पूर्व यह एक बड़ी समस्या थी। दार्शनिक विधि से लोग बहस करते रहे; कुछ लोग कहते रहे कि भारी वस्तु पहले ज़मीन पर गिरेगी कुछ कहते रहे कि हलकी वस्तु पहले गिरेगी और कुछ कहते रहे कि दोनों एक साथ ज़मीन पर गिरेंगी। हर बात के लिए बहस इकट्ठा होती गई लेकिन कोई फल न निकला। गैलीलियो ने जब इस समस्या पर विचार प्रकट किये तो कहा—“भूल जाइये कि आपको अपने मस्तिष्क से क्या बात ठीक लगती है। आइये, चलकर प्रयोग करें और देखें कि क्या होता है।” वह पीसा की प्रसिद्ध मीनार पर चढ़ गया और वहाँ से उसने दो वस्तुएँ, जिनके भार में अन्तर था, एक साथ ही पृथ्वी पर फेंकी। वहाँ

पर उपस्थित जन-समुदाय को यह देखकर आश्चर्य हुआ कि वे एक साथ ज़मीन से टकराईं। तो जिस समस्या को शताब्दियों की कोरी बहस न सुलझा सकी वह प्रयोग द्वारा एक क्षण में इस प्रकार हल हो गई जिससे किसी को किसी प्रकार का सन्देह न रहा। इस प्रकार गैलिलियो ने तर्क में प्रयोग का महत्त्व, बहस में अनुभव की आवश्यकता को दिखाया और वैज्ञानिक विधि को जन्म दिया।

अब यह स्पष्ट हो गया होगा कि वैज्ञानिक प्रयोग पर अधिक बल देते हैं। इसलिए उनका क्षेत्र चलता-फिरता संसार है, स्वप्नभूमि नहीं; इहलौकिक जीवन है, पारलौकिक जीवन नहीं। संसार में रहकर भौतिक वस्तुओं की प्राप्ति से जीवन को सुखमय बनाकर अनन्त सुख की खोज की तैयारी के लिए मनुष्य को अधिक प्रयत्नशील बनाना—विज्ञान का मुख्य ध्येय है। इस प्रकार विज्ञान इहलौकिक जीवन को सफल बनाने की पहली सीढ़ी है।

विज्ञान का विषय-विभाग

भौतिक संसार में ही प्रयोग किया जाना सम्भव है, इसलिए केवल भौतिक संसार ही विज्ञान का क्षेत्र है। इस भौतिक संसार को ज्ञान-प्राप्ति की सुविधा के लिए तीन मुख्य भागों में बाँटा गया है :—

१. शक्ति,
२. पदार्थ और
३. जीवित वस्तुएँ।

विभिन्न प्रकार की शक्तियों (बिजली, चुम्बकत्व, ताप, प्रकाश, ध्वनि आदि) का अध्ययन भौतिक शास्त्र के अन्तर्गत है।

विभिन्न प्रकार की जड़ वस्तुओं (जिसको वैज्ञानिक 'पदार्थ' की संज्ञा देते हैं) का अध्ययन रसायन के अन्तर्गत है।

विभिन्न प्रकार के जीवों (वनस्पति एवं पशु जगत् दोनों) का अध्ययन जीव-शास्त्र के अन्तर्गत है।

भौतिक शास्त्री बिजली, ताप, प्रकाश आदि शक्तियों के उत्पादन—वस्तुतः एक शक्ति का दूसरी शक्ति में परिवर्तन—का अध्ययन करते हैं। रसायन शास्त्री पदार्थों के विभिन्न भेदों और एक पदार्थ का दूसरे पदार्थ में परिवर्तन का अध्ययन करते हैं। जीव-शास्त्री वनस्पति-संसार और पशु-संसार के विविध प्राणियों का अध्ययन करते हैं। इसमें विभिन्न प्राणियों के परिवर्तन का अध्ययन नहीं हो सकता क्योंकि वह अब तक के ज्ञान के अनुसार भौतिक संसार की सीमा के परे है। प्राणियों की रचना को जानकर उनके विकास-क्रम का अध्ययन ही जीव-शास्त्रियों का समुचित क्षेत्र है।

रसायन

कदाचित् आपको सुनकर आश्चर्य हो कि कुछ लोग 'रसायन' शब्द की व्युत्पत्ति 'रसोई' शब्द से मानते हैं। कच्चे खाने, रोटी आदि के लिए 'रसोई' शब्द का प्रयोग किया जाता है। इस बात का जिक्र इसलिए किया गया है जिससे आप यह जान सकें कि 'रसायन' का हमारे जीवन से घनिष्ठ सम्बन्ध है। किस प्रकार है?—यह तो आगे के अध्यायों में बताने की चेष्टा की जायगी किन्तु यहाँ पर यह बताना जरूरी है कि जड़ पदार्थ का अध्ययन किस प्रकार सम्भव है।

जड़ पदार्थों की यदि आप सूची बनाना चाहें तो कदाचित् आप

उसे कभी पूरी न कर सकेंगे। आप जिस कमरे में बैठकर इस पुस्तक को पढ़ रहे हैं वहाँ चारों ओर निगाह दौड़ाकर कुर्सी, मेज, शीशा, दावात, बल्ब, तस्वीर, कलम, पेंसिल, निब, कील आदि से सूची आरम्भ की जा सकती है, किन्तु जैसे ही आप घर के बाहर निकलेगे आपको अपनी सूची में कमी मालूम होगी। जड़ पदार्थों की सूची बना करके, उनका वर्गीकरण करके पदार्थ का अध्ययन नहीं हो सकता। यदि हम उन चीजों का अध्ययन करें जिनसे ये चीजे बनी हैं तो कदाचित् जड़ पदार्थों का अध्ययन हो सकता है। कुर्सी, मेज के लिए आप केवल लकड़ी अपनी सूची में रखें; शीशा, दावात, तस्वीर, बल्ब के लिए आप केवल शीशा ही रखें; कलम, पेंसिल, निब, कील के लिए आप केवल धातु ही रखें तो कदाचित् आपको सूची बनाने में सरलता होगी। इसलिये यह समझना चाहिए कि जड़ पदार्थों का अध्ययन प्रत्येक पदार्थ से नहीं, पूरी वस्तुओं से नहीं, अपितु उनके मूल अवयवों से किया जा सकता है।

तत्त्व

रसायनज्ञों ने बड़े परिश्रम से पता लगाया कि पदार्थ में कुछ मूल अवयव होते हैं जिनमें साधारण रीति से कोई परिवर्तन नहीं किया जा सकता। इन अपरिवर्तनीय अवयवों को तत्त्व की संज्ञा दी जाती है। इन तत्त्वों का भिन्न गुणोंवाले तत्त्वों में रासायनिक परिवर्तन असम्भव है। सोना, चाँदी, लोहा, सीसा (Lead) आदि में केवल एक ही प्रकार का और एक ही गुणोंवाला पदार्थ है, इसलिए इनको तत्त्व कहते हैं। अब तक केवल ६२ प्राकृतिक तत्त्वों का पता लगा है; ६ तत्त्वों का प्रयोगशाला में निर्माण किया जा चुका है। इसलिए अब तक जाने गये तत्त्वों

की कुल संख्या १०१ है। सम्भव है कि प्रयोगशाला में भविष्य में कुछ और तत्त्वों का निर्माण किया जा सके किन्तु यह लगभग निश्चित-सा है कि प्रकृति में केवल ९२ तत्त्व हैं। ये तत्त्व एक प्रकार से बड़े कुशल अभिनेता हैं जो भिन्न-भिन्न रूप धारण करके जड़ जगत् में अनेक प्रकार के नाटक खेलते हैं। रसायनज्ञों ने बड़े परिश्रम के पश्चात् इन ९२ अभिनेताओं को पहिचान लिया, इसलिए इन नाटकों को समझना अब उनके लिए कठिन नहीं है। फलतः पदार्थ की सूची और विभिन्न पदार्थों का वर्गीकरण आवश्यक नहीं। इन मूल अवयवों, ९२ प्राकृतिक एवं ९ प्रयोगशाला में निर्मित तत्त्वों के अध्ययन से सम्पूर्ण जड़ जगत् का ज्ञान होता है। प्रकृति में पाये जानेवाले ९२ तत्त्वों की सूची यह है :—

१. ऐक्टीनियम	१५. सीरियम
२. अलूमिनियम	१६. सीसियम
३. ऐंटीमनी	१७. क्लोरीन
४. आर्गन	१८. क्रोमियम
५. आर्सेनिक	१९. कोबाल्ट
६. अस्टाटीन	२०. कॉपर
७. बेरियम	२१. डिसप्रोज़ियम
८. बेरिलियम	२२. अरबियम
९. बिस्मथ	२३. यूरोपियम
१०. बोरॉन	२४. फ़्लोरीन
११. ब्रोमीन	२५. फ्रान्सियम
१२. कैडमियम	२६. गैडोलीनियम
१३. कैल्सियम	२७. गैलियम
१४. कार्बन	२८. जर्मेनियम

२६. गोल्ड (सोना)	५३. नाइट्रोजन
३०. हीलियम	५४. आस्मियम
३१. होल्मियम	५५. आक्मीजन
३२. हाइड्रोजन	५६. पेलेंडियम
३३. हैफ़नीयम	५७. फ़ासफ़ोरस
३४. इलीनियम (प्रोमिथियम)	५८. प्लैटिनम
३५. इन्डियम	५९. पलोनीयम
३६. आयोडीन	६०. पोटैसियम
३७. इरीडियम	६१. प्रेज़ियोडिमियम
३८. आयरन (लोहा)	६२. रेडियम
३९. क्रिप्टॉन	६३. रैडान
४०. लैन्थेनम	६४. रीनियम
४१. लेड (सीसा)	६५. र्होडियम
४२. लीथियम	६६. रूबिडियम
४३. लुटीसियम	६७. हथिनियम
४४. मैगनीसियम	६८. संमेरियम
४५. मैगनीज़	६९. स्कैन्डियम
४६. मासूरियम	७०. सेलीनियम
४७. मरकरी (पारा)	७१. सिलीकॉन
४८. मॉलिब्डिनम	७२. सिल्वर (चाँदी)
४९. नियोडिमियम	७३. सोडियम
५०. नियाँन	७४. स्ट्रान्सियम
५१. निकिल	७५. सल्फ़र (गंधक)
५२. नियोबियम	७६. टैटेलम

७७. टेलूरियम	८५. यूरेनियम
७८. टर्बियम	८६. वनेडियम
७९. थैलियम	८७. जेन
८०. थोरियम	८८. इटटर्बियम
८१. थूलियम	८९. इट्रियम
८२. टिन	९०. जिक (जस्ता)
८३. टाइटेनियम	९१. जरकोनियम
८४. टंगस्टन	९२. प्रोटोएक्टिनियम

प्रयोगशाला में निर्मित ९ तत्वों को ट्रान्सयूरेनिक तत्व (Trans-uranic elements) कहते हैं। यूरेनियम ९२ तत्वों में सबसे भारी है और ये ९ तत्व उसके बाद आते हैं। इनमें से केवल ६ के सम्बन्ध में ही ज्ञान है; शेष ३ का ज्ञान गुप्त है। इन ६ तत्वों के नाम ये हैं—नेचूनियम, प्लूटोनियम, अमेरिसियम, क्यूरियम, बरकेलियम और कैलीफोर्नियम।

इन ९८ तत्वों की सूची पढ़कर आप घबड़ा उठेंगे। कुछ तत्वों के नाम तो बड़े ग़ज़ीब-से लगते हैं; उनका उच्चारण भी कठिन है। किन्तु भूलिय नहीं कि ये भी अभिनेता हैं। यदि आप जड़ जगत् के नाटक से परिचय प्राप्त करना चाहते हैं तो इनको भी महत्त्व देना होगा।

तत्वों का नाटक

नाटक तो आपने अनेक देखे होंगे और यह भी जानते होंगे कि नाटकों में नायक, उपनायक और कुछ विशेष अभिनेता होते हैं। वास्तव में अधिकांश नाटक मुख्य अभिनेताओं का ही होता है, बाकी

अनेक अभिनेता तो नाममात्र को रंगमंच पर आते हैं। रसायन-नाटक में भी यही बात है। निम्नलिखित अभिनेता रसायन के नाटक में मुख्य हैं और नाटक का जितने प्रतिशन वे कार्य करते हैं, वह निम्न-लिखित है :—*

१. आक्सीजन	४६.४६ प्रतिशत
२. सिलिकॉन	२७.६१ „
३. अलूमिनियम	८.०७ „
४. लौह	५.०६ „
५. कैल्सियम	३.६४ „
६. सोडियम	२.८३ „
७. पोटैशियम	२.५८ „
८. मैगनीसियम	२.०७ „
९. टाइटेनियम	०.६२ „
१०. हाइड्रोजन	०.१४ „
११. फ़्लोरोस	०.१२ „
१२. कार्बन	०.००९ „
१३. मैगनीज	०.००९ „
१४. गंधक	०.००६ „

आक्सीजन नायक है और सिलिकॉन नायिका। आक्सीजन से कदाचित् आप परिचित हों और जानते हों कि श्वास में हम वायु द्वारा आक्सीजन ले करके कार्बन-डाई आक्साइड निकालते हैं; किन्तु

* “Metals in the Service of Man” नामक पुस्तक के १७वें पृष्ठ से।

सिलिकॉन से आपका परिचय नहीं है। सिलिकॉन और आक्सीजन के जोड़े से आप परिचित हैं—बालू के रूप में; रसायनज्ञ इसको सिलिकॉन-डाई-आक्साइड कहते हैं। बर्तनों के रूप में आप अलूमि-नियम से परिचित हैं, किन्तु आप शायद ही विश्वास कर सकें कि यह चमकती, सफ़ेद, हलका धातु चिकनी मिट्टी से निकाली जाती है। यही तो इस नाटक की खूबी है! अभिनेता का पहिचानना कठिन कार्य है। लौह से तो आप परिचित हैं ही; साधारण रीति से यह लाल रंग की अवस्था में जंग के रूप में प्राप्त होता है। कैल्सियम चूने का महत्वपूर्ण भाग है; सोडियम नमक का। पोटैसियम और मैगनीसियम से आप लाल दवा (पोटैसियम पर मैगनेट) के रूप में शायद परिचित हों। मैगनीसियम को आपने आतिशबाजी में छूटते तो अवश्य देखा होगा, किन्तु आप उससे ठीक से परिचित नहीं हैं। टाइटेनियम एक अमूल्य धातु है जो लोहे से हल्की होती है, उसी के समान मजबूत होती है और उसमें जंग नहीं लगता। इसका अभी हाल में ही आविष्कार हुआ है और ऐसी आशा है कि शीघ्र ही इसका लौह के स्थान में प्रयोग होगा। हाइड्रोजन से आप खूब परिचित हैं; उड़नेवाले गुब्बारों में इसका उपयोग होता है। इस गैस की हमारे नायक से काफ़ी मित्रता है। प्रायः दोनों साथ ही रहते हैं। देखा तो है इन्हें आपने, लेकिन शायद ही पहिचान सकें। रसायनज्ञ से सहायता लीजिये—वह बता देगा कि यह मित्रों का जोड़ा आपके प्राण का आधार जल है। फ़ास-फ़ोरस हड्डियों का मुख्य भाग है। कार्बन से भी आप खूब परिचित हैं—कोयले, हीरे, काजल और पेंसिल की नोक के रूप में। कितना आश्चर्य! ये सब एक ही अभिनेता के विभिन्न रूप हैं। आँखें आपको धोखा दे जायँ लेकिन रसायनज्ञ आपको इनकी वास्तविकता बता देगा। गंधक से

कदाचित् आप परिचित हों; यदि आपको खुजली की बीमारी हो चुकी है तो आपने इसको जलाकर इसकी धूनी अवश्य ली होगी।

यह है रसायन-शास्त्र के मुख्य अभिनेताओं का संक्षिप्त परिचय। ये ही जड़ जगत् का लगभग ६८ प्रतिशत नाटक खेलते हैं। कदाचित् अब आप इस अद्भुत नाटक को देखने के लिए और रसायन-सम्बन्धी ज्ञान को प्राप्त करने के लिए अधिक उत्सुक हो उठें होंगे।

२

पदार्थ-रचना

[मिश्रण ; यौगिक ; अणु और परमाणु ; क्या अणु और परमाणु दिखाई पड़ते हैं ?]

रसायन-नाटक को समझने के लिए सबसे पहले यह समझना चाहिए कि नाटक में भाग लेनेवाले अभिनेता, अर्थात् तत्त्व, अपने रूप कैसे बदलते हैं ? किस प्रकार अलूमिनियम इस प्रकार बदल जाता है कि उसकी चिकनी मिट्टी बन जाती है ? अथवा, किस प्रकार कार्बन तत्त्व विविध रूपों में परिवर्तित हो जाता है जिससे वह हमको कोयले, हीरे और ग्रेफाइट आदि रूपों में दिखाई पड़ता है ?

मिश्रण

अभिनेताओं को अपना रूप बदलने के लिए पाउडर इत्यादि की आवश्यकता पड़ती है; इसी प्रकार इन तत्त्वों को भी अपने से भिन्न पदार्थों, अर्थात् अन्य तत्त्वों, से संयोग करने की आवश्यकता होती है। संयोग दो प्रकार से सम्भव है। एक विधि तो यह हो सकती है कि वे अनिश्चित मात्रा में संयोग करें। अनिश्चित मात्रा के संयोग को रासायनज्ञ 'मिश्रण' की संज्ञा देते हैं। इसमें तत्त्व अथवा मिश्रण के अवयव अस्थायीरूप से आपस में इस प्रकार संयोग करते हैं जिससे उनको साधारण भौतिक

रीति से ही अलग किया जा सकता है। पानी में यदि आप शकर घोलें तो वह गायब हो जाती है और हमें पानी और शकर का घोल, जिसे हम शर्बत कहते हैं, प्राप्त होता है। जब तक शकर शर्बत के रूप में है उसे आप आँख से नहीं देख सकते, लेकिन अगर आप शर्बत में से पानी को वाष्प बनाकर उड़ा दे तो शकर शेष बच जायगी। इस प्रकार शर्बत में शकर को देखने के लिए आपको केवल पानी को उड़ाना पड़ता है अर्थात् मिश्रण के अवयवों को साधारण भौतिक रीति से अलग किया जा सकता है।

यौगिक

लेकिन आप चिकनी मिट्टी में से अलूमिनियम को निकालकर देखने के लिए इतनी सरल विधि से सफलता नहीं प्राप्त कर सकते। यदि आप को यह बता दिया जाय कि एक प्रकार की दी हुई चिकनी मिट्टी में अलूमिनियम है तो चाहे जितना भी आप उसे गरम करें, तोड़ें, पीटें, पानी से धोएँ लेकिन तब भी उसमें से आप अलूमिनियम नहीं निकाल सकेंगे। यह जान करके भी कि अलूमिनियम अभिनेता ने मिट्टी के नाटक में भाग लिया है, आप अभिनेता को स्टेज पर देख करके भी नहीं पहचान सकते। इसका क्या कारण है? अलूमिनियम ने अपने रूप का बदलने के लिए अन्य तत्त्वों से एक निश्चित अनुपात में संयोग किया है। इस संयोग को रासायनिक संयोग कहते हैं। इस प्रकार के संयोग को साधारण रीति से नहीं किन्तु केवल रासायनिक विधि से ही तोड़ा जा सकता है। जब एक तत्त्व रासायनिक विधि से दूसरे तत्त्वों के साथ निश्चित अनुपात में इस प्रकार संयोग करता है जिसे केवल रासायनिक

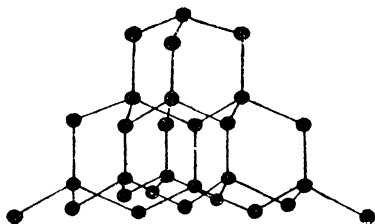
विधि से ही तोड़ा जा सके, तो तत्त्वों के इस प्रकार के संयुक्त समूह को यौगिक कहते हैं; अर्थात् जब तत्त्व मिश्रणरूप में न होकर यौगिकरूप में होते हैं तो उनको केवल रसायनज्ञ ही पहिचान सकता है क्योंकि उसमें तत्त्वों का रासायनिक संयोग है। मिश्रण और यौगिक में यही विशेष अन्तर है।

अणु और परमाणु

ऊपर बताया जा चुका है कि कोयले, हीरे, ग्रेफ़ाइट आदि वस्तुएँ कार्बन तत्त्व के विविध रूप हैं। अलूमिनियम ने विभिन्न तत्त्वों से संयोग करके, यौगिक बना करके, अपना रूप बदला है लेकिन कार्बन ने किसी तत्त्व से संयोग किये बिना और यौगिक बनाये बिना अपने रूप को बदल दिया है। यह कैसे सम्भव है?

वास्तव में प्रत्येक तत्त्व बहुत छोटे-छोटे कणों से मिलकर बनता है। इन अत्यंत सूक्ष्म कणों को तत्त्व की सज्ञा दी जाती है। प्रत्येक तत्त्व के परमाणु विभिन्न प्रकार के होते हैं किन्तु एक प्रकार के तत्त्व के सब परमाणु समान गुणवाले होते हैं। ये परमाणु सम्पूर्ण रासायनिक क्रियाओं की इकाई हैं, अर्थात् जितनी भी रासायनिक प्रतिक्रियाएँ होती हैं वे परमाणु-अवस्था में होती हैं; रासायनिक दृष्टिकोण से परमाणु अटूट हैं, अविभाज्य हैं। इन्हीं परमाणुओं के निश्चित मात्रा में अन्य परमाणुओं से संयोग करने पर परमाणुओं के दृढ़तम संयोग, अर्थात् यौगिक, की उत्पत्ति होती है। कार्बन तत्त्व के भी परमाणु होते हैं लेकिन, जैसा बताया जा चुका है, कार्बन परमाणु हीरे, कोयले, ग्रेफ़ाइट आदि में परिवर्तित होने के लिए अन्य तत्त्वों से संयोग नहीं करते। इस

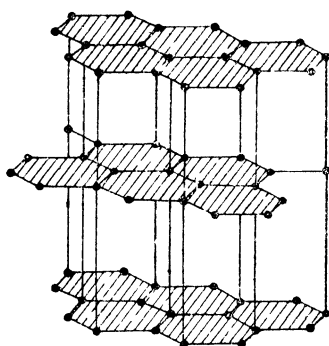
कार्बन के परमाणु एक ओर चाल चलते हैं। वे अपनी व्यवस्था भिन्न प्रकार की बना लेते हैं। नीचे के चित्रों में स्पष्ट है कि हीरे में ग्रैफाइट की अपेक्षा कार्बन के परमाणु अधिक पास-पास हैं, सटे हुए हैं और उनकी व्यवस्था अधिक गठी हुई है। इन्हीं परमाणुओं की भिन्न-भिन्न व्यवस्था, सजने के विभिन्न तरीकों, से हीरे और ग्रैफाइट के भौतिक गुणों में महान् अन्तर पड़ जाता है।



चित्र १. हीरे में कार्बन-परमाणुओं की व्यवस्था

यौगिकों में, जहाँ एक तत्व के परमाणुओं को दूसरे परमाणुओं से निश्चित अनुपात में दृढ़तम संयोग करने का अवसर प्राप्त होता है, विभिन्न परमाणुओं के छोटे-से-छोटे संयोग को अणु कहते हैं, अर्थात् पदार्थ के उस छोटे-से-छोटे भाग को, जिसमें उस यौगिक के भौतिक एवं रासायनिक गुण वर्तमान रहते हैं, अणु की संज्ञा दी जाती है। यदि अणु को और तोड़ा जाय तो हमें परमाणु प्राप्त होंगे और इन परमाणुओं की जानकारी से पूरे यौगिक का विवरण प्राप्त होता है। यदि हम चिबनी मिट्टी के छोटे टुकड़े को बराबर तोड़ते चले जाय तो एक अवस्था ऐसी आयेगी जहाँ आगे तोड़ना (भौतिक क्रिया) सम्भव न होगा। इस

अवस्था पर चिकनी मिट्टी के सब गुण वर्तमान रहेंगे और इस छोटे-से कण को रसायन की भाषा में अणु कहा जायगा। यदि रासायनिक विधि से हम इस अणु के टुकड़े करें तो हमें परमाणु प्राप्त होंगे। चिकनी मिट्टी के अणु को तोड़ने पर अलूमिनियम, सिलिकॉन, आक्सीजन और हाइड्रोजन



चित्र २. ग्रेफाइट (पेंसिल की नोक) में कार्बन-परमाणुओं की व्यवस्था

के परमाणु प्राप्त होंगे, लेकिन ये परमाणु कभी स्वतंत्र अवस्था में नहीं रह सकते। यदि अणु को इस प्रकार तोड़ा जाय जिससे विभिन्न तत्वों के परमाणुओं का संयोग सम्भव न हो, अर्थात् सिलिकॉन के परमाणु आक्सीजन के परमाणु से न मिल सकें और न अलूमिनियम के, तो एक ही प्रकार के परमाणु आपस में मिलकर एक शुद्ध तत्व के अणु की सृष्टि करेंगे। तो यदि चिकनी मिट्टी के अणु को परमाणु-अवस्था पर तोड़ा जा सके और एक प्रकार के परमाणुओं को विभिन्न प्रकार के परमाणुओं

से मिलने से रोका जा सके, तो चिकनी मिट्टी में अलूमिनियम को पहिचाना जा सकता है। अतः रसायन-नाटक में भाग लेनेवाले अभिनेताओं को पहिचानने के लिए हमें निम्नलिखित विधि से चलना होता है।

१. अणु का अध्ययन — किसी यौगिक के शुद्धतम रूप में सब अणु एक ही प्रकार के होंगे। यौगिक को भौतिक अथवा रासायनिक विधि से शुद्धतम रूप में बना करके उसके अणु का अध्ययन किया जाता है।

२. अणु को रासायनिक विधि से तोड़कर परमाणुओं का अध्ययन किया जाता है और विभिन्न प्रकार के परमाणुओं द्वारा यौगिक के अणु में उपस्थित विभिन्न तत्वों की जानकारी होती है।

३. परमाणुओं की विभिन्न व्यवस्थाओं से भिन्न-भिन्न अणुओं का ज्ञान प्राप्त होता है।

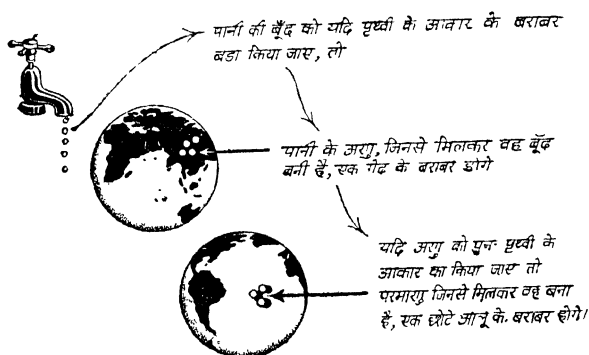
रसायनज्ञ इस विधि को 'रासायनिक विधि' की संज्ञा देते हैं।

क्या अणु और परमाणु दिखाई पड़ते हैं?

आपने परमाणु-बम का नाम सुना होगा। यह भी शायद आपको मालूम हो कि जब जापान के दो शहरों—हिरोशिमा और नागासाकी—पर परमाणु-बम गिराये गये तो कुछ घंटों में ही वहाँ का सारा जीवन नष्ट हो गया। भीषण गर्मी से बालू तक पिघल गई, प्रचण्ड तूफानों से भूकम्प-सा ज्ञात हुआ और मीलों दूर तक सारे जीव भुनस गये। क्या आप यह विश्वास करेंगे कि इतनी शक्ति इतने छोटे परमाणुओं में विद्यमान है जिनको अब तक न देखा जा सका है और न देखा जा सकेगा। परमाणु प्रकाश-किरण से भी छोटा है और जब प्रकाश-किरण

एक परमाणु से टकरा नहीं सकती तो अकेले परमाणु का देखा जाना भी असम्भव है। स्थूल रीति से उनके आकार का अनुमान इस प्रकार लगाया जा सकता है।

१. यदि पानी की एक बूंद को इतना बड़ा किया जाय कि वह हमारी पृथ्वी के आकार की हो जाय तो अणु, जिनसे मिलकर वह बूंद बनी है, गेंद के बराबर होंगे। और यदि एक अणु को पुनः इतना बड़ा किया जाय कि वह पृथ्वी के आकार का हो जाय तो हाइड्रोजन और आक्सीजन के परमाणु, जिनसे मिलकर वह पानी का अणु बना है, एक बड़े आलू के बराबर होंगे। इतने सूक्ष्म हैं ये अणु और परमाणु !



चित्र ३. अणुओं और परमाणुओं के सापेक्ष आकार

२. एक इंच की महीन रेखा में लगभग ५ करोड़ अणु होते हैं।

३. जब साँस ली जाती है तो लगभग ३००००,००,००,००,००, ००,००,००,००० (3×10^{21}) अणुओं को फेफड़े के अंदर भेजा

जाता है। ये विभिन्न प्रकार के अणु इतने पाम-पास मटे होते हैं कि वे भीड़ में चलते हुए मनुष्यों की भाँति एक-दूसरे से एक सेकेड में ५ अरब बार टकराते हैं। ये अणु इतना तेज भागने का प्रयत्न करते हैं कि यदि एक अणु को बाहर अकेले में रख दिया जाय तो वह एक सेकेड में दो फ़र्लांग चलेगा। जब आप लगभग ३ सेकेड बाद श्वास बाहर निकालते हैं तो १२००,००,००,००,००,००,००,०० ००० आक्सीजन के अणु अंदर जाकर कार्बन-डाई-आक्साइड में बदल चुके होते हैं। कल्पनातीत है ये संख्याएँ। अणु को मानसिक रूप से चित्रित नहीं किया जा सकता; परमाणु का तो कटना ही क्या! और कितनी शीघ्र और कितनी सरलता से होते हैं इन अणुओं के कार्य! पदार्थ के प्रत्येक कण में कितना अदम्य उत्साह है!

८ जब एक गिलास पानी पिया जाता है तो लगभग १८६५ ००००,००,००,००,०० ००,००,००,००० अणुओं को शरीर के अंदर प्रवेश कराया जाता है। कितने नौकरों को आप एक साथ अपने शरीर की सेवा के लिए अंदर भेजते हैं!

परमाणुओं के स्थूल आकार का परिचय देने के लिए कुछ संख्याएँ दी गई हैं। किन्तु इनमें केवल आश्चर्य हो सकता है, अणुओं और परमाणुओं के आकार का ठीक अंदाज़ नहीं लग सकता, क्योंकि वे इतने सूक्ष्म हैं कि सहज ही उनको कल्पना के परे समझा जा सकता है। और यदि इतने छोटे हैं ये अणु और परमाणु, जिनसे मिलकर पदार्थ बना है, तो रसायनज्ञ इनका अध्ययन किस प्रकार करते हैं!

रसायन की विधि

[शुद्धीकरण; विश्लेषण; अवयव-परीक्षा;
मात्रा-निर्धारण; संश्लेषण]

पिछले अध्याय से यह स्पष्ट हो गया होगा कि रसायन-नाटक में भाग लेनेवाले अभिनेताओं, अर्थात् तत्त्वों, का अणुओं और परमाणुओं द्वारा अध्ययन सम्भव नहीं। इनका आकार कल्पनातीत है; इनकी गिनती करना असम्भव है। तो फिर यौगिकों और मिश्रणों का अध्ययन कैसे किया जाय ?

पहले अध्याय में बताया गया कि प्रकृति में ६२ तत्त्व हैं और सम्पूर्ण जड़ जगत् की रचना इन्हीं ६२ तत्त्वों से हुई है। यह सहज ही कल्पना की जा सकती है कि विभिन्न तत्त्वों के संयोग से और एक ही प्रकार के तत्त्वों से मिलकर बने यौगिकों में विभिन्न संख्या में परमाणुओं के होने से इन ६२ तत्त्वों से असंख्य पदार्थ बन सकते हैं। इन यौगिकों के रखने के लिए प्रकृति में कोई नियत स्थान तो है नहीं; फलतः प्राकृतिक अवस्था में तत्त्व और यौगिक स्वतंत्र अवस्था में नहीं, किन्तु मिश्रित या संयुक्त अवस्था में प्राप्त होते हैं। इसलिए प्रकृति से शुद्ध पदार्थों, यौगिकों और तत्त्वों की प्राप्ति रसायनज्ञ का पहला महत्वपूर्ण कार्य है।

शुद्धीकरण

साधारण रीति से यौगिकों और तत्त्वों को अलग करने के लिए दो प्रकार की विधियाँ प्रयुक्त होती हैं:—

१. घुलनशीलता के आधार पर यौगिकों को अलग करना—कुछ वस्तुएँ पानी में घुलती हैं और कुछ नहीं। शर्करा और बुरादे के मिश्रण को यदि अलग करना हो तो मिश्रण को पानी में घोलकर शर्करा को शर्बत के रूप में प्राप्त किया जा सकता है। बुरादे का शर्बत से छानकर सुखाया जा सकता है। पानी के स्थान पर रसायनज्ञ अनेक घोलकों का प्रयोग करते हैं और इन घोलकों की सहायता से अनेक पदार्थों को शुद्ध एवं अलग किया जाता है।

२. अवस्था के परिवर्तन से पदार्थों को अलग करना—पदार्थ की तीन अवस्थाएँ होती हैं—ठोस, द्रव और गैस। पानी के भिन्न-भिन्न अवस्था में होने से हमें उसके तीन रूप दिखाई देने हैं—बर्फ, पानी और भाप। बर्फ ठोस, पानी द्रव और भाप गैस है। इन अवस्थाओं के परिवर्तन से पदार्थों को शुद्ध करने में बड़ी सहायता मिलती है। यदि शर्बत में से शर्करा को निकालना है तो पानी को भाप बनाकर उड़ाया जा सकता है और यदि शर्बत के पानी को प्राप्त करना है तो भाप को ठंडाकर उसे प्राप्त किया जा सकता है। शर्बत को यदि ठंडी अलमारियों (रेफ्रिजरेटर्स—Refrigerators) में रखकर जमाया जाय तो शर्करा अलग नहीं होगी क्योंकि दोनों ठोस अवस्था में हैं। इसलिए अवस्था का परिवर्तन इस प्रकार किया जाता है जिसमें घोल में घुली हुई चीज आसानी से प्राप्त हो सके।

कभी-कभी दोनों विधियों को मिला करके पदार्थों को अलग

करना होता है। यदि शर्बत में नमक मिला दिया जाय तो पानी को उड़ाने पर शर्करा और नमक दोनों बाकी बच जायेंगे। तब दोनों के मिश्रण को ऐसे घोलक में घोला जा सकता है जिसमें शर्करा घुल जाय और नमक न घुले या नमक घुल जाय और शर्करा न घुल।

उपर्युक्त विधियों का विभिन्न प्रकार के रासायनिक पदार्थों के साथ उपयोग करने पर प्रकृति में प्राप्त यौगिकों और तत्वों को उनकी शुद्ध अवस्था में प्राप्त किया जा सकता है।

विश्लेषण

पदार्थ को शुद्ध करने के पश्चात् उसका विश्लेषण करना होता है। विश्लेषण भी दो प्रकार का होता है—(१) अवयवों की परीक्षा और (२) उनकी मात्रा का निर्धारण।

अवयव-परीक्षा (Qualitative Analysis)

जब यौगिकों और तत्वों को उनके शुद्धतम रूप में प्राप्त कर लिया जाता है तो यह निश्चित हो जाता है कि यौगिक अथवा तत्व में एक ही प्रकार के अणु हैं और इन अणुओं में एक ही प्रकार से व्यवस्थित एक ही तत्व अथवा विभिन्न तत्वों के परमाणु हैं। अणुओं और परमाणुओं का उनकी स्वतंत्र अवस्था में अध्ययन, अवयव-परीक्षा के अंतर्गत है।

प्रत्येक तत्व अथवा यौगिक के कुछ विशिष्ट गुण होते हैं:—

१. पिघलने अथवा उबलने का तापक्रम,

२. रंग,
३. गंध,
४. स्वाद,
५. घुलनशीलता आदि।

उपर्युक्त भौतिक गुणों द्वारा रसायनज्ञ पदार्थ को पहिचानने का प्रयत्न करते हैं। शुद्ध पानी 100°C पर उबलता है और 0°C पर जमता है। यदि किसी दिये हुए रंगहीन द्रव के बारे में यह जानना है कि वह पानी है या नहीं तो उसको जमा या उबाल करके क्रमशः उमका जमनेवाला अथवा उबलनेवाला तापक्रम देखा जाता है। यदि परीक्षा द्वारा जाने हुए तापक्रमों से साधारण रीति से ज्ञान तापक्रमों में साम्य है तो कहा जा सकता है कि दिया हुआ द्रव पानी है। इन तापक्रमों के निकालने के लिए विशेष सावधानी करना पड़ती है। सम्भव है कि पदार्थ को गरम करने से दूसरा पदार्थ बन जाय। कुछ शुद्ध यौगिकों का विशेष रंग होता है। जंग को उमकी लाली से पहिचाना जा सकता है। अमोनिया को उसकी तीव्र, बुरी लगनेवाली गंध से पहिचाना जा सकता है। ग्लूकोज (अंगूर की शकर) को उसके स्वाद से पहिचाना जा सकता है। किन्तु अनेक रासायनिक पदार्थ बड़े विपले होते हैं। पोटेसियम सायेनाइड का एक छोटा-सा रवा कुछ सेकेंडों में ही जीवन का अंत कर सकता है। इसलिए रसायनज्ञ स्वाद से साधारण पदार्थों की परीक्षा नहीं करते।

यदि यह जानना हो कि दिया हुआ रेशम कृत्रिम है या नहीं तो उसे केवल एक विशिष्ट घोलक में रखने की आवश्यकता पड़ती है। यदि रेशम इस विशेष घोलक में घुल जाता है तो वह कृत्रिम होता है, अन्यथा वह प्राकृतिक है।

भौतिक गुणों के साथ-साथ प्रत्येक यौगिक को उनके रासायनिक गुणों, अर्थात् विशेष रासायनिक पदार्थों से संयोग करने की क्षमता, से भी पहिचाना जा सकता है। शुद्ध घी को वानस्पतिक घी से एक सरल रासायनिक क्रिया से पहिचाना जा सकता है। शुद्ध घी की लगभग १०० बूंदों में १०० बूंद हाइड्रोजेनक्लोरिक एसिड और १० बूंद फ़रफ़्यू-राल घोल मिलाकर परखनला में जोर से हिलाने पर कोई रंग नहीं प्राप्त होता। यदि यही प्रतिक्रिया वानस्पतिक घी के साथ की जाती है तो लाल रंग उत्पन्न होता है। इसी प्रकार की अन्य रासायनिक क्रियाओं द्वारा पदार्थों की परीक्षा की जाती है।

कुछ तत्व जब अग्नि की लौ में रखे जाते हैं तो विशेष प्रकार का रंग प्राप्त होता है। ताँबे को लौ के साथ गरम करने पर नीले रंग की लौ प्राप्त होती है। इसी प्रकार स्ट्रॉन्सियम और लीथियम से लौ विलकुल लाल रंग को हो जाती है। मैगनीसियम के फ़ीते को जलाने पर बहुत तेज प्रकाश प्राप्त होता है। इस प्रकार लौ की सहायता से भी रसायनज्ञ पदार्थों की परीक्षा करते हैं।

पदार्थ को लौ में रखने पर जो लौ प्राप्त होती है, यदि उनका वर्णपट (Spectrum) लिया जाय तो वर्णपट में कुछ काली रेखाएँ प्राप्त होती हैं। उनको गिनने या उनकी दूरी आदि को नापने से पदार्थों के तत्वों की जानकारी हो सकती है। इस विधि द्वारा पदार्थों का बहुत थोड़ी मात्रा में विश्लेषण किया जा सकता है। विशेष सूर्यग्रहणों के अवसर पर सूर्य के कुछ भागों का जब वर्णपट लिया गया तो उनमें कुछ विशेष प्रकार की रेखाएँ प्राप्त हुईं। इन रेखाओं को बाद में हीलियम तत्व की उपस्थिति का कारण बताया गया। इस विधि से हीलियम तत्व का आविष्कार ऐसे समय में हुआ जब उसे पृथ्वी पर किसी

ने छुआ तक न था। वर्णपट-विधि (Spectroscopic method) से अन्य ग्रहों में उपस्थित पदार्थों का भी ज्ञान हो सकता है।

आपने एक्स-किरणों का नाम सुना होगा। जब हड्डी टूट जाती है तो एक्स किरणों द्वारा टूटी हड्डी का फोटो लिया जाता है और फोटो से हड्डी टूटने के ठीक स्थान आदि का पता लगता है। एक्स-किरणें शरीर में प्रवेश कर सकती हैं। इसी प्रकार एक्स-किरणें पदार्थ में प्रवेश करके विशिष्ट अवस्थाओं में पदार्थों के चित्र बनाती हैं जिनको रसायनज्ञ विशेष ज्ञान से समझ सकता है। इन चित्रों की तुलना से पदार्थों के अवयवों और तत्वों का आसानी से पता लगता है।

मात्रा-निर्धारण

अवयवों अर्थात् पदार्थ में उपस्थित तत्वों और यौगिकों के पहिचानने के पश्चात् उनकी मात्रा का निर्धारण भी महत्वपूर्ण है। कुछ पदार्थों में बहुत थोड़ा ही अन्तर है, किन्तु थोड़े अन्तर से ही उनके गुणों में महान् अन्तर पड़ जाता है। अणुओं में केवल एक परमाणु के अन्तर से ही काफी गुण बदल सकते हैं। मरक्यूरस क्लोराइड का अपेक्षा मरक्यूरिक क्लोराइड में क्लोरीन का एक परमाणु अधिक है, किन्तु एक का ओषधियों में प्रयोग किया जाता है और एक तीव्र विष है। अतः अवयवों को पहिचानने के पश्चात् इनकी ठीक मात्रा को जानना भी अत्यन्त आवश्यक है।

मात्रा को जानने के लिए रसायनज्ञों को विशेष यंत्रों की आवश्यकता पड़ती है। रसायनज्ञ की प्रयोगशालाओं में ऐसे शीशे के बने यंत्रों का प्रयोग किया जाता है जिनका तापक्रम एकाएक घटाने या

बढ़ाने पर वे टूटते नहीं। पोर्सीलेन और बालुका यंत्रों का ऊँचे तापक्रमों पर रासायनिक क्रियाओं की परीक्षा करने के लिए उपयोग होता है। प्लैटिनम ऐसी धातु है जिस पर रासायनिक पदार्थों का विशेष प्रभाव नहीं होता; इसलिए इनके बने अनेक बर्तनों का रसायनज्ञ प्रयोग करते हैं।

मात्रा को जानने के लिए ठीक-ठीक भार और आयतन को जानना आवश्यक होता है, इसलिए रसायनज्ञों ने ऐसी तुलाओं का आविष्कार किया है जो एक बाल तक के भार को बता सकती है। ठीक आयतन जानने के लिए प्रत्येक बूँद का हिसाब रखा जाता है और आवश्यकता पड़ने पर बूँद के १००वें भाग तक से बिलकुल ठीक नाप-जोख से काम लिया जा सकता है। कितनी कार्य-कुशलता, कितनी तीव्र परीक्षण शक्ति और कितने सधे हुए हाथों की आवश्यकता पड़ती है रसायनज्ञ को !

संश्लेषण

पदार्थ में उपस्थित यौगिकों अथवा तत्त्वों और उनकी ठीक-ठीक मात्रा को निर्धारित करने के पश्चात् पदार्थ का पूरा ज्ञान हो जाता है। किन्तु यह कैसे जाना जाय कि रसायनज्ञ की विधि और उसके निष्कर्ष ठीक है ?

इसके लिए संश्लेषण की, अर्थात् तत्त्वों की निश्चित मात्रा से चलकर यौगिक बनाने की, आवश्यकता होती है। रसायनज्ञ ने अवयव-परीक्षा से ज्ञात किया कि पानी हाइड्रोजन और आक्सीजन नामक तत्त्वों से मिलकर बना है। मात्रा-निर्धारण से मालूम हुआ कि आयतन

के अनुसार आक्सीजन के आठ भाग हाइड्रोजन के १ भाग से संयोग करके पानी बनाते हैं। इन निष्कर्षों की सच्चाई को सिद्ध करने के लिए यह दिखाया जा सकता है:—

हाइड्रोजन गैस के आक्सीजन में जलने पर पानी बनता है। यदि हाइड्रोजन और आक्सीजन के ज्ञात मिश्रण से बिजली प्रवाहित की जाय तो पानी बनने के लिए संयोग इस प्रकार होता है जिससे स्पष्ट होता है कि आक्सीजन के आयतन के ८ भाग हाइड्रोजन के आयतन के एक भाग से मिलते हैं।

इस प्रकार रसायनज्ञों के निष्कर्षों की सत्यता सिद्ध होती है— संश्लेषण से। विज्ञान के सभी निष्कर्षों की सत्यता सिद्ध होती है— अनुभव से। फलतः रासायनिक एवं वैज्ञानिक विधि से प्राप्त निष्कर्षों की सत्यता में कोई सदेह नहीं रहता। प्रत्यक्ष अनुभव ही वैज्ञानिकों की विचार-एकता का मूल आधार है।

उपयोग

४

भोजन—१

[भोजन क्या है ? ; कार्बोहाइड्रेट ; प्रोटीन ; चर्बी ;
भोजन से शक्ति ; खनिज पदार्थ ; विटामिन ;
संतुलित भोजन]

भोजन क्या है ?

यह बताया जा चुका है कि रसायन शब्द की व्युत्पत्ति रसोई शब्द से भी मानी जाती है। इसलिए अगर रसायनज्ञ यह कहे कि वह आपको भोजन के सम्बन्ध में उचित परामर्श दे सकता है तो आपको आश्चर्य न होना चाहिए।

सबसे पहला प्रश्न उठता है कि भोजन क्या है ? मनुष्य की हर समय खर्च होनेवाली शक्ति को पूरा करने के लिए, कम अवस्थावालों की वृद्धि के लिए और भोजन न मिलने पर भी काम चलाने के लिए, कुछ पदार्थों को भूख के समय खाने की आवश्यकता पड़ती है। पदार्थों का सेवन जड़ अवस्था में ही किया जाता है और जड़ जगत् ही रसायन का क्षेत्र है। इसलिए सब प्रकार के भोजनों का अध्ययन रसायन के क्षेत्र में आ जाता है।

मनुष्य के रासायनिक विश्लेषण से उसमें निम्नलिखित तत्त्व पाये गये हैं :—

आक्सीजन	—६५ %
कार्बन	—१८ %
हाइड्रोजन	—१० %
नाइट्रोजन	— ३.०%
कैल्शियम	— २.२%
फासफोरस	— १.२%
अन्य तत्त्व (मूधम मात्रा में)	— ०.६%

भोजन का उद्देश्य शरीर में इन तत्त्वों की पूर्ति है।

खाद्य पदार्थों के रासायनिक विश्लेषण से उनके ६ अवयव ज्ञात हुए हैं। इन्हीं अवयवों के विभिन्न मात्राओं में मिलने से सब प्रकार के भोजन प्राप्त होते हैं।

१. जल—मनुष्य में लगभग ६६ प्रतिशत जल है। इस मात्रा को शरीर में स्थिर रखने के लिए जल पिया जाता है। सब प्रकार के खाद्य पदार्थों में काफी मात्रा में जल रहता है।

२. कार्बोहाइड्रेट,

३. प्रोटीन,

४. चर्बी,

५. विटामिन और

६. खनिज पदार्थ।

जब मनुष्य को जल की आवश्यकता होती है तो प्यास लगती है और इसलिए शरीर में इसकी मात्रा की पूर्ति तो निश्चित रूप से ठीक मात्रा में हो जाती है। लेकिन प्रोटीन, चर्बी आदि की पूर्ति के लिए किसी प्रकार की प्यास नहीं लगती, किन्तु इनकी भी शरीर को काफी आवश्यकता है। फलतः इन पदार्थों की कमी रह जाने से शरीर में विकार

उत्पन्न हो जाते हैं। इन विकारों को रोकने के लिए हमको जानना चाहिए कि (१) उपर्युक्त अवयव विभिन्न पदार्थों में कितनी मात्रा में रहते हैं और (२) हमको उनको कितनी मात्रा में आवश्यकता है। इसलिए रसायनज्ञ को सब प्रकार के भोजनों का विश्लेषण करना पड़ता है और यह बताना पड़ता है कि प्रत्येक प्रकार के भोजन का शरीर के लिए कितना महत्व है।

कार्बोहाइड्रेट

यह भोजन के उन पदार्थों का वर्ग है जिनमें माड़ी (स्टार्च), शर्करा ग्लूकोज आदि पदार्थ होते हैं। वानस्पतिक पदार्थों में कार्बोहाइड्रेट काफी मात्रा में पाये जाते हैं; सब हरे सागा में भी ये निश्चितरूप से होते हैं। हरे पदार्थों का रंग पौधों में उपस्थित 'क्लोरोफिल' नामक पदार्थ के कारण होता है। इस पदार्थ में—वायु द्वारा प्राप्त कार्बन-डाई-आक्साइड और जड़ों से प्राप्त जल से सूर्य के प्रकाश में—कार्बोहाइड्रेट बनाने की शक्ति होती है।

कार्बन डाई-आक्साइड + जल $\xrightarrow[\text{म}]{\text{सूर्य-प्रकाश}}$ कार्बोहाइड्रेट

इस विधि को प्रकाश-संश्लेषण (Photosynthesis) कहते हैं। पशुओं और मनुष्यों में क्लोरोफिल नहीं होती और न कार्बोहाइड्रेट बनाने की यह क्षमता। फलतः हमें पौधों द्वारा बनाये कार्बोहाइड्रेट पर ही निर्भर रहना पड़ता है।

गहूँ, चावल, आलू, शकरकंदी और केला तथा सब प्रकार की शर्कराओं से कार्बोहाइड्रेट अधिक मात्रा में प्राप्त किया जा सकता है।

कार्बोहाइड्रेट से काफी शक्ति मिलती है और इनका खाद्य पदार्थों में बाहुल्य वांछनीय है, किन्तु भारतीय भोजन में कभी-कभी केवल कार्बोहाइड्रेट ही रहता है। रोटी और आलू की तरकारी खानेवालों को भोजन के अन्य लाभदायक पदार्थ नहीं मिल पाते। उनको अपने भोजन में अन्य पदार्थों को भी स्थान देना चाहिए।

प्रोटीन

कार्बोहाइड्रेट के पश्चात् भोजन में सबसे अधिक महत्वपूर्ण पदार्थ प्रोटीन होते हैं। वास्तव में ये एमिनो एसिड नामक पदार्थों से मिलकर बनते हैं। अब तक रसायनज्ञों ने २२ एमिनो एसिडों (Amino acids) का पता लगाया है। उनका कहना है कि इन्हीं २२ एसिडों में अनेक प्रकार की प्रोटीन बनती हैं। वस्तुतः प्रत्येक मनुष्य में विभिन्न प्रकार की प्रोटीन होती है। भोजन से प्राप्त प्रोटीन आमाशय में पहुँचकर इन्हीं एमिनो एसिडों में टूट जाती है और उनके पुनर्संमिलन से शरीर के लिए लाभदायक प्रोटीन बनती है।

प्रकाश-संश्लेषण से पौधे जो कार्बोहाइड्रेट प्राप्त करते हैं उसमें केवल कार्बन, हाइड्रोजन और आक्सीजन होता है। जब इसमें नाइट्रोजन मिल जाती है तो प्रोटीन बनता है। सब प्रकार की दालों और मांसों में ये प्रचुरता से पाये जाते हैं।

चर्बी

तेल, घी आदि चिकने पदार्थों को चर्बी की संज्ञा दी जाती है। इनमें

सबसे अधिक शक्ति रहती है। इनका भी उचित मात्रा में उपयोग करना आवश्यक है। चर्बीवाले पदार्थों के अधिक उपयोग से मृदापा बढ़ना है। अपनी चौड़ाई को नियंत्रित रखने के लिए रसायनज्ञ से आप की सहायता मिल सकती है।

भोजन से शक्ति

जिस प्रकार कोयला जलाने से अग्नि और इस प्रकार शक्ति प्राप्त होती है, उसी प्रकार कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन और चर्बी आदि के शरीर में पहुँचने पर, हजम होने पर, इनके काबन से शरीर को शक्ति प्राप्त होती है। मशीन भी शक्ति देने से ही चलती है, किन्तु मशीन और मानव-शरीर में अंतर है। मशीन में जब शक्ति दी जाती है तब वह चलती है, किन्तु मनुष्य में आन्तरिक एवं बाह्य कार्यों से शक्ति उत्पन्न होती है। इस शक्ति को उत्पन्न करने के लिए ही भोजन की आवश्यकता पड़ती है।

शक्ति को कैलॉरी नामक इकाई से नापा जाता है। एक छटाँक कार्बोहाइड्रेट से हमको लगभग २४० कैलॉरी, एक छटाँक प्रोटीन से लगभग २५० कैलॉरी और एक छटाँक चर्बी से ५५० कैलॉरी की शक्ति हमको मिलती है। इस प्रकार हम देखते हैं कि कार्बोहाइड्रेट और प्रोटीन की अपेक्षा हमको चर्बी से लगभग दुगुनी शक्ति प्राप्त होती है। इसलिए चर्बी का इन दोनों की अपेक्षा कम मात्रा में उपयोग करना चाहिए।

रसायनज्ञों ने मनुष्य की दैनिक “कैलॉरी” की आवश्यकता को भी विविध तरीकों से ज्ञात किया है। कैलॉरी की आवश्यकता हर मनुष्य

के लिए अलग अलग होती है। एक साधारणरूप से कार्य करनेवाले नवयुवक को २४०० कैलॉरी प्रतिदिन की आवश्यकता होती है। अन्य कार्य करनेवाले और विभिन्न अवस्थावाले मनुष्यों के लिए रसायनज्ञ के अनुसार एक दिन में कैलॉरी की आवश्यकता इस प्रकार है :—

अवस्था एवं कार्य	कैलॉरी
बालक (१-३ वर्ष)	८००
„ (३-५ वर्ष)	१२००
„ (५-७ वर्ष)	१४००
„ (७-९ वर्ष)	१७००
„ (९-१२ वर्ष)	२०००
किशोर बालक एवं युवक (१२-२१)	२४००
युवती	२३००
युवक (हलका शारीरिक कार्य करनेवाले)	२५००
युवक (थाड़ा शारीरिक कार्य करनेवाले)	२६००
युवक (कठिन शारीरिक कार्य करनेवाले)	२६००-३०००
युवक (बहुत कठिन शारीरिक कार्य करनेवाले)	३०००-३६००

ऊपर जो कैलॉरी की संख्याएँ दी गई हैं वे हमारे देश के लिए हैं। सदैव मुल्कों में रहनेवाले लोगों के लिए अधिक भोजन और कैलॉरी की आवश्यकता होती है। गरम देशों में रहनेवाले लोगों के लिए अपेक्षाकृत कम भोजन और कम कैलॉरी की आवश्यकता होती है।

इस प्रकार रसायनज्ञों ने बताया कि भोजन के ३ प्रधान अवयवों— कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन और चर्बी—से हमको कितनी-कितनी शक्ति प्राप्त हो सकती है और एक मनुष्य की कुल आवश्यकता एक दिन में

कितने कैलॉरी की है। रसायनज्ञों ने विश्लेषण करके यह भी बताया है कि मुख्य प्रकार के भोजनों के कोन-कोन से अवयव हैं और कितनी मात्रा में। इनको और प्रत्येक प्रकार के अवयव से प्राप्त शक्ति को जानकर हम हर प्रकार के भोजन से प्राप्त कैलॉरी की सख्या को जान सकते हैं। इस प्रकार रसायनज्ञों ने खाद्य पदार्थों के महत्त्व पर पूर्ण रूप से प्रकाश डाला है।

(खाद्य पदार्थों का रासायनिक विश्लेषण—देखिए, पृष्ठ ४०, ४१ और ४२)

खनिज पदार्थ

आगे दी हुई तालिका से स्पष्ट होता है कि खनिज पदार्थ खाद्य पदार्थों में अल्प मात्रा में पाये जाते हैं। लेकिन मानव-शरीर में भी सम्पूर्ण खनिज पदार्थ केवल ४ प्रतिशत मात्रा में पाये जाते हैं, अर्थात् अन्य तत्वों की अपेक्षा खनिज पदार्थ शरीर में बहुत कम हैं। किन्तु इससे यह न समझना चाहिए कि इनका महत्त्व कम है। यद्यपि ये खनिज पदार्थ कम मात्रा में शरीर में पाये जाते हैं, तथापि इनके बिना शरीर का काम चल नहीं सकता।

कैल्सियम हड्डी का मुख्य भाग है और इसकी कमी से दाँत और हड्डियाँ कमजोर हो जाती हैं। गर्भिणी स्त्रियों को तो कैल्सियम का काफी मात्रा में उपयोग करना चाहिए। दूध, छिलके सहित चने में कैल्सियम होता है। अधिक आवश्यकता पड़ने पर कैल्सियम लैक्टेट के रूप में इसको लिया जा सकता है। भारतीयों में तो पान के साथ चूना (कैल्सियम का लाभकारी योगिक) खाने की रीति है, इसलिए भारत में कैल्सियम साधारण रूप से उचित मात्रा में खाया जाता है। विदेशियों के भोजन में चूनायुक्त खाद्य पदार्थ कम होते हैं।

खाद्य पदार्थों का रासायनिक विश्लेषण

प्रतिशत मात्रा में

भोजन	जल	कार्बो-हाइड्रेट	प्रोटीन	चर्बी	खनिज	विटामिन	१ इंचों के प्रारूप में प्राप्त कैलोरी	विशेष ज्ञातव्य बातें
गेहूँ (आटा)	१०२	७२.२	१०१	१७	१८	०	८००	...
गेहूँ (मैदा)	१३.३	७४.१	११०	०.६	०.७	X	१६५	मैदा में लाभदायक खनिज पदार्थ नहीं रहते।
जौ	१०५	६६.०	११.५	१.३	१.५	५	१६३	४०% छिलका होता है।
चावल (घर का)	१३	७६.०	६.६	०.४	०.५	वा	२००	जौ में प्रोटीन चावल की अपेक्षा काफी अधिक होता है।
चना (छिलके सहित)	६८	६१.१	१७.१	५.३	०.७	बी और ग	२१०	६०% छिलका; कैल्शियम, फामफोरम और लौह की सूक्ष्म मात्राएं।

* भोजन में इनकी अत्यंत सूक्ष्म मात्राएं होती हैं, इसलिए खाद्य पदार्थ में जो विटामिन उपस्थित रहते हैं उन्हें को केवल लिख दिया गया है।

चना (छिलके- रहित)	११०	५०	२२५	५०	०३	×	०१६	वेमन में में कैल्शियम और विटामिन निकल जाते हैं।
दाल (अरहर)	१५०	५५०	००३	१०	३६	×	१८३	लौह की सूक्ष्म मात्रा।
मटर (काबुली)	८६	६३५	००६	१८	०३	×	००८	फास्फोरस की सूक्ष्म मात्रा।
मक्का	११५	८००	०६	०५	०४	×	००६	प्रोटीन कम है इसके साथ दाल अधिक खानी चाहिए।
दूध (गाय)	८७६	६८	३३	३६	०७	ए, बी सी और के	३८	कैल्शियम, फास्फोरस और लौह की सुपाच्य एव सूक्ष्म मात्राएं।
दूध (भैंस)	८१०	५१	८३	८८	०८	ए और सी	६८	गायके दूध की अपेक्षा इसमें विटामिन कम होते हैं।
अडा	७१०	०८	१३५	१३७	१०	ए	१०५	कैरोटीन नामक उपयोगी पदार्थ होते हैं।
शकर	८१	७८४	०६	०१	०८	×	१८६	१०% पदार्थ इसके बनाने में निकल जाते हैं।
आलू मूली	७४७	००६	१७	०१	०६	ए, और बी सी	५७ १०	 कई न्याभदायक पदार्थ इसमें होते हैं।
मिषाडा	७००	०३०	४५	०३	११	निकोटिनिक एसिड	८८	शक्तिदायक पदार्थ होते हैं।

पालक	२६४	३८	०६	०१	१	मा	१०	खनिज पदार्थ काफ़ी मात्रा में।
टमाटर	६४५	३६	१०	०१	०५	ए, बी, सी और डी	१०	बहुत प्रकार के विटामिन।
नारियल	३६३	१३०	४१	४१	१०	ए, बी और सी	२५	३६% छिलका, गरी अच्छी चीज है।
सरसो	८५	२५६	२०	३६	४०	ए	३१४	लाभदायक खनिज पदार्थ काफी मात्रा में।
अमरुद	७६१	१४५	१५	०२	०८	ए	३८	६६ प्रतिशत छिलका, खनिज पदार्थ काफ़ी मात्रा में।
नींबू	८५०	१२८	१०	०६	०३	मी	३७	कई प्रकार के विटामिन होते हैं।
संतरा	८७८	१०३	०६	०३	०४	ए, सी, और डी	२६	काफ़ी विटामिन।
गाजर	८६०	११८	०६	०२	१०	ए, बी और सी	२७	अनेक लाभदायक खनिज पदार्थ।
नीम	५६४	२२६	७१	१०	३४	ए (काफ़ी मात्रा में)	६२	अनेक लाभदायक खनिज पदार्थ।

कैल्सियम के साथ-साथ फास्फोरस भी हड्डी और दाँतों के लिए आवश्यक होता है। शरीर का लगभग ९० प्रतिशत फास्फोरस हड्डियाँ और दाँतों में होता है। बाकी फास्फोरस खून में और शरीर के कार्या को ठीक से चलाने के लिए उपयुक्त होता है। फास्फोरस हमको दूध से प्राप्त होता है।

सोडियम, पोटैशियम और क्लोरीन नामक तत्त्वा को खून को बड़ी आवश्यकता होती है। इनसे खून का दौरान काफी ठीक रहता है। इनकी उचित मात्रा से शरीर के कोष तनी हुई अवस्था में रहते हैं। सोडियम और क्लोरीन का मुख्य यौगिक साधारण नमक है जिसका हम भोजन में काफी प्रयोग करते हैं। गर्मी के समय में काफी नमक पसीने के रूप में निकल जाता है, इसलिए हमें अधिक मात्रा में नमक की आवश्यकता होती है। पोटैशियम और मैग्नीशियम वानस्पतिक खाद्य पदार्थों में काफी मात्रा में रहते हैं इसलिए ये तत्त्व हमको आवश्यकता से अधिक मात्रा में मिलते रहते हैं।

अभी तक कदाचित् आप लोहे को धातुरूप में ही उपयोग करना जानते हों, किन्तु आपको सुनकर आश्चर्य होगा कि इसकी सूक्ष्म मात्राएँ शरीर के लिए बड़ी लाभप्रद होती हैं। इसकी कमी से खून बनना बंद हो जाता है और एनीमिया (खून की कमी) की बीमारी हो जाती है। खून की लाली हीमोग्लोबिन (Haemoglobin) नामक पदार्थ के कारण होती है। लोह का परमाणु इसके अणु का केंद्र होता है। हाल ही में पता चला है कि लोहे के साथ-साथ तांबे की सूक्ष्म मात्राएँ भी खून बनने के लिए आवश्यक हैं। लोहे और तांबे की कमी की संब, चना, टमाटर, खीरा, पालक, गाजर, चुकन्दर, मटर, मटरा आदि पदार्थों से पूरा करना चाहिए। यह ध्यान रहे कि शरीर के लिए लोह और

तांबा धातुरूप में नहीं किन्तु सुपाच्य यौगिकरूप में ही लाभप्रद होते हैं।

शरीर में आयोडीन की मात्रा लगभग ०.००००४ प्रतिशत होती है। अर्थात् मनुष्य के पूरे शरीर में करीब ८ ग्राम की आयोडीन होती है। किन्तु इसका बहुत अधिक महत्व है। थायरवायड (Thyroid) ग्रंथियों के रस में आयोडीन का मुख्य भाग है और मनुष्य की बुद्धि की तीव्रता आयोडीन की मात्रा पर निर्भर रहती है। इतना महत्व है इतनी छोटी मात्रा में आयोडीन का। शरीर के लिए आवश्यक आयोडीन को पीने के जल के रूप में अथवा माधारण नमक में मिला करके दिया जाता है।

हाल में पता लगाया गया है कि गंधक, जस्ता, मैंगनीज और काबाल्ट आदि तत्वों की भी मनुष्य को काफी आवश्यकता रहती है। शरीर की इन अत्यन्त सूक्ष्म आवश्यकताओं को जानना कितना कठिन है, किन्तु रसायनज्ञ तो सेवा के लिए तत्पर हैं ही।

विटामिन

यह देखा गया है कि यदि भोजन में प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, चर्बी और खनिज पदार्थों की मात्रा को संतुलित कर लिया जाय तब भी कुछ विशेष प्रकार के पदार्थों के भोजन में न होने से कभी-कभी बीमारियाँ हो जाती हैं। रसायनज्ञ इन विशेष पदार्थों को विटामिन की संज्ञा देते हैं। पंद्रहवीं-सोलहवीं शताब्दी में मल्लाहों को एक विशेष प्रकार की बीमारी हो जाती थी। कभी-कभी लम्बी यात्राओं में तीन-चौथाई तक आदमी मर जाते थे। वास्को-डि-गामा, कोलम्बस आदि प्रसिद्ध नाविकों को इसी प्रकार की कठिनाई का सामना करना पड़ा था। यह देखा गया

कि यदि मल्लाहों को सब बन्दरगाहों पर पहुँचकर ताजे फल दे दिये जायें तो वे इस भयंकर बीमारी से बच जाते थे। रसायनज्ञों ने फलों के विश्लेषण से ज्ञात किया कि उनमें उपस्थित विटामिन नामक पदार्थों के मिलने से मल्लाहों की बीमारी दूर हो जाती थी। अब रसायनज्ञों ने अनेक प्रकार के विटामिनों को ज्ञात किया है। उनमें से कुछ का नीचे विवरण दिया जाता है।

विटामिन ए—यह गोश्त, दूध और उनसे बने पदार्थों में, गाजर एवं अनेक फलों में प्रचुरता से पाया जाता है। इस विटामिन से और लगभग सभी विटामिनों से शरीर में रोग के प्रति विरोध करने की शक्ति प्राप्त होती है। इसकी कमी से आँखें कमजोर हो जाती हैं और चर्म-बीमारियाँ आ घेरती हैं। इसलिए फलों का काफी मात्रा में सेवन करना चाहिए; फिर भी यदि विटामिन की कमी पड़ जाय तो रसायनज्ञ से इनको माँग लीजियेगा, क्योंकि उसने बड़े परिश्रम से इनको प्रयोगशाला में तैयार किया है।

विटामिन बी—विटामिन 'बी,' गेहूँ, चावल के छिलकों, मटर और मुंगियों में होता है। इसके न होने से बेरी-बेरी नाम की बीमारी हो जाती है। फलन: चोकर को न फेंकना चाहिए और जी का काफी प्रयोग करना चाहिए। याद रखिये, भोजन के स्वाद को बढ़ाने के लिए जिन चीजों को प्रायः फेंक दिया जाता है, उन्हीं से बनी अधिक दाम की गोर्लियाँ बीमारी में रसायनज्ञ से खरीदना पड़ती हैं। रसायनज्ञ को आपकी जीभ के लिए कितना कार्य करना पड़ता है! विटामिन 'बी,' दूध, अंडे और अनाजों के छिलके में पाया जाता है। इसकी कमी से नेत्र और मुँह की बीमारियाँ हो जाती हैं।

विटामिन सी—यह पालक, बथुआ आदि हरे सागों में, नींबू, संतरे,

खरबूजे आदि फलों में और अखुएदार अनाजों में होता है। इसकी कमी से हड्डियाँ और दाँत कमजोर हो जाते हैं, जख्म जल्दी नहीं भरते और रक्त की नसें कमजोर हो जाती हैं।

विटामिन डी—यह भाजन से तो कठिनता से मिलता है किन्तु सूर्य-प्रकाश से शरीर में इसका बनाने की शक्ति आ जाती है। अंडे और मछली के लीवर में प्राप्त तेल के प्रयोग से भी इसकी पूर्ति हासिल की जा सकती है। हड्डियों का मजबूत रखने के लिए धूप खाना चाहिए, धूप में तेल को मालिश करना चाहिए, नहीं तो आवश्यकता पड़ने पर मछली से तैयार हुआ बदबूदार तेल पीना पड़ेगा।

विटामिन ई—यह अनेक भाज्य पदार्थों में पाया जाता है, विशेष करके हर पत्तवाले साग में, दूध, अंडे आदि में। मांसपेशियाँ और मस्तिष्क का ठीक रखने के लिए इसकी आवश्यकता कम होती है।

विटामिन के—यह दूध और उनसे बने पदार्थों, हरे सागों में होता है। इसकी कमी से खून-सम्बन्धी बीमारियाँ हो जाती हैं। प्रकाश में यह शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

संतुलित भोजन

बढ़िया सात्त्विक भोजन वह है जिसमें स्वास्थ्य ठीक रहे, मनुष्य प्रसन्न चित्त रहे और शरीर में अधिकाधिक काम लिया जा सके। अधिक दाम का भोजन बढ़िया नहीं होता। यदि आप रसायनज्ञ के बनाए हुए मिश्रान्तों का जाने और उनका व्यवहार में लाये स्वाद का लाभ की अपेक्षा कम महत्त्व दे तो रसायनज्ञ आपकी बड़ा सहायता कर सकता है। इसके लिए आपको नीचे लिखी बातों का ध्यान में रखना चाहिए :—

१. शरीर का प्रति दिन कितना कैलरी की आवश्यकता है ?

२. प्रोटीन, चर्बी और कार्बोहाइड्रेट की कितनी-कितनी मात्रा लेनी चाहिए और किन-किन पदार्थों से ?

३. खनिज पदार्थों और विटामिन की पूर्ति किन फलों और सागो से की जा सकती है ?

जैसा बताया जा चुका है, पानी की कमी प्यास लगने से पूरी हो ही जाती है किन्तु भोजन के अन्य अवयवों की कमी साधारणतः तब ही पूरी होती है जब बीमारी के रूप में हमें उनकी कमी मालूम पड़ती है। आप रसायन की सहायता से अपने स्वास्थ्य को ठीक रख सकते हैं। यदि भोजन संतुलित है तो स्वास्थ्य ठीक रहना ही चाहिए।

२४०० कैलरीवाले भोजन की आवश्यकतावाले युवक को निम्न-लिखित संतुलित भोजन करना चाहिए :—

चावल—दो छटाक

गेहूँ—दो छटाक

दाल—दो छटाक

तरकारीयाँ (आलू आदि)—तीन छटाक

हरे साग—चार छटाक

दूध—पाव भर

नेल, घी आदि—एक छटाक

शकर—एक छटाक

रसायन की सहायता से संतुलित भोजन करके स्वस्थ रहिए। रसायन के मिश्रान्तों को जानकर स्वास्थ्य-रक्षा की जा सकती है। किन्तु रसायन का क्षेत्र केवल यही तक सीमित नहीं है। रसायन ने भोजन-सम्बन्धी और भी अनेक कार्य किये हैं जिनका अगले अध्याय में वर्णन है।

भोजन—२

[भोजन पकाना, भोजन की रक्षा करना, जनता की स्वास्थ्य-रक्षा
भोजन के नए स्रोत]

पिछले अध्याय में यह बताने का प्रयत्न किया गया है कि भोजन क्या है और हमको किस प्रकार का और कितना भोजन करना चाहिए। इस अध्याय में भोजन को अधिक लाभदायक बनाने के लिए रसायनज्ञ ने और जा कुछ कार्य किये हैं उनका विवरण दिया जायगा।

भोजन पकाना

यह सुनकर आश्चर्य होता है कि गृहिणियाँ भी रसायन से बहुत कुछ सीख सकती हैं। अच्छे रसोइयों को अच्छा रसायनज्ञ भी कहा जा सकता है। अच्छा पका हुआ भोजन कौन-सा है? रसायनज्ञ के दृष्टिकोण से अच्छा पका हुआ भोजन वही है जिसको पकाने में भोजन के मुख्य अवयव—कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, चर्बी, खनिज पदार्थ और विटामिन—नष्ट न हुए हों। साधारण रीति से भोजन पकाने समय केवल स्वाद का ही ध्यान रखा जाता है और भोजन के मुख्य अवयव स्वाद बढ़ाने के लिए नष्ट कर दिये जाते हैं। भोजन पकाने में भोजन की पुष्टता को अधिक महत्त्व देना चाहिए, स्वाद को गौण। स्वाद

को बढ़ाने के हेतु भोजन के लाभकारी अवयवों को नष्ट करना ठीक नहीं। भोजन पीष्टिक और स्वादिष्ट दोनों ही होना चाहिए।

गेहूँ के छान लेने से जो चोकर बचता है उसको साधारण रीति से फेंक दिया जाता है। महीन पिसे हुए गेहूँ अथवा मैदे का प्रयोग अमीरी समझी जाती है। लेकिन इन्हीं अमार लोगों को चोकर से बनी दवा की गोलियाँ खाने में हिचक नहीं होती। चावल का उबाल करके उसका पानी (माड़, जो स्टाच है) फेंक दिया जाता है। इसी प्रकार चने की दाल दल करके उसके ऊपर का छिलका फेंक दिया जाता है। इससे उसके खनिज पदार्थ कूड़ में मिल जाते हैं। भोजन को ठीक से पका करके यदि भोजन के मुख्य अवयवों से पूरा लाभ उठाना है तो रसायनज्ञ की नीचे लिखा हुई बातों को ध्यान में रखियः—

(१) अनाजों को पीसने के पहिले खूब साफ कर लेना चाहिए किन्तु पीसने के बाद उनको छानना नहीं चाहिए। छानने से चोकर निकल जाता है। चने को पीसाने के पहिले उसका छिलका दल करके न फकना चाहिए।

(२) तरकारियों एवं चावल को उबालने के लिए कम पानी का प्रयोग करना चाहिए। चावल में कम पानी रखने से माड़ को नहीं फेंकना पड़ता है। यदि थोड़ा-सा माड़ निकालना ही पड़े तो उसको दाल में डाल देना चाहिए।

(३) तरकारियों को काटने के पहिले खूब धोना चाहिए। काटने के बाद तरकारियों को धोने पर उनके काफी पदार्थ निकल जाते हैं। कटी हुई पालक को धोने पर हरे रंग का पानी बच रहता है जिसमें पालक के मुख्य-मुख्य खनिज पदार्थ रहते हैं।

(४) दूध को बहुत देर तक न ओटाना चाहिए। एक उबाल के

दूध का प्रयोग करना चाहिए, नहीं तो उसके विटामिन 'आ' से टूट जाते हैं। दूध को प्रकाश में न रखिए नहीं तो विटामिन 'के' प्रकाश से नष्ट हो जायगा।

(५) हरे सागो में खानेवाले सोडे का प्रयोग मत कीजिये, नहीं तो विटामिन 'ए' 'बी' और 'सी' नष्ट हो जायेंगे।

(६) खाने को ठंडा करते समय उसमें हवा न फूँकनी चाहिए नहीं तो विटामिन 'ए', 'ई' और 'के' नष्ट हो जायेंगे।

(७) खाना जितनी जल्दी उबल सके उतना ही अच्छा है। उबलने के पश्चात् विटामिनो के नष्ट हो जाने की कम सम्भावना है।

(८) देर तक भोजन न पकाना चाहिए। जल्दी पकनेवाली विधियों से भोजन बनाना चाहिए।

(९) जिन खाद्य पदार्थों में विटामिन 'ए', 'बी' और 'सी' अधिकता में होते हैं उनको तलना नहीं चाहिए, नहीं तो विटामिन नष्ट हो जाते हैं।

(१०) गरम-गरम खाद्य पदार्थों को धातु के बर्तनों में धातु का जाली से न छानना चाहिए। अनेक विटामिन गरम धातु के सम्पर्क में आने से टूट जाते हैं। हमारा यहाँ तो (लकड़ी के) कठातो और (पत्थर की) कूँडिया में तरकारो निकालने की प्रथा है।

(११) जिन कच्चे पदार्थों का सलादरूप में उपयोग होता है उनको खाने के थोड़ी देर पहिले ही काटना चाहिए। जल्दी काटकर सलाद रख लेने से खराब हो जाता है, क्योंकि उसके विटामिन नष्ट हो जाते हैं।

भोजन के साथ कुछ बिना पके हुए खाद्य पदार्थों को अवश्य खाना चाहिए। जिन खाद्य पदार्थों का उपयोग बिना पकाये ही किया जा सकता है उनको पकाना समय, धन, शक्ति और भोजन सबको नष्ट

करना है। गाजर, टमाटर, मूली, अदरक की तरकारियाँ क्यों बनाई जायें? उनका तो यों ही प्रयोग किया जा सकता है।

सम्भव है, रसायन की ये बातें आपके स्वाद में बाधक हों, किन्तु स्वाद के सम्बन्ध में गांधीजी का एक सुन्दर वाक्य याद रखिये—“स्वाद का स्थान जीभ नहीं, किन्तु मस्तिष्क है।”

यदि रसायन के ज्ञान पर आपको विश्वास है और रसायनज्ञ की बातों पर श्रद्धा तो उपर्युक्त रीतियों से बनाया हुआ भोजन आपको अपने आप ही अच्छा लगने लगेगा। रासायनिक विधियों से खाना प्रकाश करने से बचाइये और स्वास्थ्य लाभ कीजिये।

भोजन की रक्षा करना

भोजन को ऐसे बर्तनों में रखना चाहिए जिससे भोजन खराब न हो। इसके लिए ऐसे पदार्थ के बर्तनों की आवश्यकता है जिससे भोजन के अवयव रासायनिक क्रिया न कर सकें। शीशे, चीनी और टिन के बर्तनों में भोजन खराब नहीं होता। रसायनज्ञों ने बर्तनों के अन्दर लगाने के लिए भिन्न-भिन्न धातुओं और मसालों का आविष्कार किया है। कलई से आप परिचित होंगे। पीतल की अपेक्षा इसके बर्तनों में भोजन रखना पसन्द किया जाता है। स्टेनलेस स्टील के बर्तनों में भोजन बिल्कुल खराब नहीं होता। भोजन रखने के लिए ऐसे शीशों का भी आविष्कार किया गया है जिनसे प्रकाश आ-जा न सके और भोजन सुरक्षित रहे।

कभी-कभी अधिक प्रिय फलों, तरकारियों को बेफ़सल खाने की भी इच्छा होती है। फलों को काटकर शकर से चासनी देकर उनका मुरब्बों के रूप में काफ़ी दिनों तक रखा जा सकता है। फलों के रसों

को रसायनज्ञों द्वारा आविष्कृत सोडियम मेटा बाई सल्फाइट (प्रिज़रवेटिव) द्वारा गर्मी में शर्बत के रूप में प्रयोग किया जा सकता है। नमक और सिरका लगाकर नीबू और कच्चे आमों को तो अचार-रूप में रखने की भारतीय विधि है ही। भोजन को अधिक दिनों तक सुरक्षित रखने के लिए उसमें अधिक-से-अधिक पानी निकाल लेना चाहिए और हवा न लगने देना चाहिए। अंडों की रक्षा रसायनज्ञों द्वारा बनाये हुए विशेष मिलीकैट के लेप में की जाती है। इससे हवा अन्दर नहीं जा पाती।

फलों को सुखाकर रखने में उनका प्राकृतिक स्वाद जाता रहता है। सूखे फलों को पानी में भिगोकर खाने से पहलेवाला स्वाद नहीं आता। फलों को विशेष रीतियों से सुखाने के लिए अन्वेषण किया जा रहा है और शीघ्र ही इन विशिष्ट रीतियों से सुखाये फलों का महानो बाद पानी में भिगोकर खाने से मौलिक स्वाद मिल सकेगा। रसायनज्ञ स्वाद-वृद्धि के लिए हर प्रकार का अन्वेषण कार्य कर रहे हैं।

दूध में से पानी निकालकर पाउडररूप में दूध का आयात-निर्यात होता है। आवश्यकता पड़ने पर पाउडर में पानी मिलाकर दूध को उसके प्राकृतिक रूप में प्राप्त किया जा सकता है। इससे दूध को, जो एक ही दिन में खराब हो जाता है, हजारों मील दूर तक पहुँचाया जा सकता है। अधिक मात्रा में दूध मिलनेवाले स्थानों पर दूध का पाउडर बना करके दूध की कमीवाले क्षेत्रों में भेजा जा सकता है। रसायन ने घर-घर तक दूध पहुँचाने का कितना सरल तरीका निकाला है !

जनता की स्वास्थ्य-रक्षा

रासायनिक विश्लेषण के विशेषज्ञ बाज़ार में मिलनेवाले खाद्य

पदार्थों की सदैव जाँच करते रहते हैं। म्यूनीमिपैलिटीवाले लोग रसायनज्ञ की सहायता से भोजन के बनने में प्रयुक्त घी और अन्य पदार्थों के बारे में जान करके खराब माल बेचनेवालों का पता लगा सकते हैं। आप सैकरीन मिले हुए सोडावाटर को स्वाद से नहीं पहिचान सकते। रंग मिले हुए खाद्य पदार्थों से आपको धोखा देने की चेष्टा की जाती है। विशेष गंधों का प्रयोग करके खराब भोजनों के स्वाद को छिपाने का प्रयत्न किया जाता है। असली घी कहकर मिलावट किया हुआ घी बचा जाता है। सिर में लगानेवाले तेलों में ह्वाइट ऑयल (मिट्टी के तेल का शुद्ध रूप) का प्रयोग किया जाता है। इससे बाल शीघ्र ही गिरने लगते हैं। मस्तिष्क द्वारा निकाली हुई बेइमानियों से आपकी इन्द्रियों को धोखा दिया जा सकता है किन्तु रासायनिक परीक्षाओं में इन चालों की क्लंड प्ल जाती है। आपके प्रयोग में आनेवाली वस्तुओं की वास्तविकता बताकर रसायनज्ञ आपका कितना परीपकार करता है !

घी में मिलावट रोकने के लिए एक ऐसे रंग की खोज की जा रही है जिसको प्रत्येक घी बनानेवाले को बनस्पति घी में मिलाना होगा। उस रंग को काफ़ी पक्का, आसानी से न निकलनेवाला और स्वास्थ्य पर खराब प्रभाव न डालनेवाला होना चाहिए। इस रंग के आविष्कृत होने पर घी के रंग को आसानी से पहिचाना जा सकेगा। केवल रसायनज्ञों से ही बेइमानी हार मानती है; उसकी प्रयोगशाला में बेइमानी की दाल नहीं गल पाती !

भोजन के नये स्रोत

अर्थशास्त्री बताते हैं कि जिस अनुपात में जनसंख्या बढ़ रही है,

उसमें शीघ्र ही भोजन की कमी पड़ सकती है। इस कठिन दशा में केवल रसायनज्ञ से ही आपका काम चल सकता है। रसायनज्ञ भोजन के नये स्रोतों को खोजने में तल्लीन है। हाल ही में उन्होंने समुद्र में काफी मात्रा में पाई जानेवाली एक प्रकार की कार्डी (क्लोरेला) का पता लगाया है। रासायनिक विश्लेषण के अनुसार इसमें भोजन के मुख्य अवयव प्रचुर मात्रा में होते हैं। गृहिणियाँ यदि इसे स्वादिष्ट बनाने में सफल हुईं तो शीघ्र ही यह सामुद्रिक कार्डी हमारे भोजन का मुख्य अंग बनेगी। कार्डी के नाम से भयभीत नहीं होना चाहिए। रसायनज्ञ आपको भोजन के लिए वे ही चीजें बतायेंगे जिनसे आपके स्वास्थ्य खराब हो जाने की आशंका न हो। प्रगतिशील बन करके भोजन की समस्या को सुलझाने में आपको रसायनज्ञ की सहायता करनी चाहिए।

भूतकाल में रसायनज्ञ ने आपकी समस्याओं को अनेक बार सुलझाया है। जब घी की कमी पड़ी तो उसने हाइड्रोजिनेशन-विधि से तेल को घी में परिवर्तित किया। इस विधि द्वारा तेल के अणु में हाइड्रोजन के कुछ परमाणु जोड़ दिये जाते हैं। इससे तेल की अवस्था ठोस में परिवर्तित हो जाती है। रसायन के दृष्टिकोण से वानस्पतिक घी से चर्बी का काम निश्चय होकर लिया जा सकता है। किन्तु याद रखिये, इसमें दूध से प्राप्त घी या तेल में पाये जानेवाले विटामिन नहीं होते, इसलिए वनस्पति घी के साथ फलों और हरे साग का खाना जरूरी है। वस्तुतः वनस्पति घी नुकसान नहीं करता, किन्तु दूध के घी के समान वह पोषिक नहीं होता। उससे केवल चर्बी ही प्राप्त की जा सकती है, विटामिन नहीं।

दूध, शर्बत, आइसक्रीम आदि में जब वैनिलीन (Vanillin)

पड़ती है तो इनमें अच्छी सुगंध आ जाती है जिससे ये चीजें अधिक रुचिकर बन जाती हैं। पहले यह बहुत महँगी बिकती थी क्योंकि यह केवल मेक्सिको में प्राप्त पदार्थों से बनाई जाती थी। जब इसकी माँग बहुत बढ़ गई तो रसायनज्ञ ने इसको प्रयोगशाला में बनाया। अब यह काफी सस्ती और संसार के सब स्थानों में बहुलता से पाई जाती है।

मीठी चीजों के लिए अब तक केवल शकर का ही प्रयोग होता रहा है। रसायनज्ञों द्वारा निर्मित संकरीन शकर की अपेक्षा ५०० गुनी अधिक मीठी होती है किन्तु भोजन के दृष्टिकोण से इसका कोई महत्त्व नहीं क्योंकि यह शरीर में जाकर बिना किसी परिवर्तन के यों ही पेट में निकल जाती है। इसलिए इसका उपयोग केवल शकर की बीमारी वाले लोग ही कर सके हैं। लेव्युलाज नाम की शकर का इधर हाल ही में आविष्कार हुआ है। यह गन्ने की शकर के मुकाबले में अधिक मीठी होती है और शीघ्र ही इसका अधिक उपयोग किया जा सकेगा। अन्य प्रकार की मीठी चीजों के बनाने में रसायनज्ञ काफी प्रयत्नशील हैं।

इस प्रकार रसायन ने भोजन के क्षेत्र में जनसाधारण के लिए बड़ा कार्य किया है। रासायनिक विधि से भोजन पका करके उचित मात्रा में और ठीक प्रकार के भोजन-सेवन से अपना स्वास्थ्य ठीक रखिये। भोजन को सुरक्षित रखना भी सीखिये। रासायनिक विश्लेषणों से जनता का लाभ होता रहेगा। रसायनज्ञ आवश्यकता पड़ने पर भोजन के नए स्रोतों को खोजेगा। मनुष्य को स्वस्थ, प्रसन्न-चित्त एवं कार्यशील बनाने के लिए रसायन मानव-जाति की सेवा में सदैव तत्पर है।

भोजन कहाँ से प्राप्त होता है? खेती से। आइये हम यह जानने का प्रयत्न करें कि रसायन ने किसानों के लिए क्या कार्य किया है।

खेती

[भूमि को उपजाऊ बनाना; मिट्टी का विश्लेषण ; मिट्टी में तत्त्व ; फ़ासफ़ोरस ; पौधों की वृद्धि का नियंत्रण; पौधों को बिना मिट्टी के उगाना; फ़सल की कीड़ों से रक्षा; प्रकाश-संश्लेषण-विधि का अध्ययन]

भूमि को उपजाऊ बनाना

किसी भूमि में कई बार फ़सल उगाने से भूमि कमजोर हो जाती है। अच्छी फ़सल के लिए आवश्यक है कि भूमि में खाद दे करके उसे सदैव उपजाऊ रखा जाय। लगातार फ़सल बोने से मिट्टी के पदार्थ पौधे के रूप में निकलते चले जाते हैं। यद्यपि प्रकृति द्वारा कई विधियों से भूमि में कुछ पदार्थ पहुँचते रहते हैं तथापि साधारण रीति से खेतों की मिट्टी में प्रकृति द्वारा पहुँचनेवाले पदार्थों की मात्रा निकाले जाने अथवा निकलनेवाले पदार्थों की अपेक्षा कम होती है। यदि मिट्टी में पहुँचनेवाले पदार्थ निकलनेवाले पदार्थों की मात्रा के बराबर रहें तो फ़सल सदैव अच्छी होती रहेगी। भूमि में पदार्थों की मात्रा को सम रखने के लिए रसायन ने काफ़ी कार्य किया है। देश की अकालों से बचाने के लिए और मनुष्य को हमेशा खाना पहुँचाने के लिए रसायन ने मानव-जाति की बड़ी सेवा की है।

आर्थिक दृष्टिकोण से संसार के सब लोगों को खाना अभी नहीं मिल पाता किन्तु वैज्ञानिक सिद्धान्तों को व्यवहार में लाकर पर्याप्त मात्रा में

भोजन उत्पन्न किया जा सकता है। रसायन ने भोजन-प्राप्ति की समस्या हल कर दी है। इस प्रकार के प्रयत्न से खाना घर-घर तक पहुँच सकता है।

मिट्टी का विश्लेषण

मिट्टी में भी रासायनिक विश्लेषण की आवश्यकता पड़ती है। विश्लेषण से मिट्टी में मौजूद खनिज पदार्थों की मात्रा ज्ञात होती है और यह पता चलता है कि किस प्रकार के कितने खनिज पदार्थ मिट्टी में रहते हैं। जिन जमीनों में खनिज पदार्थों की मात्रा कम रहती है, वे बजर कहलाती हैं। इनको अच्छी मेल की खाद देने से उपजाऊ बनाया जा सकता है। जो जमीनें बहुत दिनों तक खाली पड़ी रहती हैं और पानी से धुल नहीं पाती, उनमें प्राकृतिक विधियों से खनिज पदार्थ तो पहुँचते रहते हैं किन्तु किसी प्रकार से निकल नहीं पाते। खनिज पदार्थों के अधिकता में होने से भूमि ऊपर बन जाती है और इनमें भी खेती नहीं की जा सकती। इनको उपजाऊ बनाने के लिए मिट्टी में खनिज पदार्थों की अधिकता को पानी से धाकर निकालना पड़ता है। कभी-कभी खनिज पदार्थों को नष्ट करने के लिए रासायनिक पदार्थों—गंधक आदि—का प्रयोग करना पड़ता है। इसलिए मिट्टी के विश्लेषण से रसायनज्ञ भूमि में खनिज पदार्थों की मात्रा को नियंत्रित करने हैं—बजर भूमियों में अधिक खनिज पदार्थ डाल करके और ऊसर भूमियों में से आवश्यकता से अधिक पदार्थों को निकाल करके।

मिट्टी में तत्त्व

साधारण रीति से उपजाऊ भूमियों में निम्नलिखित तत्त्व होते हैं:—

१. नाइट्रोजन,
२. फ़ॉस्फ़ोरस और
३. पोटैशियम।

पौधों को नाइट्रोजन की काफी आवश्यकता होती है। हवा में लगभग ८० प्रतिशत नाइट्रोजन होती है किन्तु पौधे इसका उपयोग नहीं कर सकते। उपयोग के लिए नाइट्रोजन का नाइट्रेट यौगिक रूप में होना आवश्यक है।

पौधे मिट्टी के नाइट्रेट को घोलरूप में जड़ों द्वारा खींच करके उनका उपयोग करते हैं; इसलिए मिट्टी में नाइट्रेट की मात्रा क्षीण होती रहती है। जब बादलों में बिजली चमकती है तो हवा में मौजूद नाइट्रोजन और आक्सीजन से एक भूरे रंग की गैस बनती है। यह पानी में घुल करके नाइट्रेट बनाती है। इस प्रकार वर्षा के जल से मिट्टी में नाइट्रेट पहुँचते रहते हैं। किन्तु, जैसा स्पष्ट किया जा चुका है, मिट्टी में पहुँचनेवाले नाइट्रेट की मात्रा की साल में तीन फ़मल लगनेवाली ज़मीनों में कमी पड़ जाती है। इसलिए रसायनज्ञ को भूमि में रासायनिक विधियों द्वारा बनाये हुए नाइट्रेट अथवा नाइट्रोजन के अन्य लवण मिलाने पड़ते हैं। भारत में सिंदरी में इस प्रकार की नाइट्रोजन की खाद बनाने के लिए एक बड़ा कारख़ाना खुला है। किसानों को इस प्रकार की खाद का उपयोग करना चाहिए, लेकिन ध्यान रखना चाहिए कि अधिक मात्रा में इस प्रकार की खाद से भूमि खनिज पदार्थों की अधिकता के कारण कहीं ऊसर बन जाय। इसलिए रसायनज्ञ द्वारा बताई गई तादाद में ही खाद का उपयोग करना चाहिए।

नाइट्रोजन-कार्बन अनुपात—हाल के अन्वेषणों से पता लगता

है कि जब नाइट्रोजन की खाद कार्बन के यौगिकों के साथ मिलाकर दी जाती है तो प्रपेक्षाकृत अधिक लाभ होता है। गोबर, पेड़ की सूखी पत्तियों, जीवों के मल, पेशाब, सूखी घास में नाइट्रोजन और कार्बन दोनों ही रहते हैं। इसलिए इन खादों का अधिकाधिक उपयोग करना चाहिए। आमतौर से किसान भाई गोबर को कड़े के रूप में जला डालते हैं। जो काम लकड़ियों से आसानी से लिया जा सकता है उसके लिए राष्ट्रीय अमूल्य खाद नष्ट करना राष्ट्रीय धन को बेकार करना है। मनुष्य को जीवन-निर्वाह के लिए कार्य राष्ट्रीय हित को ध्यान में रखते हुए करने चाहिए।

किसान लोग कुछ फसलों के बाद भूमि में अरहर, मनीष आदि बो देते हैं। थोड़े दिनों बाद फसल का काट करके वे इन पौधों की जड़ों को भूमि के अंदर ही रहने देते हैं। इससे भूमि अधिक उपजाऊ बन जाती है। वस्तुतः इन पौधों की जड़ों में कुछ कीटाणु होते हैं। वे हवा का नाइट्रोजन में नाइट्रेट बना लेते हैं। इस प्रकार प्राकृतिक विधियों का उपयोग करके भी भूमि को अधिक उपजाऊ बनाया जा सकता है।

फ़ासफ़ोरस

पौधों को फ़ासफ़ोरस की सूक्ष्म मात्राओं में आवश्यकता होती है। हड्डियों में फ़ासफ़ोरस अधिकता से पाया जाता है। किन्तु पौधे हड्डी रूप में फ़ासफ़ोरस का उपयोग नहीं कर सकते। इसके लिए आवश्यकता है कि रसायनज्ञ रासायनिक विधियों से फ़ासफ़ोरस के ऐसे यौगिक बनायें जो पौधे अपनी जड़ों द्वारा खींच सकें। हड्डियों के ऊपर गंधक के अम्ल की प्रतिक्रिया में विशेष परिस्थितियों में सुपर फ़ासफ़ेट

बनाये जाते हैं। इन यौगिकों में रसायनज्ञ को कैल्सियम और फास्फोरस की मात्रा को पौधों के अधिकतम लाभ के लिए नियंत्रित करना पड़ता है। सुपर फास्फेट बन जाने के बाद उनका खास तरीके से महीन पाउडर बनाया जाता है। महीन पाउडर में हो जाने के बाद ही पौधे इसका उपयोग कर पाते हैं।

हाल में अमोनिया नामक गैस के मिले हुए सुपर फास्फेटों का उपयोग किया जाने लगा है। जब अमोनिया गैस सुपर फास्फेट के घोल में प्रवाहित की जाती है तो अमोनिया उसमें घुल करके पौधों के लिए लाभदायक पदार्थ बनाती है। अमोनिया में नाइट्रोजन होती है; इसलिए अमोनिया मिले हुए सुपर फास्फेट से पौधों को नाइट्रोजन और फास्फोरस दोनों ही मिल जाते हैं।

पोटेसियम—पौधों को इस तत्त्व की भी काफी आवश्यकता होती है। इससे पौधों की वृद्धि भली प्रकार से होती है। रसायनज्ञों ने पौधे के लाभ के लिए इसके भी अनेक उपयोगी यौगिक बनाये हैं। रसायनज्ञ से पूछ करके इस खाद का भी उपयोग करना चाहिए।

इन तत्त्वों के अतिरिक्त पौधों को कुछ तत्त्व बड़ी सूक्ष्म मात्रा में चाहिए। जिस प्रकार मनुष्य को लौह, सोडियम, क्लोरीन, पोटेसियम आदि तत्त्वों की आवश्यकता होती है, उसी प्रकार पौधों को भी इसी प्रकार के तत्त्वों की सूक्ष्म मात्राओं में आवश्यकता होती है। सूक्ष्म मात्राओं में किसी भी आवश्यकता को जानना कठिन कार्य है, किन्तु रसायनज्ञ बड़ी कुशलता से मिट्टी की परीक्षा करने और पौधों को जलाकर प्राप्त राख का विश्लेषण करते हैं। इससे पौधों के लिए सूक्ष्म मात्रा में तत्त्वों की आवश्यकता का पता चलता है। रसायनज्ञ इनके उपयोगी यौगिक बना करके, अच्छी प्रकार की खाद बना करके, अच्छी

फसल को उगाने में किसान की सहायता करते हैं ।

पौधों की वृद्धि का नियंत्रण

कभी-कभी आवश्यकता होती है कि पौधे के कुछ भाग अच्छी तरह से बढ़ें और फल कुछ शीघ्र तैयार हो। पौधे के डठलो को यदि मजबूत करने की विधि मालूम हो जाय तो गन्ने की फल में काफी लाभ हो सकता है। आँधी आदि में पौधो को टूटने से बचाया जा सकता है। यदि पौधों की पत्तियों को देर से गिराया जा सके तो फलों के अधिक बड़े और अच्छे होने की सम्भावना होती है। रसायनज्ञों ने अनेक प्रकार के रासायनिक पदार्थों का अन्वेषण किया है। इनसे पौधो की वृद्धि को नियंत्रित किया जा सकता है और इच्छित प्रकार के फल प्राप्त किये जा सकते हैं। इन्डोल, प्रोपियोनिक एसिड, लाल दवा (पोर्टेमियम पर मैंगनेट) आदि ऐसे ही रासायनिक पदार्थ हैं, किन्तु आवश्यकता पड़ने पर फसल के सम्बन्ध में रसायनज्ञ से ही राय लेकर विशेष रासायनिक पदार्थों का उचित मात्रा में प्रयोग करना चाहिए।

पौधों को बिना मिट्टी के उगाना

रसायनज्ञों ने पौधों की खनिज पदार्थों की आवश्यकताओं को इतनी अच्छी तरह से जान लिया है कि वे पौधो को बिना मिट्टी के ही उगा सकते हैं। पूरी तरह से समझने की कसौटी यही है कि किसी कार्य को पूरी तरीके से करके दिखा दिया जाय। यह स्पष्ट करने के लिए कि रसायनज्ञ पौधों की आवश्यकताओं से पूर्णतः परिचित हैं,

वे पौधों को खनिज पदार्थ मिले पानी में मिट्टी की सहायता के बिना उगा सकते हैं। पौधों के लिए आवश्यक सब प्रकार के खनिज पदार्थों को पानी में घोल लिया जाता है और जब पौधों को इस पानी में उगाया जाता है तो बिना मिट्टी के ही ये पौधे अपनी प्राकृतिक अवस्था में उग आते हैं। प्रकृति के रहस्यों को रसायनज्ञ ने कितने तरीकों से समझने का प्रयत्न किया है—सुन्दर शीशे के बर्तनों में खनिज पदार्थ-युक्त पानी में उगते हुए और रसायन की कार्य-विधियों से फूलते-फलते हुए ये पौधे बड़े सुन्दर मालूम होते हैं। विदेशों में इस प्रकार के बगीचे बनाने का बड़ा शौक है। इसको रसायन-खेती (Chemical culture) कहते हैं।

फ़सल की कीड़ों से रक्षा

केवल मनुष्य ही पौधों से अपने पेट का पालन नहीं करते। प्रकृति के अन्य प्राणियों को भी उनकी आवश्यकता पड़ती है। विभिन्न प्रकार के कीटाणु, टिड्डी आदि पौधों पर धावा बोल करके मनुष्य द्वारा उगाई हुई खेती को नष्ट करके अपनी भूख मिटाते हैं। इससे साधारण रीति से लगभग २० प्रतिशत फ़सल नष्ट हो जाती है। जनसंख्या बढ़ रही है और संसार की केवल ४० प्रतिशत जनसंख्या को ही दोनों समय भोजन मिलता है। इसलिए कीटाणुओं के परोपकार के लिए मनुष्य को भूखा नहीं रखा जा सकता। और फिर जिसने मेहनत की है, उसको तो उसका फल मिलना ही चाहिए। इन सब कारणों से कीटाणुओं को मारने के लिए बाध्य होना पड़ता है। रसायनज्ञों ने इस दिशा में भी काफ़ी प्रयत्न किये हैं। कीटाणु-नाशक पदार्थों के

अध्याय में रसायनज्ञों की इन सेवाओं का विस्तार से वर्णन किया जायगा।

प्रकाश-संश्लेषण-विधि का अध्ययन

पिछले अध्याय में बताया जा चुका है कि पौधे कार्बन-डाई-आक्साइड और जल से सूर्य-प्रकाश में कार्बोहाइड्रेट पदार्थों का निर्माण कर लेते हैं। पौधों और पशुओं दोनों के भोजन इसी प्रकाश-संश्लेषण-विधि पर निर्भर है। वैज्ञानिक गणनाओं के अनुसार सूर्य-प्रकाश की शक्ति का केवल दो प्रतिशत भाग इस विधि में उपयुक्त हो पाता है। बाकी सारी शक्ति बेकार चली जाती है।

इस बेकार में जानेवाली शक्ति को उपयोग में लाने के लिए रसायनज्ञों ने इस विधि का खूब विस्तार से अध्ययन किया है। उपर्युक्त विधि विशिष्ट प्रकार के रासायनिक पदार्थों की उपस्थिति में ही होती है। इन पदार्थों को यदि पूर्णतः जान लिया जाय तो प्रकाश-संश्लेषण से प्रयोगशाला में पौधों की सहायता के बिना भोजन उत्पन्न किया जा सकता है। रसायनज्ञों को इस दिशा में काफ़ी सफलता मिल रही है और हाल के अन्वेषणों से ऐसी सम्भावना की जा सकती है कि रसायनज्ञ इस अत्यंत महत्वपूर्ण प्राकृतिक विधि को पूर्णतः समझ में सफल होंगे। तब भोजन को बिना खेती के उत्पन्न किया जा सकेगा और बेकार जानेवाली सूर्य-शक्ति का अधिक उपयोग हो सकेगा; भोजन की समस्या सदैव के लिए हल हो जायगी। रसायनज्ञ तब मनुष्य को अपने परिश्रम का अमूल्य उपहार दे सकेंगे। किसी भी महान् कार्य के लिए धीरे परिश्रम और समय की आवश्यकता होती है। रसायनज्ञ अन्वेषण में प्रगति कर रहे हैं। ईश्वर से प्रार्थना कीजिये

कि वे इस अध्ययन में सफल हों।

इस प्रकार हम देखते हैं कि रसायन ने भोजन को स्वास्थ्यप्रद एवं सुलभ बनाने में ही नहीं किन्तु उसको खेती द्वारा उत्पन्न करने में भी बड़ी सहायता की है। मिट्टी के विश्लेषण से खनिज पदार्थों की मात्रा का नियंत्रण करके, विविध प्रकार के पौधों की आवश्यकताएँ जान करके, फसलों की कीड़ों से रक्षा करके, रसायन ने अधिक मात्रा में भोजन उत्पन्न करने में मानव-जाति का अत्यंत उपकार किया है।

कपड़ा

[रंगाई; रंगों के विविध प्रकार; कपड़ों की चमक; कृत्रिम रेशम या रेयॉन; अन्य कृत्रिम कपड़े; रेशों की परीक्षा; धुलाई, धब्बों को छुड़ाना]

प्राकृतिक वस्तुओं में रूचि के अनुसार परिवर्तन करके प्रकृति के कार्यों में हस्तक्षेप करने की मानवीय प्रवृत्ति हो चली है। आजकल तो नदियों के मार्ग को बदलने की चेष्टा की जाती है, पहाड़ी इलाकों को समतल बनाने का प्रयत्न किया जाता है, रेगिस्तानों को साधारणरूप से उपयोगी भूमि में बदल करके उसमें बाग लगाने की कल्पना की जाती है आदि। मनुष्य की इच्छा-पूर्ति के लिए रसायनज्ञों ने अनेक कार्य किये हैं। कपड़े के क्षेत्र में तो कदाचित् उन्हें सबसे अधिक सफलता मिली है।

रंगाई

विधवाओं के अतिरिक्त सब भारतीय स्त्रियाँ रंगीन कपड़े ही पहिनना पसन्द करती हैं। पुरुष भी रूचि-वैचित्र्य के लिए हलके रंगीन कपड़े पसन्द करते हैं। सफ़ेद कपड़ों को धुलाना भी तो बहुत पड़ता है !

लेकिन आपके कपड़ों का रंग तो पक्का होना चाहिए, जिससे धुलाई से कपड़े धबीले न हो जायँ। कपड़ों में पक्का रंग किस प्रकार चढ़ाया जाता है? कच्चे और पक्के रंगों में क्या अन्तर है?

पिकरिक एसिड (Picric Acid) एक पीला रंग होता है। सूती कपड़ों को इसमें रंगने से कच्चा पीला रंग आ जाता है। किन्तु जब ऊनी और रेशमी कपड़े इसमें रंगे जाते हैं तो उनमें पक्का रंग चढ़ जाता है। अर्थात् एक ही रंग एक प्रकार के कपड़े के लिए कच्चा रहता है और वही रंग दूसरे प्रकार के कपड़ों के लिए पक्का हो जाता है। पक्का रंग धुलने से नहीं छूटता। ऐसा क्यों? इसका कारण यह है कि सूती कपड़े के धागों की पिकरिक एसिड से कोई रासायनिक प्रतिक्रिया नहीं होती, किन्तु ऊनी और रेशमी कपड़ों से पिकरिक एसिड रासायनिक रूप से संयोग करती है। जब रंग से कपड़े के धागों का रासायनिक संयोग हो जाता है तब रंग पक्का हो जाता है। रासायनिक संयोगों में रसायनज्ञ काफ़ी हस्तक्षेप कर सकते हैं, अतः रंग को पक्का बनाने के सम्बन्ध में वे काफ़ी बातें बता सकते हैं।

साधारण रीति से रंगाई तीन प्रकार से की जाती है :—

१. रंग के घोल में कपड़े को डुबाने से—साधारणतः ऊनी और रेशमी कपड़ों को रंग के घोल में डाल दिया जाता है। घोल में थोड़े नमक को भी मिलाने की आवश्यकता होती है। ऊनी और रेशमी धागों का स्रोत जानवर हैं और इसलिए इनमें प्रोटीन की मात्रा अधिक होती है। प्रोटीन रासायनिक दृष्टिकोण से अधिक क्रियाशील होती है, इसलिए प्रोटीनवाले धागे रंगों के गरम घोल में ही रंग से रासायनिक प्रतिक्रिया कर लेते हैं। जब रंग इन धागों में प्रवेश करता है तो कुछ और पदार्थ उनमें से निकलने लगते हैं। इनके द्वारा घोल का रंग नीचे

बैठने लगता है। रंगों को घोल-अवस्था में रखने के लिए नमक डालने की आवश्यकता पड़ती है।

२. रासायनिक प्रतिक्रियाओं से— नील' के घोल में जब कपड़ों को डुबाया जाता है तो उनमें हलका नीला रंग आ जाता है, अर्थात् सूती कपड़ों से नील रासायनिक संयोग नहीं करती। कपड़ों को नीला रंगने के लिए नील के क्षारीय घोल (जो सफ़ेद होता है) में डुबाया जाता है। यह सूती कपड़ों के धागे में प्रविष्ट हो जाता है। जब इस सफ़ेद रंग में रंगे हुए कपड़ों को हवा में सुखाया जाता है तो उनमें पक्का नीला रंग चढ़ जाता है। धागों में पहुँचा हुआ नील का क्षारीय घोल हवा की ऑक्सीजन से मिल करके पक्का नीला रंग बनाता है। इस प्रकार रासायनिक ज्ञान के उपयोग से कच्चे रंग को सूती कपड़ों के लिए पक्का बनाया जा सकता है।

३. कुछ कपड़ों को पहिले एलूमिनियम सल्फ़ेट में और फिर एमोनिया में डुबाया जाता है। इससे कपड़ों के धागों में रासायनिक प्रतिक्रिया से एलूमिनियम हाइड्राक्साइड बन जाता है। जब इन कपड़ों को रंग के घोल में डाला जाता है तो पक्का रंग चढ़ जाता है क्योंकि रासायनिक रूप से धागे में भेजे गये पदार्थों में रंगों से संयोग करने की अधिक शक्ति होती है।

इस प्रकार रसायनज्ञ ने कपड़ों को पक्के रंग से रंगने की विभिन्न विधियाँ बताई हैं, जिनका साधारण रीति से सब रंगरेज उपयोग करते हैं।

रंगों के विविध प्रकार

प्राचीन काल में प्राकृतिक स्रोतों से बने रंगों का ही प्रयोग होता

था; जैसे, नील, हल्दी, मुंजिष्ठ, केसर आदि। किन्तु इनकी मात्रा और संख्या बहुत कम थी। फलतः रंगों के न विभिन्न शेड मिल पाते थे और न अधिक रंगाई ही हो पाती थी। किन्तु आजकल तो हजारों तरीकों के रंग मिलते हैं और इनका प्रयोग प्रचुरता से होता है। आजकल तो शिर से नख तक एक ही रंग के कपड़ों के पहिनने का फ़ैशन चल पड़ा है। रंगों का मिलान और विभिन्न प्रकार के रंगों के शेडों को किसने जन्म दिया? रसायन ने। और कैसे?

जब रंगों का रासायनिक विश्लेषण किया गया तो विविध प्रकार के रंगों के अणुओं में परमाणुओं के कुछ ऐसे समूह मिले जिनको बदलने पर रंगों के शेड में अन्तर किया जा सका। कुछ समूहों के जोड़ने पर विविध प्रकार के रंगों का बनाना भी सम्भव हुआ। इस प्रकार अणु के अध्ययन से, परमाणु के विशिष्ट समूहों के ज्ञान से और इनकी अदला-बदली से रसायनज्ञों ने सहस्रों प्रकार के रंगों को जन्म दिया। आजकल तो संश्लेषण-विधि से प्राप्त अनेक रंगों का प्रयोग होने लगा है। आपको सुनकर आश्चर्य होगा कि काले तारकोल से रसायनज्ञों ने कुछ लाभदायक यौगिकों को अलग किया और इसके बाद इन यौगिकों के अणुओं में रंगों के ज्ञान के आधार पर परमाणुओं के परिवर्तन से विविध प्रकार के रंग निकाले। इस प्रकार से काले तारकोल द्वारा रासायनिक विधियों से रंगों का बनाना सम्भव हुआ। आपने गिरगिटान के रंग बदलने की तो बात सुनी होगी। गिरगिटान तो हरे से नीला, पीला, भूरा ही हो पाता है किन्तु रसायनज्ञ ने तो काले तारकोल से अनेक सुन्दर रंग निकाले। कितना विलक्षण है रसायन का कार्य !

कपड़ों की चमक

जब आप बाज़ार में कपड़ा खरीदने जाते हैं तो आमतौर से मर्सराइज़्ड (Mercerized) कपड़ा ही खरीदना पसन्द करते हैं। यह कैसे बनाया जाता है ?

सूत के धागों का यदि अणुवीक्षण-यंत्र में देखा जाय तो ज्ञात होता है कि वे उलझे और बटे हुए होते हैं। जॉन मर्सर नाम के एक अंग्रेज़ ने देखा कि यदि सूत के धागों को अथवा रुई को २० प्रतिशत क्षार (कास्टिक सोडा) के घोल में मला या चनाया जाय तो धागों की बटन खत्म हो जाती है और वे सुलभ जाते हैं। इसके साथ-साथ उनको अधिक मजबूत और चमकीला पाया गया। इस प्रकार के धागे से बनाये गये कपड़ों का ग्राह्य भी मवाई हो गई। आपका प्रिय मर्सराइज़्ड कपड़ा इसी विधि से तैयार किया जाता है। मर्सराइज़ शब्द अंग्रेज़ मर्सर के नाम की ही स्मृति है। एक रासायनिक खाज ने ही कपड़ों को कितना सुन्दर और अधिक दिनों तक चलनेवाला बना दिया !

हाल ही में ज्ञात हुआ कि क्षार के स्थान पर यदि अम्ल का सूती धागों के मर्सराइज़ेशन के लिए उपयोग किया जाय तो सूत के धागे इनके समान हो जाते हैं। उनके ऊपर रंग आसानी से चढ़ाये जा सकते हैं और वे चलते भी अधिक हैं। ट्रापिकल कपड़ों के बारे में आपने सुना होगा। उनमें से कुछ कपड़े इसी प्रकार की रासायनिक प्रतिक्रियाओं से बनाये जाते हैं।

मिल के बने अथवा धुले हुए कपड़ों में चमक कुछ अधिक होती है किन्तु यह चमक कभी-कभी घर के धोबी से धुलाने के बाद चली जाती है। ऐसा क्यों ? इस बार 'रसायन' ने ही आपको धोखा दिया है।

आजकल ऐसे अनेक रासायनिक पदार्थ ज्ञात हैं जिनके प्रयोग से कपड़े में काफ़ी चमक आ जाती है। चमक, रंग की भाँति दो प्रकार की हो सकती है—कच्ची और पक्की। रंगों के पिछले ज्ञान से आप सहज ही कल्पना कर सकते हैं कि पक्की चमक तो रासायनिक प्रतिक्रियाओं के फलस्वरूप हो सकती है। मसंराइजेशन-विधि से पक्की चमक आती है। किन्तु अन्य प्रकार के रासायनिक पदार्थों के उपयोग से कच्ची चमक ही आ पाती है, अर्थात् धुलने के बाद वह नष्ट हो जाती है। जहाँ पर जिस प्रकार के रासायनिक पदार्थों का उपयोग होता है, वहाँ वैसे ही फल प्राप्त होते हैं।

कृत्रिम रेशम या रेयॉन (Rayon)

सूत की अपेक्षा रेशम अधिक मजबूत, सुन्दर और टिकाऊ होता है। पहले यह शहतूत के पेड़ पर रहनेवाले विशेष कीड़ों से प्राप्त होता था। इस विधि में एक तो कीड़ों की हत्या करनी पड़ती थी और दूसरे रेशम का उत्पादन केवल कीड़ों पर ही निर्भर होने के कारण बहुत कम था। रसायनज्ञों ने कृत्रिम रेशम बना करके रेशम की माँग को पूरा किया। कृत्रिम रेशम को रेयॉन भी कहा जाता है। वस्तुतः यह सेल्युलोज़ द्वारा विभिन्न विधियों से प्राप्त घागों का सामूहिक नाम है।

वैज्ञानिकों ने ज्ञात किया कि शहतूत का कीड़ा शहतूत के पेड़ की पत्तियों से 'सेल्युलोज़' प्राप्त करता है। अपने शरीर से सेल्युलोज़ का रेशम बनाकर निकालने की उसमें क्षमता होती है। यदि शहतूत के कीड़े की उन रासायनिक क्रियाओं को जाना जा सके जिससे वह सेल्युलोज़ को रेशम में परिवर्तित करता है तो कृत्रिम रेशम सरलता से

बनाया जा सकता है, क्योंकि रसायनज्ञ सेल्युलोज को आसानी से अधिक मात्रा में बना सकते हैं। इतना तो १७४२ ही में विचारा जा चुका था किन्तु १८८६ में एक फ्रांसीसी रसायनज्ञ हिलरे देशारदोने (Hilaire de Chardonnet) ने इस विचार को व्यवहार में परिणत किया। आपने सोचा कि यदि सेल्युलोज के गाढ़े घोल को अत्यन्त महीन छेद वाली चलनी से निकाला जा सके तो कदाचित् सफलता प्राप्त हो सके। आपने धातु के तारों की एक बहुत महीन जाली बनवाई और उसके ऊपर शीशे की एक चादर चढ़ा दी। जब तारों को रासायनिक पदार्थों में घोल दिया गया तो महीन छेदोंवाली शीशे की चलनी ही बची। इस शीशे से जब सेल्युलोज का घोल* दबाकर निकाला गया और जाली से निकले हुए सेल्युलोज के महीन तार जब विशिष्ट रासायनिक पदार्थों के टब में गिरे तो कृत्रिम रेशम बना। ४० वर्ष बाद ही कृत्रिम रेशम का औद्योगिक सृजन आरम्भ हुआ। अब तो बाज़ार में इस प्रकार के रेशम का बाहुल्य है।

और भी अनेक विधियों से आजकल रेशम बनाया जाने लगा है। इन विधियों का उद्देश्य होता है सेल्युलोज को शुद्ध करना और सेल्युलोज को गढ़ाई नियंत्रित करके इच्छित प्रकार के महीन तारों को प्राप्त करना। सेल्युलोज बेकार लकड़ी और चिथड़ों आदि से क्षार-क्रिया द्वारा बनाया जा सकता है। तूतिया और एमोनिया के घोल में रखकर

* यह घोल इस विधि से बनाया जाता है—बेकार सूती कपड़े अथवा चिथड़ों को शोरे और गंधक के अम्ल में घोल लिया जाता है। इसको धोकर वायुशून्य स्थान में सुखा लिया जाता है। तत्पश्चात् विशेष अनुपात में सेल्युलोज और ईथर को घोल लिया जाता है।

इसे शुद्ध किया जा सकता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि चिथड़ों और लकड़ी को रेशम में परिवर्तित किया जाता है। यह धोखा देने वाला नहीं, किन्तु बड़ी-बड़ी मिलों में रोज होनेवाला रसायन का जादू है।

कृत्रिम रेशम वानस्पतिक पदार्थों द्वारा ही बनाया जाता है। इसलिए इसको बनाने में हिंसा नहीं होती। इसे तो गांधीजी के अनुयायी भी पहिन सकते हैं।

अन्य कृत्रिम कपड़े

रूई, ऊन और रेशम प्राकृतिक हैं; रूई पौधों से प्राप्त होती है, ऊन बालदार विशेष जानवरों से और रेशम शहतूत के कीड़ों से। कपड़ों में प्रयुक्त इन प्राकृतिक धागों के अतिरिक्त अब अनेक प्रकार के और रेशों का भी प्रयोग होने लगा है।

इनमें से ये दो रेशे मुख्य हैं—(१) प्रोटीन से बने रेशे और (२) दूध के केसीन से बने रेशे।

(१) प्रोटीन से बने रेशों में नाइलॉन (Nylon) सबसे मुख्य है। प्रसिद्ध रसायनज्ञ एमिल फिशर ने एमीनो एसिड (प्रोटीन के अवयव) से १९वीं शताब्दी में ही पॉलीपेप्टाइड (Polypeptides) नामक पदार्थ बना लिये थे। इन पदार्थों के अणु प्रोटीन-जैसे होते थे, किन्तु ये कपड़े के समान नहीं दिखाई पड़ते थे। कैरोथर (Carother) साहब १९३७ में ६ वर्षों के घोर परिश्रम के पश्चात् नाइलॉन को बनाने में सफल हुए। यह आविष्कार अचानक ही नहीं किन्तु कुशल अन्वेषण-योजना से हुआ।

तारकोल से बेंजोइन नामक पदार्थ निकाला जाता है। इससे फिनोल (नाली में डालनेवाला फ़िनाइल नहीं) बनाया जाता है ; इसके हाइड्रोजिनेशन से साइक्लोहेक्सेन बनाया जाता है। इसके ऊपर नाइट्रिक एसिड की प्रतिक्रिया से एडीपिक एसिड बनाई जाती है ; तत्पश्चात् इससे हेक्सामेथिलीन डाईएमीन बनता है। अन्तिम पदार्थ के अणुओं में एक-दूसरे से लगातार मिल करके बहुत बड़े अणु के बनाने की शक्ति होती है। इसे पॉलीमराइजेशन (Polymerization) कहते हैं। अणु की लम्बाई नियंत्रित करके हेक्सामेथिलीन डाईएमीन से नाइलान बनाया जाता है। इस विधि में रसायनज्ञों को कितनी कठिनाई पड़ती है ; इसको तो समझना कठिन है, किन्तु इसके गुणों से ही परिचित होकर रसायन के दैनिक जीवन में स्थान को समझिये।

आजकल इमका दाँत और बाल वाले ब्रुश के बनाने में अधिकतम उपयोग होता है। इसके अतिरिक्त खिड़की पर टाँगे जानेवाले पर्दों, रस्सियों और पैराशूट के कपड़े को बनाने में इसका काफ़ी प्रयोग होता है। यह बहुत मजबूत, मुलायम और पानी को न सोखनेवाला होता है। विशेष प्रकार के नाइलान से बरसातियाँ भी बनाई जा सकती हैं।

(२) दूध को फाड़कर छेने से बंगाली रसगुल्ले बनाय जाते हैं। रसायनज्ञ इस छाने को केसीन (Casein) कहते हैं। यह बहुत लाभकारी और क्रियाशील प्रोटीन होती है। बहुत महीन पीस करके इसको अनेक रासायनिक पदार्थों से मिलाया जाता है। इसके बाद इसका घोल महीन जाली से निकाला जाता है। पुनः रासायनिक पदार्थों के प्रभाव से छेदों से प्राप्त रेशों द्वारा विभिन्न प्रकार के धागे बनाये जाते हैं, जिनका कपड़ा बनाने में उपयोग होता है।

अभी तक ऊन को रासायनिक विधियों से नहीं बनाया जा सका

है। ऊन की-सी मुलायमियत और गर्मी रसायनज्ञों द्वारा बनाये किसी रेशे में नहीं पाई जाती। रसायनज्ञ ऊन को बनाने में प्रयत्नशील हैं। रेशम के क्षेत्र में प्राप्त उनकी सफलता को देख करके कहा जा सकता है कि वे शीघ्र ही ऊन का कृत्रिम रूप भी बना लेंगे।

रेशों की परीक्षा

कपड़ों के बनाने में आजकल इतने अधिक रेशों और धागों का प्रयोग होने लगा है कि असली और नकली (रासायनिक विधियों से बनाये) कपड़ों में अन्तर करना मुश्किल होता है। रसायनज्ञ आपको अन्तर करना भी बता सकता है।

यदि असली रेशम को परीक्षा-नली में गरम किया जाय तो अमोनिया निकलती है। अमोनिया को रसायनज्ञ लाल लिटमस द्वारा पहचानते हैं। लिटमस एक प्राकृतिक रंग है जिसमें डुबाया हुआ गीला सोखता अमोनिया (एमोनिया) एवं अन्य क्षारों को नीला कर देता है। कृत्रिम रेशम से अम्ल निकलते हैं। इससे नीले लिटमस वाला कागज लाल हो जाता है।

साधारणरूप से कपड़े के कुछ रेशों में एक दियासलाई से आग लगाकर उनके बारे में आसानी से पता लगाया जा सकता है। असली रेशम को जलाने से बालों के जलने की गंध आती है; मुड़ा हुआ एक काला महीन धागा-सा बच रहता है। कृत्रिम रेशम को जलाने से भी ऐसी ही गंध आती है किन्तु जलाने से बचा हुआ रेशम तपाये तार की भाँति चमकता रहता है। ऊन थोड़ी देर जल करके बुझ जाता है और इसके तारों के अन्तिम भाग में काली घुंड़ी-सी बन जाती है।

सूती कपड़े से कागज के जलने की-सी गंध आती है और इसकी बची राख अपेक्षाकृत कम होती है। रेयॉन सूती कपड़ों की भाँति जलता है।

धुलाई

अच्छी धुलाई एक रासायनिक कला है। रसायन के दृष्टिकोण से धुलाई में निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखना चाहिए:—

१. रंग कच्चा है या पक्का। कच्चे और पक्के रंगवाले कपड़ों को अलग-अलग करके धोना चाहिए।

२. यह देखना चाहिए कि साबुन का क्षार कपड़े अथवा उसके रंग के लिए हानिकारक है या नहीं। यदि क्षार हानिकारक है तो कम क्षारवाने साबुनों का प्रयोग करना चाहिए।

३. सूती कपड़े साधारणतः धुलने के बाद रंग में हलके हो जाते हैं; ऊनी और रेशमी कपड़ों में ऐसा नहीं होता। इसलिए इन कपड़ों को अलग-अलग धोना चाहिए।

४. कुछ कपड़े पानी के लगने से खराब हो जाते हैं; इसके लिए रसायनज्ञों द्वारा बनाये हुए घोलक, तेल, साल्वेंट ऑयल (Solvent oil) या पेट्रोल का उपयोग करना चाहिए।

धब्बों को छुड़ाना

यदि कपड़े में लगा हुआ धब्बा कपड़ों के रेशे से रासायनिक रूप से संयोग कर चुका है तो उसको नहीं छुटाया जा सकता, क्योंकि वह धब्बा तो पक्का हो चुका है। यदि धब्बा कच्चा है तो उसे किसी रासायनिक घोलक में घोल करके दूर किया जा सकता है अथवा धब्बेवाले पदार्थ

को रासायनिकरूप से नष्ट किया जा सकता है। मुख्य प्रकार के धब्बों को छुड़ाने की रासायनिक रीति यह है:—

धब्बा	छुड़ाने की विधि
१. चाय, काफ़ी	गरम पानी से धोना चाहिए; ग्लिसरीन के घोल से भी धोया जा सकता है।
२. खून	साबुन और पानी से।
३. फल	पानी; इसके बाद अमोनिया का हलका घोल लगाना चाहिए।
४. चिकनाई	कार्बन टेट्राक्लोराइड नामक घोल से।
५. पेंट और वार्निश	तारपीन के तेल से ये बिल्कुल छूट जाते हैं।
६. ग्रायोडीन	सोडियम थायो सल्फेट (हाइपो) के घोल से।
७. स्याही	ग्रावज़ेलिक एसिड के घोल से।

धब्बे को छुड़ाने के लिए ऐसे पदार्थ को चुनना चाहिए जिससे कपड़े का रंग खराब न हो।

इस प्रकार हम देखते हैं कि रसायन ने कपड़े के क्षेत्र में अनोखा कार्य किया है। विभिन्न प्रकार के पक्के रंगों द्वारा अनेक रुचियों के कपड़े बनाना; रासायनिक विधियों से कपड़ों के विभिन्न शोडों को रंगना; मर्सराइजेशन एवं अन्य विधियों से कपड़े में चमक

लाना; रासायनिक विधियों से धुलाई करके कपड़े का जीवन बढ़ाना आदि रसायन की महत्वपूर्ण देन हैं। इसके अतिरिक्त अनेक धागों को कृत्रिमरूप से बना करके रसायनज्ञ ने कपड़ों की किस्मों को बढ़ाया है और संसार के लोगों की बढ़ती हुई माँग को पूरा किया है। आजकल तो बाज़ार में रोज़ ही नए प्रकार के कपड़े और उनके विविध रंग आते हैं।

८

घर

[आधुनिक मकान ; स्टील और धातु का प्रयोग ; ईंट और टाइल ;
सोमेंट ; शीशा ; रबड़]

आधुनिक मकान

मनुष्य की तीन मुख्य आवश्यकताएँ हैं—भोजन, कपड़ा और घर। भोजन और कपड़े के सम्बन्ध में रसायनज्ञों की सेवाओं को हम जान चुके हैं। घरों को बनाने में साधारणतः इंजीनियरों का मुख्य भाग रहता है किन्तु उनको अच्छे प्रकार का सामान देना रसायनज्ञ का कार्य है। इंजीनियर की सफलता अच्छे सामान पर ही निर्भर है। प्राचीन काल में घरों को बनाने के लिए लकड़ी, मिट्टी, घास-फूस एवं कंकड़-पत्थरों का ही प्रयोग होता था। किसानों की मिट्टी की भोंपड़ियाँ अब भी उस प्राचीन युग की प्रतीक हैं। केवल मिट्टी से आजकल के ८-१० खंड के मकान, जिनमें बड़े-बड़े दफ्तर रहते हैं या जिनमें १०००-२००० आदमी तक रह सकते हैं, नहीं बनाये जा सकते। इसके लिए और भी अनेक पदार्थों का उपयोग करना होता है। रसायन ने नए प्रकार के पदार्थों को बनाने एवं घरों के बनाने में प्रयुक्त पुराने पदार्थों को अधिक अच्छा बनाने में काफ़ी महत्वपूर्ण कार्य किया है।

बड़े-बड़े आधुनिक मकानों का एक स्टील का ढाँचा बनाया जाता

है। इस ढाँचे को ईंटों आदि से भरा जाता है। इनको जोड़ने के लिए सीमेंट का प्रयोग होता है। आजकल टाइल लगाने का भी फ़ैशन चल पड़ा है। विभिन्न धातुओं, शीशे, रबड़ आदि के उपयोग से मकानों को अधिक सुंदर बनाया जा सकता है। पक्के मकानों और बड़े शहरों में कच्ची मिट्टी दुर्लभ होती है। रसायन ने इस मिट्टीमय संसार को, जहाँ मनुष्य भी मिट्टी और धूल के बने समझे जाते थे, कितना बदल दिया है!

स्टील और धातु का प्रयोग

अच्छी स्टील का उत्पादन रसायन के अंतर्गत है। 'धातु' के अध्याय में इस विषय पर अधिक प्रकाश डाला जायगा। अच्छी, मजबूत स्टीलों का विकास मजबूती को ही ध्यान में रखकर नहीं हुआ। जब मकान के लिए अधिक स्टील बनाने की आवश्यकता पड़ी तो इंजीनियरों ने यह कार्य रसायनज्ञ को दिया। उन्होंने स्टील को बनाने की सुलभ विधियों को ज्ञात किया और इसके साथ-साथ अधिक मजबूत स्टीलों को जन्म दिया। इस प्रकार अच्छी स्टीलों का अधिक मात्रा में उत्पादन सम्भव हुआ।

हाल ही में एक और विकास हुआ है। रसायनज्ञों द्वारा बनाये सेल्यूलॉयड (Celluloid) पदार्थों से इंजीनियर पहले मकान के नमूने का ढाँचा तैयार करते हैं। इस नमूने से वे यह ज्ञात करते हैं कि ढाँचे का कौन-सा भाग कितना कमजोर है। ढाँचे के कमजोर स्थानों को जान करके मकान के स्टील के ढाँचे को और अधिक मजबूत बना दिया जाता है। सेल्यूलॉयड पदार्थों के आविष्कार बिना इस प्रकार का ज्ञान सम्भव नहीं था।

कभी-कभी कुछ ढाँचे बहुत ही जल्द टूट जाते हैं। धातुओं की बनी

छड़ों के कुछ भाग कमजोर रह जाते हैं। नंगी आँख से इन कमजोर स्थानों का पता नहीं लगाया जा सकता। एक्स-किरणों द्वारा इन छड़ों की परीक्षा से रसायनज्ञ कमजोर स्थानों को बता सकते हैं। धातुओं की एक्स-किरणों द्वारा परीक्षा से इस प्रकार काफ़ी लाभ उठाया जा सकता है।

मकान में प्रयुक्त अन्य सब धातुओं के बारे में बताना कठिन है। वस्तुतः रसायनज्ञ ने अनेक धातुओं को इंजीनियर के उपयोग के लिए बना करके रख दिया है। वे इन धातुओं के गुणों के पारखी हैं। जब जैसी आवश्यकता पड़ती है, वे इनका उपयोग करते हैं।

मकान में लगी हुई धातुओं को चमकीला और टिकाऊ बनाने के लिए इनैमिल चढ़ाया जाता है। यह रसायनज्ञों द्वारा बनाये हुए सिलीकेट यौगिकों का विशेष पदार्थ है। इसको रासायनिक विधियों से चढ़ाया जा सकता है। धातु पर इनैमिल चढ़ाने के पहले उसको किस प्रकार और कितना साफ़ करना चाहिए, सफ़ाई के लिए किन पदार्थों का उपयोग करना चाहिए—यह सब रसायनज्ञ ही बताते हैं।

ईंट और टाइल

अच्छी ईंटों को बनाने में रसायन ने निम्नलिखित प्रकार से सहायता की है :—

(१) ईंटों को बनाने में विशेष मिट्टी का प्रयोग किया जाता है। मिट्टी के गुणों की परीक्षा करके सबसे अच्छी मिट्टी को चुनना होता है। अच्छी मिट्टी को जल्दी पकाया जा सकता है और उसमें विशेष गुण उत्पन्न किये जा सकते हैं। मिट्टी के रासायनिक विश्लेषण से उससे बनी

ईंटों के गुणों को बताया जा सकता है। जिन मिट्टियों में केयोलान अधिक होती है, अर्थात् एलूमिनियम यौगिकरूप में पाया जाता है, वे ऊँचे तापक्रम पर पिघलती हैं। अधिक बालूवाली मिट्टी से बनी ईंटें गरमियों में अधिक गर्माती हैं और जाड़े में अधिक ठंडाती हैं। अधिक चूनेवाली ईंटें प्रायः मजबूत होती हैं।

(२) मुगलकाल की बड़ी-बड़ी इमारतों को जब कोई देखने जाता है तो वहाँ के रखवाले बताते हैं कि इन इमारतों में लगी मिट्टी में उरद, बाजरा आदि अनाजों का प्रयोग किया गया है। आपने कदाचित् इस पर विश्वास न किया हो, किन्तु ये बातें सही हो सकती हैं। मिट्टी को अच्छी तरीके से जमाने के लिए कुछ पदार्थों के मिलाने की आवश्यकता पड़ती है। इन अनाजों में सम्भव है ऐसे पदार्थ हों जिनके मिलाने से मिट्टी में ये गुण उत्पन्न हो जाने हों। पुराने जमाने के लोगो को यह तो मालूम न था कि किन पदार्थों को मिलाना चाहिए और क्यों। अनाज के थोड़े-से उपयोगी अंश से ही मिट्टी मजबूत बनती है किन्तु इस थोड़े-से भाग की जानकारी न होने से काफी अधिक मात्रा में अनाजों का प्रयोग करना पड़ता था। इससे अनाज का अधिकांश भाग बेकार जाता था।

मिट्टी के बहुत छोटे-छोटे कण उसके घोल में लटके हुए रहते हैं (Colloidal suspensions)। इनको बैठाने के लिए रसायनज्ञ थोड़ी मात्रा में रासायनिक पदार्थों का उपयोग करते हैं। इसलिए जो काम पहिले मनो अनाज अथवा फूस से होता था, वही अब रसायनज्ञ की एक पुड़िया से सरलता से हो जाता है। ठीक ज्ञान से कितनी बचत होती है !

(३) मिट्टी में कभी-कभी कुछ ऐसे खनिज पदार्थ होते हैं जिनकी उपस्थिति से मिट्टी ठीक से जम नहीं पाती। रसायनज्ञ मिट्टी के ठीक से

न जमने के कारण को ज्ञात करते हैं और उनके दूर करने का उपाय भी बताते हैं।

(४) ईंटों में प्रयुक्त मिट्टी को कितना महीन होना चाहिए और क्यों? वास्तव में मिट्टी का ठीक प्रकार से जमना उसके कणों के आकार पर बहुत कुछ निर्भर होता है। कणों के आकार-ज्ञान से मिट्टी ठीक तरह से जमाई जा सकती है। कणों के उपयुक्त आकार को जानने में भी रसायनज्ञ सहायक होता है।

(५) मिट्टी की कुछ अशुद्धियों को दूर करने से उसकी सुदरता बढ़ जाती है। रसायनज्ञ बता सकता है कि उनको दूर करना चाहिए या नहीं। यदि उनके दूर करने से मजबूती पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता तो रसायनज्ञ उनके दूर करने की विधि भी बता सकते हैं।

(६) मिट्टी के उपर्युक्त रासायनिक ज्ञानों के आधार पर अच्छी मिट्टी तैयार की जाती है और फिर रसायनज्ञों द्वारा ज्ञात उपयुक्त तापक्रमों पर उनको पकाया जाता है।

अच्छी ईंटों के बनाने में इन सब बातों से रसायनज्ञ के कार्य पर प्रकाश पड़ता है। ईंट बनाने वाले साधारणतः इन सब बातों को ध्यान में नहीं रखते, फलतः उनके बनाये ईंट उतने सुदर और मजबूत नहीं होते जितना उनको होना चाहिए। विदेशों में तो हर बड़े भट्ठे के साथ इन्हीं सब बातों के बताने के लिए रसायन का विशेषज्ञ होता है। भारत में भी इस प्रकार के कार्य की बड़ी आवश्यकता होती है।

मिट्टी के रासायनिक ज्ञान से टाइल, चीनी के बर्तन, पोर्सिलेन आदि के बनाने में बड़ी सहायता मिलती है। साधारणतः इन पदार्थों के बनाने में कैथोलीन, फ्लेडस्पार्, फिल्ट, कंकड, मैगनासाइट आदि पदार्थों का उपयोग होता है। किन-किन पदार्थों को कितनी मात्रा में

होना चाहिए, यह बताना रसायनज्ञ का कार्य है। सफ़ेद मिट्टी से बने पदार्थ में चमक लाने के लिए इन चीजों को ऐसे घोल में डुबाना पड़ता है जिससे वह घोल इन चीजों में इतनी अच्छी तरह से चिपक जाय कि आसानी से न छूट सके। इस घोल को इस प्रकार का भी होना चाहिए जिससे रंगीन टाइलों अथवा चीनी के बर्तनों का रंग न निकल सके। इन सब पदार्थों के जानने में रसायन के ज्ञान की आवश्यकता पड़ती है।

सीमेंट

स्टील के ढाँचे में ईट भर करके उसके ऊपर सीमेंट लगाने की आवश्यकता पड़ती है। सीमेंट अंग्रेजी का शब्द है जिसके अर्थ होते हैं जोड़ना। सीमेंट का आजकल प्रायः सब पक्के मकानों में उपयोग होता है। इसमें साधारणतः चूना, बालू और अल्यूमिना होते हैं। सीमेंट को अधिकतम उपयोगी बनाने के लिए इनकी मात्राओं का निर्धारण, पानी की मात्रा को नियंत्रित करके सीमेंट को मकान में प्रयुक्त होने से पहले जमने से बचाना और इसके महीन ज़रों के आकार को ठीक रखना रसायनज्ञ के कार्य हैं।

साधारणतः दो प्रकार की सीमेंट का उपयोग किया जाता है। ऊपर बताई गई विधि से बनाई गई सीमेंट को पोर्टलैंड सीमेंट कहते हैं। इसका ही अधिकतर मकान बनाने में उपयोग होता है। दूसरे प्रकार की सीमेंट मैगनीसियम आक्सीक्लोराइड सीमेंट कहलाती है। इसमें मैगनीसियम क्लोराइड के घोल को मैगनीसियम आक्साइड में मिलाया जाता है ; इन दोनों पदार्थों को ठीक अनुपात में मिलाने से अच्छी सीमेंट बनती है। इस प्रकार की सीमेंट का फ़र्श बनाने के लिए उपयोग किया जाता

हैं। अस्पतालों एवं बड़े दफ्तरों की इमारतों के फ़र्श इसी प्रकार की सीमेंट से बनाये जाते हैं।

प्लास्टर ऑफ़ पेरिस (जिप्सम) का भी आजकल इमारतों के बनाने में प्रयोग होने लगा है। यह रसायनज्ञों द्वारा निर्मित एक सक्रिय पाउडर है। इसमें एक विशेषता होती है। पानी में सना हुआ पाउडर फैलने लगता है। इसलिए ढाँचे आदि बनाने में इसका प्रचुरता से उपयोग किया जाता है।

सीमेंट और जिप्सम में रंग और ऐम्बेस्टास (सिलिकॉन का प्रकृति में बहुलता से पाया जानेवाला यौगिक) मिलाकर आजकल सस्ते और बड़े सुंदर छतों पर छानेवाले चौखटे बनाये जाते हैं। गर्म देशों में और विशेषतः भारत में इनका अधिकता में उपयोग होना चाहिए क्योंकि इनसे गर्मी कम छन पाती है। ऐम्बेस्टास के स्थान पर सन के फूस का भी उपयोग किया जा सकता है।

शीशा

पुराने मकानों में खिड़कियों की कमी से प्रकाश कम रहता था, क्योंकि ऐसा कोई पदार्थ मालूम न था जिससे हवा को रोका जा सके और प्रकाश को प्रवेश करने दिया जाय। शीशे के आविष्कार ने इस समस्या को हल कर दिया। शीशे के अध्याय में इसका विस्तारपूर्वक वर्णन किया जायगा।

रबड़

आधुनिक मकानों में कभी-कभी ऐसी व्यवस्था करने की आवश्यकता पड़ती है जिससे सड़क पर चलनेवाली गाड़ियों की मकान

तक पहुँचनेवाली आवाज को कम किया जा सके। रबड़ के प्रयोग से यह सम्भव है। अभी तो इसका प्रयोग कम होता है। रबड़ के फ़र्श शायद ही आपने देखे हों। इसकी बनी खिडकियाँ भी बड़ी सुंदर होती हैं। ठंडे देशों में इनका काफ़ी प्रयोग किया जाता है। भारत-ऐसे गर्म देशों में तो रबड़ के उपयोग से मकान गरमियों में बुरी तरह से तपने लगेंगे।

इस प्रकार हम देखते हैं कि अच्छे, बड़े, मजबूत, सुंदर एवं सुखद मकानों को बनाने में रसायनज्ञ ने काफ़ी कार्य किया है। स्टील और धातुओं के ढाँचे से मकानों को बड़ा बनाया जा सकता है; ईंटों के प्रयोग से मकान अच्छे हो सकते हैं; सीमेन्ट के उपयोग से उनमें मजबूती आ सकती है; रंगीन टाइलों के उपयोग से उनको सुंदर बनाया जा सकता है; शीशे और रबड़ आदि पदार्थों के उपयोग से वे और अधिक सुंदर बन सकते हैं। रसायनज्ञ का कार्य कितना विस्तृत है !

धातु

[धातु का महत्त्व; खनिज; धातुओं को पृथक् करना; धातुओं को शुद्धि; मुलम्मा चढ़ाना; अधिक मात्रा में धातु की उत्पत्ति; विविध प्रकार की धातुएँ]

धातु का महत्त्व

जीवन में धातु के महत्त्व पर क्या कभी आपने विचार किया है? दिनचर्या के कुछ घंटों से ही धातु की उपयोगिताओं से परिचय हो जायगा। धातु की बनी एलार्म घड़ी से नींद खुलती है, जाग करके बटन दबाते ही प्रकाश होता है। विद्युत्-धारा धातु के तारों से प्रवाहित होकर बल्ब में जाती है। बल्ब में धातु के तार के जगमगाने से प्रकाश होता है। हजामत बनाने के लिए धातु के बने रेज्जर और ब्लेड से काम लिया जाता है। नाश्ता धातु के बने स्टोव पर पकता है। चाय का पानी एलूमिनियम के केटिल में गरम होता है। प्रातःकाल पढ़ा जानेवाला अखबार विशेष धातु के टाइप से बनकर तैयार होता है। भोजन धातु के बर्तनों में खाया जाता है। सवारी के लिए धातु से बनी साइकिल, बस अथवा मोटर का प्रयोग होता है। यदि साइकिल में हवा कम है तो धातु के बने पम्प से साइकिल में हवा भरी जाती है। और ये सब सुविधाएँ धातु के बने पैसों से ही तो मिलती हैं।

खनिज

धातुओं के जिस रूप से आप परिचित हैं वे इस रूप में प्रकृति में नहीं पाये जाते। धातुएँ साधारणतः स्वतंत्र अवस्था में नहीं, किन्तु मिश्रित अवस्था में, योगिकरूप में, प्राप्त होती हैं। उनके प्राकृतिक रूप को खनिज कहते हैं। इन खनिजों (Ores) में धातुओं को पहिचानना और फिर उनको शुद्धरूप में प्राप्त करना रसायनज्ञ का एक अत्यंत महत्वपूर्ण कार्य है।

कुछ विघेप धातुओं के मुख्य खनिज, जिनसे वे निकाली जाती हैं, नीचे लिखे हुए हैं:—

धातु	खनिज	धातु का योगिक रूप (रासायनिक नाम)
एलूमिनियम	बाक्साइट	जलयुक्त (Hydrated) एलूमिनियम आक्साइड
ताँबा (कॉपर)	कॉपर पाइराइट्स	कॉपर आयरन सल्फाइड
लोहा	हीमाटाइट	आयरन आक्साइड
सीसा (लेड)	गैलीना	लेड सल्फाइड
मैगनीसियम	मैगनासाइट	मैगनीसियम कार्बोनेट
पारा	सिनाबार	मरकरी सल्फाइड
निकिल	पेंटलैड'इट	निकिल आयरन सल्फाइड
चाँदी	अरजेटाइट	सिल्वर सल्फाइड
टिन	कैसीटराइट	टिन ड्राई आक्साइड
जस्ता	ज़िंक ब्लेंड	ज़िंक सल्फाइड

धातुओं और खनिजों के भौतिक गुणों में पर्याप्त अंतर होता है। कॉपर पाइराइट काली होती है, ताँबा भूरे लाल रंग का। मिनाबार काली और ठोस होती है, किन्तु पारा चमकता हुआ सफेद द्रव है। चाँदी का चमकता सफेद रंग अरजेंटाइट में नहीं पाया जाता, वह तो काली होती है। इसलिए खनिजों के भौतिक गुणों से उनमें पाई जाने वाली धातुओं को नहीं पहिचाना जा सकता। उनको पहिचानने के लिए रासायनिक विश्लेषण की आवश्यकता पड़ती है। जड़-जगत् के नाटक को समझनेवाले रसायन-ज्ञान का यह एक मुख्य लाभ है।

धातुओं को पृथक् करना

धातुओं को पहिचानने के बाद उनको निकालने के लिए रसायनज्ञ कम खर्चवाली सरल विधियों को बताते हैं। मूलरूप में धातुओं को पाने के लिए आमतौर से निम्नलिखित विधि से कार्य किया जाता है:—

१. खुदाई—संसार के जिन स्थानों पर खनिज पाये जाते हैं, वहाँ खुदाई की आवश्यकता पड़ती है। खुदाई बड़ा कठिन कार्य है। कुछ खान ८००० फीट तक गहरी होती है। १२००० फीट तक नीचे खुदाई करने के लिए योजनाएँ बनाई जा रही हैं। धरातल के इतने फीट नीचे तक जा करके मजदूर कैसे काम करते होंगे! हवा और रोशनी की उन्हें कितनी कमी पड़ती होगी!

२. खनिज को मिट्टी-कूड़े से अलग करना—खनिजों में अनेक अनावश्यक पदार्थ लिपटे रहते हैं। इनको जितना ही अलग किया जा सके, उतना ही अच्छा है, नहीं तो खनिजों से धातु निकालने के लिए

जिन रासायनिक पदार्थों का उपयोग करना पड़ता है, उनके अधिक उपयोग से धातु की कीमत बढ़ जायगी। कुछ खनिजों को पानी से धोना पड़ता है, कुछ भारी खनिजों में हवा फूँक करके मिट्टी अलग की जा सकती है, कुछ खनिजों को फेने में तैराकर हलकी और भारी वस्तुओं को अलग किया जा सकता है, कुछ चुम्बकीय खनिजों को चुम्बक से अलग किया जाता है। खनिजों को शुद्ध करने की विधि प्रायः भौतिक होती है।

३. खनिज से धातु के यौगिकों को तैयार करना—सोना महीन ज़रों के रूप में ३००० वर्ष पहले ज्ञात था, किन्तु उसके ज़रों को व्यापारिक विधि से अलग नहीं किया जा सका। आधुनिक रसायनज्ञ जब सोडियम सायनाइड के घोल में इन ज़रों को चनाते हैं तो सोना घोल-अवस्था में आ जाता है। यानी विशेष रासायनिक पदार्थों के उपयोग से धातुओं को उनके ऐसे यौगिक में बदल लिया जा सकता है, जिनसे वे आसानी से निकल सकें।

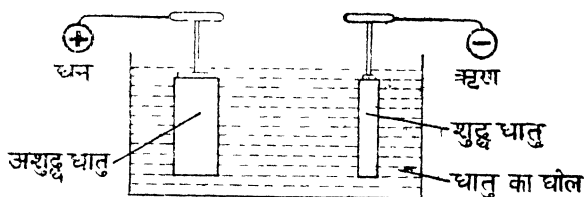
४. धातु के यौगिक से धातु को प्राप्त करना—जब धातु की आक्साइड कोयले के साथ उपयुक्त तापक्रमों पर गरम की जाती है तो धातु बनती है। जब सोने, चाँदी के सोडियम सायनाइड के घोल को सोडियम के साथ गरम किया जाता है तो सोना, चाँदी धातुरूप में प्राप्त होती है। कुछ धातुओं की सल्फ़ाइड को विशेष अवस्थाओं में गरम करने से धातु प्राप्त होती है। रसायनज्ञ धातु के यौगिकों की परीक्षा करके धातु के निकालने की सरल विधि बना सकते हैं।

धातुओं की शुद्धि

उपयुक्त विधियों से धातु अशुद्ध अवस्था में प्राप्त होती है। उसको

पूर्णरूप से शुद्ध करने की आवश्यकता पड़ती है। ताँबे में यदि ०.१% भी अशुद्धियाँ हों तो उससे बिजली को प्रवाहित नहीं किया जा सकता। अशुद्ध ताँबे के बने तारों से बिजली प्रवाहित करने के लिए ताँबे के मोटे तारों का प्रयोग करना होगा, इससे ताँबे का खर्च अधिक होगा और बिजली-सम्बन्धी अनेक मशीनों को और भारी बनाना होगा।

धातुओं को शुद्ध करने के लिए रसायनज्ञ बिजली का उपयोग करते हैं।



चित्र ४. विद्युत्-विश्लेषण

धातुओं के रासायनिक घोल में दो तार डाल दिये जाते हैं। एक तार ऋण विद्युत् (—) का और दूसरा धनात्मक विद्युत् (+) का होता है। ऋण तार को शुद्ध धातु के टुकड़े से जोड़ देते हैं, अशुद्ध धातु को धनात्मक तार से। बिजली प्रवाहित करने पर अशुद्ध धातु से धातु शुद्ध होकर ऋण तारवाले स्तम्भ पर जमा होने लगती है। इस प्रकार धातुओं को बिजली से शुद्ध करने के लिए निम्नलिखित बातों को जानना चाहिए:—

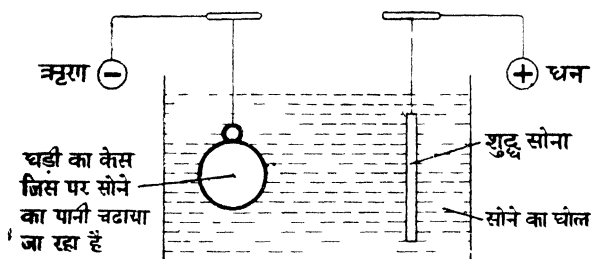
१. ठीक धातु के घोल को तैयार करना,
२. बिजली की ठीक मात्रा को प्रवाहित करना और
३. सम्पूर्ण प्रक्रिया को उचित तापक्रम पर चलाना।

ताँबे में तूतिये का घोल प्रयुक्त होता है। चाँदी, सोने में सोडियम सायनाइड का घोल प्रयुक्त होता है।

खनिजा से धातुओं को पृथक् करने के लिए रसायनज्ञ उपर्युक्त विधियों का प्रयोग करते हैं। तत्पश्चात् धातु जीवन-व्यवहार के लिए उपयोगी बनती है।

मुलम्मा चढ़ाना

बिजली से जिम प्रकार धातु शुद्ध की जाती है, उसी विधि से



चित्र ५. मुलम्मा चढ़ाना

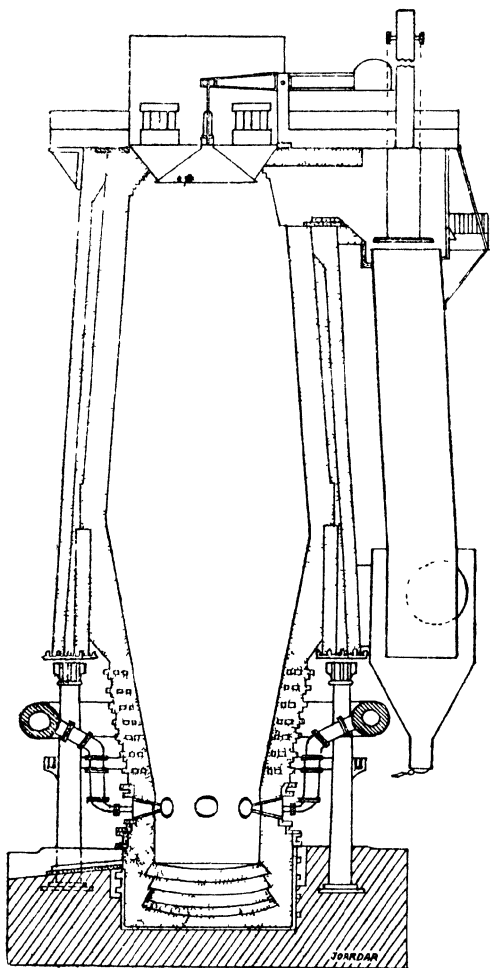
मुलम्मा भी चढ़ाया जाता है। सोने और चाँदी की वस्तुएँ देर में खराब होती हैं, उनमें चमक होती है और इसलिए उनका अधिक उपयोग

किया जाता है। किन्तु ये धातुएँ महँगी है। यदि इन चीजों को केवल सोने या चाँदी से ही बनाया जाय तो इनकी कीमत बढ़ जायगी। इसलिए अन्य धातुओं की चीजें बना करके सोने, चाँदी आदि के मुलम्मे की आवश्यकता पड़ती है।

धातु के घोल में ऋण और धनात्मक तार छोड़े जाते हैं। शुद्ध धातु को धनात्मक तार से जोड़ दिया जाता है। जिस वस्तु पर मुलम्मा चढ़ाया जाता है, उसे ऋण तार से जोड़ दिया जाता है; अब जब बिजली प्रवाहित की जाती है तो धातु की महीन पतं ऋण तार से जुड़ी वस्तु पर चढ़ जाती है। इसी को मुलम्मा कहते हैं।

अधिक मात्रा में धातु की उत्पत्ति

धातुओं की इतनी अधिक मात्रा में आवश्यकता पड़ती है कि रसायनज्ञों को शीघ्र और शुद्ध धातु उत्पन्न करने के लिए सुगम रासायनिक विधियों को जानना पड़ता है। ब्लास्ट फ़र्नेस से आजकल लोहा बनाया जाता है। यह धुआँ उगलती हुई लगभग १०० फ़ीट ऊँची विशेष प्रकार की भट्ठी है। दिन में चार-पाँच बार पिघला हुआ लोहा इसमें से निकलता है। इसके नीचे लगे नलों से पिघला हुआ लोहा जलरूप में बहता है। इस प्रकार की एक बड़ी भट्ठी से दिन में लगभग १००० मन लोहा निकाला जाता है। इन भट्टियों को जलते हुए देखकर प्राकृतिक वस्तुओं को मनुष्य के लिए उपयोगी बनाने में रसायन का महत्त्व आँखों के सामने नाच जाता है। इतनी अधिक मात्रा में दिन-रात पिघला हुआ लोहा निकालनेवाली यह भट्ठी रसायनज्ञों की विजय-पताका है।



चित्र ६. अधिक मात्रा में लोहे के उत्पादन के लिए भट्ठी—ब्लास्ट फ़र्नेस

विविध प्रकार की धातुएँ

उपर्युक्त कठिन विधियों से रसायनज्ञों ने अनेक प्रकार की धातुएँ बनाई है। उनमें से कुछ मुख्य धातुओं का वर्णन नीचे किया गया है। रसायनज्ञ के दृष्टिकोण से केवल चमकते हुए भारी, ठोस पत्तों, तारों आदि में पीटे जा सकनेवाले पदार्थ ही धातु नहीं है। जितने भी तत्त्वों को ऋण विद्युत्वाले तारों पर इकट्ठा किया जा सका है, वे रसायनज्ञ की परिभाषा के अनुसार धातु कहलाते हैं।

लोह—यह सबसे अधिक महत्वपूर्ण धातु है। किसी ने ठीक ही कहा है कि लोह से बनी इस्पात की मात्रा से एक देश की प्रगति जानी जा सकती है। जिस देश में जितनी अधिक इस्पात उत्पन्न की जाती है, वह देश आर्थिक दृष्टिकोण से उतना ही अधिक उन्नत है।

एलूमिनियम—यह हल्की, चमकती हुई धातु है। इसमें लोहे की भाँति जंग नहीं लगता। इसलिए इस धातु का उपयोग बर्तनों के बनाने में होता है।

टाइटैनियम—यह लोहे के समान मजबूत और अलूमिनियम के समान हल्की होती है। इसमें भी जंग नहीं लगता। इस धातु को शुद्ध रूप में बनाने में अनेक कठिनाइयाँ हैं, इसलिए यह काफ़ी महँगी है। जब यह सस्ती बनाई जा सकेगी तो लोहे के समान इसका उपयोग होगा।

ताँबा—इसके बर्तनों का बड़े प्राचीन काल से उपयोग होता रहा है। आजकल इसके शुद्धतम रूप का बिजली के तारों के रूप में प्रयोग होने लगा है।

जस्ता—यह सब प्रकार की बैटरियों में प्रयुक्त होनेवाली धातु है।

सीसा--टाइप बनाने में इसका काफ़ी प्रयोग होता है।

टिन--यह टीन से भिन्न है। टीन धातु-संकर है और टिन धातु। इसका बर्तनों की चद्दर के रूप में प्रयोग किया जाता है। इसमें रखे जानेवाले खाद्य पदार्थ खराब नहीं होते।

निकिल--इस धातु की सर्वतोमुखी प्रतिभा है। इस्पातों के बनाने में, अनेक उपयोगी धातु-संकरों के बनाने में, प्रयोगशाला में इसका प्रचुरता से प्रयोग होता है।

क्रोमियम--इससे बने धातु-संकरों में धब्बा नहीं लगता ; अतः रसायनज्ञों के लिए यह महत्त्वपूर्ण धातु है।

टंगस्टन--इससे बने धातु-संकर बड़े मजबूत हो जाते हैं। कटाई की मशीनों में बने इस्पातों के बनाने में इसका सबसे अधिक उपयोग होता है।

मैगनीज़ और वैनेडियम--इन धातुओं के मिलाने से धातु-संकर शुद्ध हो जाते हैं।

कोबाल्ट और मॉलिब्डेनम--इन धातुओं के मिलाने से धातुओं में नवीन गुण उत्पन्न हो जाते हैं।

कैडमियम--इस धातु पर मौसम का कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

बेरिलियम--यह भविष्य में उपयुक्त होनेवाली महत्त्वपूर्ण धातु है। क्रीमती पत्थरों में इसके ही यौगिक पाये जाते हैं।

सोना और चाँदी--ये अमूल्य धातुएँ हैं। इसके सिक्के बनाये जाते हैं।

प्लैटिनम--यह रसायनज्ञ की प्रिय धातु है। इस पर रासायनिक प्रतिक्रियाएँ बिल्कुल नहीं होतीं।

सोडियम, पोटैशियम, कैल्सियम और लिथियम--ये क्रियाशील धातुएँ हैं।

पारा—यह द्रव धातु है।

रेडियम—यह जीवन-रक्षक धातु है। अस्पतालों में इसका काफ़ी प्रयोग होने लगा है।

यूरेनियम—इस धातु से परमाणु-बम सम्बन्धी परीक्षाएँ की जाती हैं।

प्लूटोनियम—यह रसायनज्ञों द्वारा नवनिर्मित धातु है। यह भयानक है क्योंकि परमाणु-बम एवं उद्जन-बम बनाने में इसका प्रयोग होता है।

इन धातुओं के संक्षिप्त विवरण से रसायनज्ञों के विविध कार्यों पर प्रकाश पड़ता है। प्रत्येक विशेष कार्य के लिए विशेष गुणोंवाली धातु रसायनज्ञ को ज्ञात है। इन धातुओं के विस्तृत ज्ञान से संसार का कितना लाभ होता है !

धातु-संकर (Alloy)

[धातु-संकरों का बनाना ; धातु-संकरों के भौतिक गुण ; उत्पादन]

ताँबे को छोड़कर लगभग सभी धातुएँ शुद्ध अवस्था में नहीं प्रयुक्त होती, उनके धातु-संकर बनाये जाते हैं। ताँबे और टिन के मिश्रण को जब एक साथ पिघलाया जाता है तो एक ऐसी मिश्रित धातु बनती है जिसके गुण उसके बनानेवाली धातुओं से भिन्न होते हैं। काँसे का जहाँ पर प्रयोग होता है वहाँ न ताँबे से काम चल सकता है और न टिन से। इसी प्रकार अन्य धातु-संकरों में भी उसमें प्रयुक्त धातुओं के अतिरिक्त अन्य विचित्र गुण होते हैं। फलतः धातु-संकरों का बड़ा महत्त्व है। वस्तुतः आधुनिक युग धातुओं का नहीं, प्रत्युत धातु-संकरों का है।

धातु-संकरों का बनाना

इनको बनाने के लिए विभिन्न धातुओं का एक साथ पिघलाना होता है। विभिन्न अनुपातों में धातुओं को पिघलाने से विभिन्न गुणोवाले धातु-संकर बनते हैं। फलतः रसायनज्ञों को धातुओं के निश्चित अनुपातों को जानना पड़ता है।

कभी-कभी धातु-संकरों का बनाना इतना सरल नहीं होता। ताँबे और जस्ते का मुख्य धातु-संकर पीतल है। ताँबा 1053° श० पर पिघलता है किन्तु इतने ऊँचे तापक्रम पर जस्ता उबलने लगता है। यदि ताँबे और जस्ते को साथ-साथ गरम किया जाय तो ताँबे के पिघलने के पहिले ही जस्ता उबल करके गायब हो जाता है। इस नुक़सान से बचने के लिए पहले ताँबे को पिघलाया जाता है और फिर उसमें जस्ते के टुकड़े छोड़े जाते हैं। किन्तु थोड़े-से जस्ते का नुक़सान तो होता ही है।

और भी अनेक जटिल समस्याएँ रसायनज्ञ को सुलझाना होती हैं। एक उपयोगी हलके धातु-संकर में ८% ताँबा होता है और ९२% एलुमिनियम। एलुमिनियम 660° श० पर, यानी ताँबे से 123° श० तापक्रम पहले ही, पिघल जाता है। पीतल की भाँति, ताँबे को पिघला कर उसमें जस्ता नहीं छोड़ा जा सकता क्योंकि डाले जानेवाले अलुमिनियम की मात्रा पिघले हुए ताँबे की मात्रा से कहीं अधिक है। इसके लिए पहले ऐसा धातु-संकर बनाना पड़ता है, जिसको पिघलाकर पुनः एलुमिनियम मिलाने से उपयुक्त धातु-संकर बन सके। इन व्यावहारिक कठिनाइयों को जान करके उन पर विजय प्राप्त करने के लिए सरल, सुगम विधियों को बताना रसायन का कार्य है।

धातु-संकरों के भौतिक गुण

धातु-संकरों में निम्नलिखित भौतिक गुणों को नियंत्रित किया जा सकता है:—

१. मजबूती और खिंचाव शक्ति,

२. लचकीलापन और सख्ती,
३. आघात-वर्धनशीलता,
४. शीघ्र अथवा देर में पिघलना,
५. तापक्रम का प्रभाव,
६. उपयुक्त घनत्व,
७. जंग न लगना,
८. विद्युत्-धारा का प्रवाह, एवं
९. रंग और सुन्दरता।

इन्हीं गुणों के नियंत्रण से धातु-संकर अधिक उपयोगी बनाये जा सके हैं।

जिन स्थानों पर इस्पातों का प्रयोग किया जाता है वहाँ शुद्ध लोहे से काम नहीं चल सकता। इस्पातों में लोहे की अपेक्षा मजबूती और खिंचाव-शक्ति अधिक होती है। रसायनज्ञों ने लोहे में मैंगनीज, क्रोमियम और टंगस्टन मिला करके इस्पातों को अधिक मजबूत बनाया है, निकिल, वैनेडियम और मॉलिब्डिनम मिला करके उनमें उचित मात्रा में लचकीलापन और सख्ती उत्पन्न की है; आस्मियम और इरीडियम मिलाने से इस्पात को अधिक सख्त बनाया है। इरीडियम धातु-संकर की बनी फाउन्टेनपेन की निबों से आपका परिचय होगा। कलम की निब पर थोड़ी-सी लगी धातु-संकर का विंदु लगातार कागज से रगड़ खाने पर भी नहीं घिसता। तीन-चार धातुओं को एक साथ मिलाने से धातु-संकर में इच्छित प्रकार की आघात-वर्धनशीलता को भी उत्पन्न किया जा सकता है।

कभी-कभी जल्दी पिघलनेवाले धातु-संकरों की आवश्यकता पड़ती है। बिजली का फ्यूज बनानेवाला तार इसका अच्छा उदाहरण है।

जब तारों में अधिक विद्युत् प्रवाहित होने लगती है तो तार अधिक गर्म हो जाते हैं। इस गर्मी से प्यूज-वायर पिघल जाता है और बिजली चली जाती है। यदि बिजली न जाती तो अधिक विद्युत् के प्रवाहित होने से अनेक प्रकार के नुकसान हो सकते थे। स्वतः नियंत्रित मशीनों के उत्पादन के लिए इस प्रकार के धातु-संकरों की बड़ी आवश्यकता पड़ती है। रसायनज्ञों ने बिस्मथ, टिन और कैडमियम धातुओं के प्रयोग से ऐसे तार बनाये हैं।

साधारण रीति से तापक्रम के प्रभाव से धातु घटती-बढ़ती है। घड़ी के पेंडुलम के लिए ऐसी धातु-संकर की आवश्यकता पड़ती है जिस पर तापक्रम का कोई प्रभाव न हो, नहीं तो गर्मियों में पेंडुलम की लम्बाई बढ़ जाने पर या सर्दी में घट जाने पर घड़ी की चाल में फर्क होगा जायगा। निकिल और लौह के धातु-संकर (इनवार) ने इस समस्या को हल कर दिया है। बिजली के बल्ब बनाने में ऐसे धातु-संकर का प्रयोग करना पड़ता था जो तापक्रम के बढ़ने से उतना ही बढ़े जितना शीशा बढ़ता है, नहीं तो बल्ब थोड़ी देर जलने के बाद चिटख जा सकता है। पहले प्लैटिनम धातु का प्रयोग होता था। किन्तु यह बड़ी महँगी होती थी, इसलिए बल्ब में इसका प्रयोग व्यापारिक दृष्टिकोण से सम्भव न था। रसायनज्ञों ने इनवार में निकिल के अनुपात को बढ़ा करके प्लैटीनाइट बनाया और उससे यह समस्या हल हो गई। ताँबे, चाँदी, कैडमियम आदि धातुओं के बने धातु-संकरों का दाँतों के लिए प्रयोग होता है, क्योंकि ठंडक अथवा गर्मी से इसके बने ढाँचे ढीले अथवा कसे नहीं हो जाते।

वायुयान के बनाने में ऐसी धातु-संकर की आवश्यकता थी जो लोहे के समान मजबूत हो, किन्तु एलूमिनियम के समान हलकी।

मैगनेलियम ने यह कार्य पूरा किया। इसमें मैगनीसियम और एलुमिनियम दो धातुएँ होती हैं। दोनों हलकी होती हैं, किन्तु दोनों के मिलने से बड़ी मजबूत धातु-संकर बनती है। इस प्रकार धातु-संकरों के ज्ञान से इच्छित प्रकार के घनत्ववाली धातुओं को बनाया जा सकता है।

डाक्टरों को ऑपरेशन के लिए इस प्रकार के औजारों की आवश्यकता थी जिसमें जंग न लगे। स्टेनलेस स्टील का नाम आपने सुना होगा। इस प्रकार के धातु-संकरों को बनाने के लिए कोबाल्ट, क्रोमियम, लोहे और टंगस्टन का प्रयोग होता है। अधिक कीमती औजारों में प्लैटिनम और इराडियम धातुएँ भी मिलाना पड़ती हैं।

मशीनों में ऐसे प्रकार की धातु के उपयोग की आवश्यकता पड़ती है जिसमें से बिजली न प्रवाहित हो सके। रूहोटोनियम धातु-संकर, जिसमें रूहोटोनियम, पलैडियम और साना हाता है, इन कार्यों के लिए रसायनज्ञ की उपयुक्त देन है।

शुद्ध सोने के बने ज्वर कम मजबूत होते हैं और उनका रंग भी चमकीला नहीं होता, किन्तु जब ताँबे को थोड़ी मात्रा मिला दी जाती है तो जेवर अधिक मजबूत और चमकीले सुनहरे रंग के हो जाते हैं।

इस्पात

लोह और इस्पात का इतना अधिक महत्त्व है कि हाल ही में भारत की केंद्रीय सरकार ने इसके लिए एक नया विभाग बनाया है। साधारण इस्पात में लोहे के साथ कोयला मिला हाता है। शुद्ध लोहा बड़ा मुलायम होता है। जड़ जगत् का कितना विचित्र विधान है!

लचकीले लोहे में १-२ % तक भुरभुरा कोयला मिलाने से मजबूत इस्पात बनता है। रसायनज्ञों ने ज्ञात किया कि इतनी थोड़ी मात्रा में ही कोयला लोहे के परमाणुओं की व्यवस्था को बदल देता है। बदली हुई व्यवस्था से लौह अधिक मजबूत हो जाता है।

कोयले के अतिरिक्त इस्पातों में अन्य धातुओं का भी प्रयोग होता है। २० से ३० % तक निकिल मिलाने से इस्पात में चुम्बकीय गुण बिलकुल नहीं रहते। ३०-४६ % तक निकिल मिलाने से तापक्रम के प्रभाव से इच्छित मात्रा में फैलनेवाले इस्पात बनाये जा सकते हैं। अधिक निकिल के उपयोग से इस्पात अधिक मजबूत बनता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि धातु-संकर में मिलाई जानेवाली धातु के ठीक अनुपात को जानना अत्यंत आवश्यक है। रसायनज्ञ इस कार्य में सहायता करते हैं।

मैंगनीज मिलाने से इस्पात बड़े मजबूत हो जाते हैं। ऐसे ही इस्पात की बनी अलमारियों को तोड़ने में चोर रसायन का लोहा मानते हैं।

७ % तक क्रोमियम मिलाने से जो इस्पात बनती है, उससे हथियार बनाये जाते हैं। १७-१८ % तक क्रोमियम मिलाने से स्टेनलेस स्टील बनती है।

४ % तक टंग्स्टन मिलाने से इस्पात में लचक रहती है। इसके स्प्रिंग बनाये जा सकते हैं। ७-८ % तक टंग्स्टन मिलाने से काटने वाली बड़ी-बड़ी मशीनें बनाई जा सकती हैं।

इस्पात में मॉलिब्डिनम मिलाने से अच्छे चुम्बक बनते हैं। २ % सिलिकॉन मिलाने से इस्पात में धक्का लगने से कोई प्रभाव नहीं होता। इंजन के पिस्टन आदि इसी से बनाये जाते हैं। रेल की पटरियों के

बनाने में प्रयुक्त इस्पातों में टाइटेनियम मिलाया जाता है। वैनेडियम मिलाने से धातु-संकर में अधिक आघात-वर्धनशीलता आ जाती है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि रसायनज्ञ ने प्रकृति में पाये जानेवाले असंख्य खनिजों के रासायनिक विश्लेषण से अनेक धातुओं को पहिचाना ; उनको औद्योगिकरूप से बनाने की सरल विधियों को बताया; विभिन्न धातुओं के संयोग से और उनकी मिलाई जानेवाली निश्चित मात्राओं को जान करके उपयोगी धातु-संकरों को बनाया। धातु-ज्ञान से जंगल में रहनेवाले हमारे पूर्वजों ने 'पशु-जगत्' पर ही विजय प्राप्त की थी, पर आधुनिक रसायनज्ञों ने इस ज्ञान में वृद्धि करके प्रकृति पर विजय प्राप्त करने की चेष्टा की है !

यात्रा

[मोटर; रेल; वायुयान; जलयान]

प्राचीन काल में यात्रा करना कितना कठिन था ! घोड़ों के उपयोग से अधिक-से-अधिक १० मील प्रति घंटे तक चला जा सकता था । इनको स्थान-स्थान पर बदलना पड़ता था । घोड़े आखिर जानवर ही तो है ! आधुनिक यानों में थकावट का कोई प्रश्न नहीं उठता क्योंकि उसमें थकनेवाले जीवों की शक्ति का नहीं, प्रत्युत् रसायनज्ञों द्वारा बनाये न थकनेवाले रासायनिक पदार्थों का उपयोग होता है । इन यानों के आविष्कार से संसार सिकुड़ा हुआ सा जान पड़ता है, क्योंकि यानों की शीघ्रगामी चालों से दूर-दूर स्थानों पर कम समय में पहुँचा जा सकता है । रेल और मोटर से ५०-६० मील प्रति घंटे के हिसाब से चला जा सकता है और वायुयान से २००-२५० मील । अब तो लखनऊ में प्रातःकाल नाश्ता करके यदि वायुयान से यात्रा आरम्भ की जाय तो दिल्ली में दोपहर का भोजन किया जा सकता है । कितनी शीघ्र गति से चलनेवाले यानों का आविष्कार किया है विज्ञान ने ! रसायन ने इन यानों के बनाने में जो सहायता की है, उसके सम्बन्ध में यहाँ कुछ बतलाया जायगा ।

मोटर

न्यूयार्क में मोटरों की एक प्रदर्शनी हुई। रसायन ने मोटर के बनाने में जो भाग लिया है उसको मोटर के प्रत्येक भाग में लगी एक तस्ती से बताया गया। आपको सुनकर आश्चर्य होगा कि मोटर का कोई भी ऐसा भाग नहीं बचा जिसमें तस्ती लगाने की आवश्यकता न पड़ी हो।

मोटर का ढाँचा अच्छे इस्पात का बना जाता है; इंजन विभिन्न धातु-संकरों का। पिस्टन में बार-बार धक्के से न टूटनेवाले पदार्थ की आवश्यकता पड़ती है; मिलेंडर में दूसरे गुणोंवाले धातु की; गियर में एलुमिनियम और मैंगनीसियम के धातु-संकरों की आवश्यकता पड़ती है; छरों में जल्दी न घिसनेवाले धातु-संकरों का प्रयोग होता है; मोटर के दरवाजे के हैंडिल जस्ते के धातु-संकर के बने होते हैं; पेट्रोल का टैंक साधारणतः पीतल का बना होता है; और भी अनेक छोटे-छोटे भागों में विभिन्न गुणोंवाले धातु-संकरों की आवश्यकता होती है। विभिन्न प्रकार की धातुओं के गुणों का ध्यान में रखते हुए उपयुक्त धातु-संकरों को बनाने में रसायन का जो भाग रहता है, उसको तो बताया ही जा चुका है।

मोटर का चलाने के लिए पेट्रोल की आवश्यकता पड़ती है। प्रकृति में पाये जानेवाले पेट्रोल की सफ़ाई करके मोटर के उपयोग के लिए उसको उपयुक्त बनाना रसायनज्ञ का कार्य है। कभी-कभी इसमें एल्कोहल मिलाने की आवश्यकता होती है। यह देखा गया कि पेट्रोल के साथ शुद्ध स्प्रिट को ठीक से मिलाने में कठिनाई होती है। शुद्ध स्प्रिट में साधारण रीति से ६५% एल्कोहल होता है और लगभग ५%

पानी। रासायनिक विधियों से जब इस पानी को दूर कर दिया गया तो शुद्ध एल्कोहल को पेट्रोल के साथ सरलतापूर्वक मिलाया जा सका।

एल्कोहल मिले पेट्रोल में यदि आग लगाई जाय तो पेट्रोल के जलने की गति में बराबर अन्तर होता रहता है। मोटर में यदि इस पेट्रोल का उपयोग किया जाय तो चलानेवालों और ड्राइवर को परेशानी होगी, क्योंकि मोटर कभी जल्दी दौड़ेगी और कभी उसकी चाल बिलकुल कम हो जायगी। रसायनज्ञों द्वारा आविष्कृत लेड टेट्राइथाइल (Lead tetraethyl) नामक यौगिक के उपयोग से पेट्रोल को एक ही गति से जलनेवाला बनाया जा सका है। यह यौगिक बड़ी सूक्ष्म मात्राओं में प्रयुक्त होता है। तब भी इसका कितना महत्व है! रसायनज्ञों ने इसको बनाकर कितना उपकार किया है!

मोटर में प्रयुक्त रबड़ के टायरों के गुणों की ओर दृष्टिपात कीजिए। ५०-६० मील की रफ़्तार से बराबर चलते हुए पहिये के टायरों में प्रति घंटे कितनी रगड़ होती रहती है! पहले की मोटर चलानेवाले लोगों को टायरों के फटने का बड़ा भय लगा रहता था। किन्तु रसायनज्ञों ने रबड़ की परीक्षा करके यह बताया कि यदि रबड़ के पेड़ों से निकलनेवाले दूध को अमोनिया द्वारा संरक्षित बोतलों से टायर बनानेवाली फ़ैक्टरियों में लाया जाय तो टायर अधिक मजबूत बनाये जा सकते हैं। आजकल के मजबूत टायर रबड़ के विशेष रासायनिक ज्ञान से ही बने हैं।

मोटर के इंजनों को उत्तम अवस्था में रखने के लिए उसके भागों में तेल डालने की आवश्यकता पड़ती है। किसी भी तेल को डालने से यह काम नहीं हो सकता। तेल से रहनेवाली चिकनाहट को काफ़ी देर

तक रहना चाहिए; उसको इंजन के भागों में न जमना चाहिए और न पिघल करके बह जाना चाहिए; उसमें ऐसी अशुद्धियाँ न होनी चाहिए जिनसे इंजन के भाग खराब हो सकें। इन विशेष गुणोंवाले तेल को अच्छा रसायनज्ञ ही बना सकता है।

मोटर को चमकीला रखने के लिए उसके ऊपर ऐसे पेंट की आवश्यकता पड़ती है जिससे उसके ऊपर धूल का प्रभाव न हो, पानी से उसे धोने पर वह छूट न सके और गर्मी से पिघल न सके। इन सब समस्याओं का एक साथ हल करनेवाले पेंट का आविष्कार कुशल रसायनज्ञ ही कर सकता है।

रेल

रेल के डिब्बे विशेष प्रकार के पहियों पर आधारित होते हैं। इन पहियों में प्रयुक्त धातु-संकर विशेष प्रकार का होना चाहिए; इनके विभिन्न डिजाइन भी हो सकते हैं। पहले लगभग १७५ प्रकार के पहिये प्रयुक्त होते थे। इतनी अधिक संख्या में होने के कारण अच्छे-अच्छे पहियों का चुनना कठिन समस्या थी। रसायनज्ञों ने परीक्षा करके उपयुक्त पहियों को छाँट लिया। अब उनके द्वारा स्वीकृत पहिये ही बाजार में आते हैं, इसलिए डिब्बे बनानेवाले लोगों को चुनने में विशेष कठिनाई नहीं होती।

रेल की पटरियों के लिए अच्छे इस्पात के बनाने में रसायनज्ञ ने महत्वपूर्ण भाग लिया है। इनको कसी रखना भी एक कठिन समस्या है। केवल लकड़ी अथवा कंकरीट के उपयोग से ये कसी नहीं रह पातीं। दोनों पदार्थों का एक साथ प्रयोग करना होता है। किन्तु

लकड़ी के प्रयोग में एक नुकसान है। फफूंदी अथवा कीड़ों के आक्रमण से वह शीघ्र ही नष्ट हो जाती है और पटरियाँ ढीली पड़ जाती हैं। वायुशून्य स्थानों में इन लकड़ियों को रख करके उनमें से हवा निकाल ली जाती है और फिर ऐसे रासायनिक पदार्थों का लेप कर दिया जाता है, जिनसे ये जल्दी खराब न हों। भारत में पटरियों को कसे रखने में यदि इस प्रकार की लकड़ियों का उपयोग हो तो रेल के पटरियों से फिसलने की दुर्घटनाएँ कम हो जायँ।

साधारणतः रेल और मोटर के फ़र्श बनाने में रसायनज्ञों द्वारा बनाई हुई मजबूत, चमकीली, शीघ्र न घिसनेवाली सीमेंट का उपयोग होता है। इसमें मैगनीसियम ऑक्सीक्लोराइड वाली सीमेंट प्रयुक्त होती है। 'घर' के अध्याय में इस पर प्रकाश डाला जा चुका है।

रेल की लाइनों के बनाने में कभी-कभी बड़ी चट्टानों और पहाड़ों को तोड़ना पड़ता है। मजदूरों के लिए यह बड़ा कठिन कार्य है। रसायनज्ञों द्वारा बनाये डायनेमाइट आदि पदार्थों के प्रयोग से यह कार्य अपेक्षाकृत सरलता से किया जा सकता है।

रेलों के चलाने की सुविधा के लिए प्रकाश-घरों को बनाया जाता है। गाड़ी को रोकने के लिए लाल, अथवा चलती रखने के लिए हरी रोशनी की आवश्यकता पड़ती है। पहले जिन शीशों का प्रयोग किया जाता था, उनसे लाल अथवा हरी रोशनियों को पहिचानने में धोखा हो जाया करता था, क्योंकि इसमें उपयुक्त तालों (Lenses) द्वारा इस प्रकार का भ्रम सम्भव था। रसायनज्ञों ने सेलीनियम के उपयोग से ऐसे लेंसों को बनाया है, जिनसे सदैव हरी अथवा लाल रोशनी निकलती रहे। इन लेंसों से फेंकी हुई रोशनी को पहिचानने में यदि आप असमर्थ हैं तो दोष आपकी दृष्टि का है, लेंसों का नहीं।

आजकल तो बिजली की रेलों का आविष्कार हो गया है। बिजली की रेल भाप की शक्ति से नहीं, प्रत्युत् बिजली की शक्ति से चलाई जाती है। इसमें न तो भकभकाती भाप निकलती है और न कपड़े गन्दे करनेवाला धुआँ। शुद्ध ताँबे को बना करके बिजली को प्रवाहित करने के लिए रसायनज्ञ ने उत्तम पदार्थ बनाया है। बिजली की मशीनों को बनाने के लिए ग्रेफ़ाइट की बड़ी आवश्यकता होती है। प्राकृतिक ग्रेफ़ाइट में कार्बन के परमाणुओं का रचना एक प्रकार की नहीं होती, अतः बिजली की मशीनों में इसका उपयोग नहीं हो सकता। रसायनज्ञों ने इस कार्य के लिए उपयुक्त ग्रेफ़ाइट को बनाया है। प्रसिद्ध ऐचीसन-विधि से शुद्ध और रवेदार ग्रेफ़ाइट बनाई जा सकती है।

जहाँ बिजली का अधिक उपयोग होता है, वहाँ ऐसे पदार्थों की भी आवश्यकता रहती है जिनसे बिजली न प्रवाहित हो सके। विभिन्न स्थानों पर विभिन्न मजबूतवाले पदार्थों की आवश्यकता होती है। इन कार्यों के लिए उपयुक्त शीशे, पोर्सीलेन, कागज, तारों, धातु-संकरों आदि की आवश्यकता पड़ती है। रसायनज्ञों ने इन उपयुक्त पदार्थों का निर्माण किया है।

वायुयान

जब वायुयान न थ तब हवा से हलकी गैस भरे गुब्बारों का अधिक प्रयोग होता था। इनमें साधारणतः हाइड्रोजन गैस भरी जाती थी, क्योंकि उस समय यही सबसे हलकी गैस थी। किन्तु इसमें शोच ही आग लग सकती थी और इससे गुब्बारों के फूटने का बड़ा डर रहता था। हवा में सूक्ष्म मात्रा में हीलियम गैस पाई जाती है। यह हलकी और

अक्रियाशील होती है : आग लगने से यह जलती नहीं। इसके आविष्कार से गुब्बारे में उड़ना सुरक्षित बनाया जा सका।

गुब्बारों के बनाने में जिन पदार्थों का उपयोग होता था, उसमें से छन करके हलकी गैस निकल जाती थी। हलके, पर गैस न छनने देने वाले, रेशों का रसायनज्ञों ने आविष्कार किया। इससे बने कपड़ों का गुब्बारे के लिए अधिक अच्छा उपयोग हो सका।

वायुयान के बनाने में हलके, मजबूत धातु-संकर की आवश्यकता थी। मैंगनेलियम ने जिस प्रकार इस कार्य को पूरा किया, उस पर प्रकाश डाला जा चुका है।

अधिक ऊँचाई पर जब वायुयानों को ले जाया जाता है तो हवा के दबाव एवं आक्सीजन की कमी से जीवन कठिन हो जाता है। जीवन के लिए आवश्यक गैस (आक्सीजन) के प्रयोग एवं अनावश्यक जहरीली गैस (कार्बन-डाई-आक्साइड) को रासायनिक विधियों से हटाकर वायुयान-चालकों की रक्षा की जाती है।

जलयान

इनका अधिक भाग समुद्र के पानी में सदैव डूबा रहता है। साधारण जल में धातु के अधिक देर तक रहने से वह खराब हो जाती है। सामुद्रिक जल में तो खनिज पदार्थों की मात्रा और अधिक होती है; इसलिए धातु शीघ्र खराब होती है। फलतः जलयानों के बनाने में ऐसे धातु-संकरों की आवश्यकता है, जिन पर सामुद्रिक जल का कोई प्रभाव और उनको सदैव टकरानेवाली लहरों से विशेष क्षति न हो सके। रसायनज्ञों ने इस कार्य को पूरा किया है।

जलयान के जल में भीतर रहनेवाले भाग पर सामुद्रिक पशु सदैव आक्रमण करते रहते हैं। कुछ जानवरों में जलयानों को धीरे-धीरे काटने की क्षमता होती है; कुछ में धातु को गलाने की। यदि इन सबसे यानों की रक्षा न की जाय तो वे शीघ्र ही नष्ट हो जायेंगे। रसायनज्ञों ने ऐसे जहरीले रंगों को बनाया है जिनके लगाने से सामुद्रिक जानवर पास नहीं आते और जिनसे धातु की क्षति अपेक्षाकृत बहुत कम हो जाती है। सब प्रकार के उपयोगी पदार्थों के बनाने में रसायनज्ञ कितने कुशल हैं!

इस प्रकार हम देखते हैं कि विविध प्रकार के यानों को तेज चाल से चलाने के लिए, उनकी सुरक्षा के लिए, उनको मजबूत बनाने के लिए, अच्छे पदार्थों के उपयोग से उनको अच्छी दशा में रखने के लिए रसायनज्ञ ने अनेक उपयोगी पदार्थों को बनाया है। बिना रसायन के ज्ञान के आधुनिक यानों का बनाना कठिन हो जाता और उनकी तेज चाल सम्भव न हो पाती। अनेक शहरों, देशों एवं उनके रहनेवालों की जानकारी तथा उनसे मिलना-जुलना शीघ्रगामी यानों से ही सम्भव है। भौतिक सम्पर्कों के बढ़ाने में रसायन ने कितना कार्य किया है!

पत्र-पत्रिकाओं एवं पुस्तकों से मिलनेवाले मानसिक सम्पर्क की वृद्धि के लिए भी रसायन ने अनेक कार्य किये हैं। अगले अध्याय में इनका वर्णन किया जायगा।



मानसिक सम्पर्क

[कागज; कागज बनाना; स्याही; छापाखाना;
फोटोग्राफी]

साहित्य की सृष्टि और उसका प्रसार दोनों ही सभ्यता के विकास के लिए आवश्यक हैं। लेखक की प्रतिभा से जनता का लाभ तब ही होता है जब उसके महान् विचारों का प्रचार हो। यदि साहित्यिकों ने साहित्य की सृष्टि करके महान् विचारों को जन्म दिया है तो रसायन की सहायता से अच्छा कागज बनाया गया है; अच्छी स्याहियों का आविष्कार हुआ है; छापाखाने के लिए उपयुक्त पदार्थों को तैयार किया गया है; पुस्तकों के लिए सुन्दर चित्रों की छपाई की सुविधा के लिए उपयुक्त रासायनिक पदार्थों को बनाया गया है और इन सबकी सहायता से अधिक संख्या में पुस्तकें बनाकर महान् विचारों को घर-घर तक पहुँचाने की चेष्टा की गई है।

कागज

कागज का उपयोग क्रमशः बढ़ता जा रहा है। अमरीका के एक आदमी के उपयोग में आनेवाले कागज का औसत भार इस प्रकार बढ़ा है:—

वर्ष	एक आदमी द्वारा उपयुक्त कागज का भार
१८१०	१
१८१६	२
१८६६	२०
१८६६	५७
१९१४	११२
१९२६	२२०
१९५०	२५०

कागज बनाना

इस भाँति यह स्पष्ट होता है कि कागज का आधुनिक काल का उपयोग उन्नीसवीं शताब्दी के आरम्भ की तुलना में २५० गुना हो गया है। यदि प्राचीन विधियों से ही आजकल कागज बनाया जाता तो इतनी अधिक मात्रा में उसका उत्पादन सम्भव न था। इसके लिए आवश्यक है कि कागज के लिए लुगदी अच्छी बननी चाहिए जिससे उसको फैलाने में आसानी हो। लुगदी बनाने के लिए साधारणतः लकड़ी, चिड़ड़े, रद्दी कागज आदि का प्रयोग होता है। भली प्रकार से लुगदी बनाने के लिए इनके रेशों को काफ़ी महीन करना होता है। पहले यह कार्य उपयुक्त वस्तुओं को भिगोकर कूटने-पीसने आदि से होता था। इसमें विशेषतः दो प्रकार की त्रुटियाँ थीं—एक तो इसमें देर लगती थी और दूसरे लुगदी अच्छी प्रकार की न बन पाती थी। एक रसायनज्ञ ने देखा कि यदि इस काम के लिए क्षार और सल्फ़ाइट के घोल का प्रयोग किया जाय तो लुगदी गाढ़ी बन जाती थी। कूट-पीस करके जिन रेशों को

लुगदी में परिवर्तित नहीं किया जा सकता था, वे भी इस विधि से सरलता से लुगदी में परिवर्तित किये जा सके। इससे अच्छी लुगदी का बनाना सरल हो गया और उत्पादन की मात्रा बढ़ गई।

कागज में सफ़ेदी लाने के लिए लुगदी के रंग को उड़ाना पड़ता है। इसके लिए पहले लुगदी को हरी घास पर फैलाकर सूर्य-रोशनी में ४८ घंटे तक रखना होता था; परन्तु अब सल्फ़ाइट के धोल से बनाई गई लुगदी में रंग आमतौर से नष्ट हो जाते हैं। पूर्णरूप से उसको रंगविहीन करने के लिए लुगदी में क्लोरीन गैस चलाई जाती है; इसके पश्चात् लुगदी को धो करके क्षार सहित उसको उबाला जाता है। दुबारा धोने के बाद सोडियम हाइपोक्लोराइट पदार्थों की प्रतिक्रिया से रंग बिलकुल जाता रहता है। पानी से धोने पर लुगदी बिलकुल स्वच्छ और रंगहीन हो जाती है। जो कार्य पहले प्रकृति द्वारा अपूर्णरूप से देर में होता था, वह अब रसायन की सहायता से शीघ्र ही पूर्णरूप में हो जाता है। अब मशीनों की सहायता से कागज फैला लिया जाता है। रंगीन कागज बनाने के लिए रसायनज्ञों ने लुगदी में मिलाने योग्य उपयुक्त रंग भी बनाये हैं।

आजकल अनेक प्रकार के कागजों का उपयोग किया जाता है। अखबार में सस्ते मेल का कागज प्रयुक्त होता है। इसकी लुगदी के बनाने में सब सावधानियों को ध्यान में नहीं रखा जाता, क्योंकि इसमें अधिक उत्पादन की आवश्यकता होती है, सुन्दरता और टिकाऊपन की नहीं। पुस्तकों में प्रयुक्त कागज अधिक सफ़ेद और मजबूत होता है। पैकिंग में प्रयुक्त कागज अधिक कड़ा होता है। चित्रों के बनाने के लिए आर्ट पेपर का प्रयोग होता है। मिठाइयाँ आदि रखने के लिए घी न सोखनेवाले कागज की आवश्यकता होती है। इन विविध

प्रकार के कागजों के बनाने के लिए लुगदी में विभिन्न गुण उत्पन्न करने वाले रासायनिक पदार्थों के मिलाने की आवश्यकता होती है। थोड़ी ही मात्रा में इनके मिलाने से कागज के गुणों में काफ़ी अन्तर हो जाता है। हाल ही में पता लगा कि टाइटेनियम के यौगिकों को मिलाने से कागज अपारदर्शक और अधिक मजबूत हो जाता है; समय के प्रभाव से कागज में जो भुरभुरापन आ जाता है वह इस यौगिक मिले हुए कागज में नहीं आ पाता। इस प्रकार कागज को अच्छा बनाने में रसायनज्ञ बड़ा महत्वपूर्ण कार्य कर सकते हैं।

स्याही

कागज के साथ-साथ स्याही को भी अच्छा होना चाहिए। कागज पर साफ़ और अच्छे अक्षरों के बनाने में स्याही का महत्वपूर्ण भाग है। उसको पक्का होना चाहिए और उससे बने अक्षरों की चमक और सुन्दरता काफ़ी दिनों तक रहनी चाहिए। कच्ची स्याही के उपयोग से पुराने रेकार्डों के नष्ट होने का, अथवा नष्ट किये जाने का, काफ़ी भय रहता है। पहले गोंद आदि में काजल अथवा इसी प्रकार के अन्य पदार्थों के मिलाने से बनी स्याही का उपयोग होता था। आजकल तो अनेक प्रकार की स्याहियों का उपयोग होने लगा है। रसायनज्ञों ने इनके बनाने में अनेक रासायनिक पदार्थों का आविष्कार किया है।

फ़ाउन्टेनपेन में प्रयुक्त स्याही में विशेष गुण होते हैं। मामूली स्याही को पानी में घोलने से उसमें छोटे-छोटे कण रह जाते हैं। यदि इसका फ़ाउन्टेनपेन में प्रयोग किया जाय तो उसकी निब और फ़ीडर की महीन नाली इन कणों से बन्द हो जायगी और तब कलम में अचञ्चा प्रवाह नहीं रहेगा। इसलिए स्याही को इस प्रकार का होना चाहिए जिसकी

घोलने पर उसके महीन कण बिलकुल न रहें। इसके अतिरिक्त स्याही में कुछ ऐसे रासायनिक पदार्थ भी मिलाये जाते हैं जिनसे कलम के अन्दर की गंदगी नष्ट होती रहे और कलम के चलने के साथ-साथ वह सूखती जाय। ये सब विशेष गुण उपयुक्त रासायनिक पदार्थों के मिलाने से ही उत्पन्न होते हैं और इनके कारण ही फ़ाउन्टेनपेन की स्याही के दाम काफ़ी बढ़ जाते हैं।

धोबी को कपड़े पर निशान डालने के लिए ऐसी स्याही की आवश्यकता होती है जो धोने से छूट न सके। सिलवर नाइट्रेट, जो चाँदी का योगिक है, के २ प्रतिशत घोल से ऐसी स्याही तैयार की जाती है।

रसायनज्ञों ने ऐसी स्याहियों को भी बनाया है जो विशेष अवस्थाओं में ही पढ़ी जा सकती हैं। तृतीये के घोल से लिखे गये अक्षर यों ही नहीं पढ़े जा सकते। उनको गीला करके जब अमोनिया की बोतल के ऊपर चलाया जाता है तब वे स्पष्ट हो जाते हैं। शकर के गाढ़े घोल से लिखे गये अक्षर कागज़ को बालू पर गरम करने से स्पष्ट होते हैं। फ़िनोल्फ़थैलीन के घोल से लिखे गये अक्षर चूने के पानी अथवा अमोनिया से मिलकर लाल रंग बनाते हैं, जो सूखने पर फिर शायब हो जाता है। गुप्तरूप से पत्र लिखनेवालों के लिए रसायनज्ञ ने कैंसी सुविधा कर दी है! सैनिक पदाधिकारी इन स्याहियों का कभी-कभी उपयोग करते हैं।

छापाखाना

कागज़ और स्याही के अतिरिक्त छापेखानेवालों को छपाई के लिए ऐसी धातु की आवश्यकता होती है जो मुलायम होते हुए भी

जल्दी न घिसे। काफ़ी सख़्त धातु से बनाये गये टाइप से अक्षर फँलेंगे और यदि किसी मुलायम धातु का उपयोग किया जाय तो वह जल्दी ही घिस जायगी, क्योंकि कागज़ से उसकी काफ़ी रगड़ होती है। सीसे की धातु से बने उपयुक्त धातु-संकरों ने यह समस्या हल कर दी है।

फोटोग्राफी

पुस्तक को रोचक बनाने के लिए चित्रों का उपयोग किया जाता है। पहले पुस्तक में चित्र बहुत कम होते थे किन्तु फोटोग्राफी के आविष्कार से तसवीरों का शीघ्र और अधिक संख्या में बनाना सरल कार्य हो गया है। इससे जीवन की मुख्य घटनाओं की स्मृति स्थायी हो जाती है और सुन्दर दृश्यों का आनन्द फोटो में हमेशा के लिए समेट लिया जाता है।

इस कला के विकास के लिए रसायनज्ञों ने काफ़ी प्रयत्न किया है। इसमें ऐसे पदार्थों की आवश्यकता होती है जिन पर प्रकाश का प्रभाव हो सके। चाँदी का एक यौगिक—सिल्वर ब्रोमाइड—इसी प्रकार का यौगिक है। कैमरे में प्रयुक्त फ़िल्मों में इस महत्वपूर्ण यौगिक की एक मजबूत तह होती है। (तह को मजबूत बनाने के लिए भी रसायनज्ञों ने काफ़ी प्रयत्न किया है।) जब कैमरे द्वारा नियंत्रित प्रकाश क्षण भर के लिए भी इस फ़िल्म से टकराता है तो उसमें लगी सिल्वर ब्रोमाइड में रासायनिक प्रतिक्रिया हो जाती है—यह यौगिक सिल्वर और ब्रोमीन के परमाणुओं में टूट जाता है। महत्वपूर्ण बात तो यह है कि फ़िल्म में होनेवाला अन्तर उसी अनुपात में होता है जिस अनुपात में फोटो लिखे जानेवाले दृश्य अथवा व्यक्ति से प्रकाश विस्तृत हो रहा है। काली

वस्तुएँ प्रकाश को सोख लेती हैं और इसलिए इनसे प्रकाश कम निकलता है। सफ़ेद वस्तुएँ प्रकाश को नहीं सोखतीं, इसलिए इनसे अपेक्षाकृत अधिक प्रकाश निकलता है। कैमरे के लेंस द्वारा बनी परछाई में जिन भागों से प्रकाश अधिक आता है वहाँ फ़िल्म में अधिक प्रतिक्रिया हो जाती है, और जिन भागों से कम प्रकाश आता है, वहाँ कम प्रतिक्रिया हो पाती है। इस तथ्य का उपयोग करके रसायनज्ञ फ़ोटो बना लेते हैं।

पहले फ़ोटो को अंधेरे में उन्नत (डेवलप—Develop) किया जाता है। इसमें हाइड्रोक्वीनोन, मेटॉल आदि रासायनिक पदार्थों के उपयोग से प्रकृति द्वारा फ़िल्म पर पड़े हुए प्रभाव को रासायनिक दृष्टि से पूर्ण कर लिया जाता है। दृश्य के अनुसार फ़िल्म के जिन-जिन स्थानों पर सिल्वर ब्रोमाइड यौगिक के परमाणु टूटने चाहिए, वहाँ वे टूट जाते हैं।

अब फ़िल्म में कुछ भाग ऐसे रहते हैं जहाँ सिल्वर ब्रोमाइड यौगिक रूप में है और कुछ ऐसे जहाँ सिल्वर ब्रोमाइड अपने परमाणुओं में टूट चुका है। यदि इसको प्रकाश में रख दिया जाय तो सारी फ़िल्म के यौगिक प्रकाश द्वारा परमाणु-अवस्था में टूट जायेंगे। इस प्रकार सब स्थान काले हो जायेंगे। इससे फ़ोटो को बचाने के लिए उसको फ़िक्स (Fix) किया जाता है। सोडियम थायोसल्फ़ेट के घोल में जब यह फ़ोटो धोई जाती है तो फ़िल्म के जिन स्थानों पर प्रकाश नहीं पहुँचा है और जहाँ यौगिक वैसा-का-वैसा ही बना हुआ है, धुल जाता है। जिन स्थानों पर सिल्वर ब्रोमाइड टूट चुका है वहाँ चाँदी के महीन कण (जो काले होते हैं, क्योंकि बहुत महीन अवस्था में सब धातुएँ काली होती हैं) चिपके रह जाते हैं।

अब एक ऐसा चित्र तैयार हो गया जहाँ (१) सफ़ेद भाग वह है

जहाँ प्रकाश नहीं पहुँचा था और (२) काला भाग वह है जहाँ प्रकाश पहुँचा था। सफ़ेद वस्तुओं से प्रकाश अधिक पहुँचता है और काली से कम। इस प्रकार उपर्युक्त विधि से बने चित्र में काली वस्तुएँ सफ़ेद आती हैं और सफ़ेद काली हो जाती हैं। इसलिए इस चित्र को निगेटिव (Negative) कहते हैं। इसकी सहायता से सिल्वर ब्रोमाइड के कागज़ पर यदि पुनः चित्र बनाया जाय तो अवस्था निगेटिव की उलटी हो जायगी — काले स्थान सफ़ेद हो जायँगे और सफ़ेद काले। इस प्रकार फोटो अपने प्राकृतिक रूप में आ जायगी। प्रकाश से प्रभावित होनेवाले यौगिक सिल्वर ब्रोमाइड, उसको उन्नत और फ़िक्स करनेवाले रासायनिक पदार्थों की जानकारी से ही यह कला विकसित हो सकी है।

उपर्युक्त विधि से बने चित्र केवल काले और सफ़ेद ही होते हैं। अब रंगीन फोटो बनाने के लिए विशिष्ट फ़िल्म एवं उन्नत तथा फ़िक्स करने के लिए उपयुक्त रासायनिक पदार्थों का ज्ञान हो गया है। इससे दृश्यों के प्राकृतिक रंगवाले चित्रों की वैसे ही फोटो बनाना सम्भव हो सका है।

संसार की घटनाओं के बारे में जानकारी देनेवाले अखबार, महान् विचारों से परिचित करानेवाली पुस्तकों, मनोरंजन करनेवाली रंग-बिरंगी पत्र-पत्रिकाओं ने हमारा कितना मानसिक विकास किया है ! आधुनिक मानसिक सम्पर्क कितना विशाल है ! अच्छे कागज़, अच्छी स्याही और फोटोग्राफी की विकसित कला के बिना यह सब सम्भव न था। और इन सबके बनाने में रसायन का कितना महत्वपूर्ण स्थान है !

प्रकाश

[जीवन में प्रकाश का महत्त्व; तेल और बत्ती; माचिस; पेट्रोमैक्स;
विद्युत्-प्रकाश]

जीवन में प्रकाश का महत्त्व

प्रकाश का जीवन में कितना अधिक महत्त्व है! उपनिषद् में जहाँ मृत्यु से अमरत्व की ओर, असत् से सत् की ओर ले जाने की प्रार्थना की गई है वहाँ 'तमसो मा ज्योतिर्गमय'—अंधेरे से प्रकाश में ले चलने के लिए भी कहा गया है। दर्शन एवं धर्म से तो आत्मिक प्रकाश मिलता है किन्तु रात्रि के अंधेरे को विलुप्त करने के लिए भौतिक स्तर पर भी तो हमको प्रकाश चाहिए। रसायन ने इस कार्य को पूरा किया है। प्रकाशोत्पादक पदार्थों के बिना रात्रि के विश्राम एवं शान्ति में कितनी बाधा हो सकती है, इसकी आप सहज ही कल्पना कर सकते हैं।

तेल और बत्ती

आदिम मानव ने ही यह ज्ञान लिया था कि चर्बीवाले पदार्थ प्रज्ज्वलित किये जाने पर लौ के साथ जलकर अंधेरे को दूर करते हैं।

किन्तु इन पदार्थों से दीपक का कार्य तब ही लिया जा सकता है जब उसमें किसी प्रकार की बत्ती पड़ी हो। इसके द्वारा जलनेवाला पदार्थ बत्ती के छोर पर गैस-अवस्था में परिवर्तित होकर धीरे-धीरे जलता रहता है। प्राचीन काल में जब चर्बी का स्रोत केवल मारे हुए पशु ही थे, इस प्रकार का दीपक जलाना विलासमय जीवन के अन्तर्गत था। किन्तु बाद में सरसों, तिल्ली आदि के बीजों से तेल निकाला जाने लगा और इस प्रकार जलानेवाले पदार्थों के बाहुल्य से दीपक एक साधारण चोज बन गया। अब तो वह 'आवश्यकता' के अन्तर्गत है। रसायनज्ञों ने दीपक जलाने के लिए प्रयुक्त पदार्थों की सूची को और अधिक विस्तृत किया है। प्रकृति में पाये जानेवाले पेट्रोलियम को साफ़ करके मिट्टी के तेल, पेट्रोल, मोम आदि अनेक पदार्थ प्राप्त होते हैं। मोमबत्ती भी दीपक के सिद्धान्त के अनुसार जलती है। इसमें जलनेवाला पदार्थ द्रव न होकर ठोस-अवस्था में होता है। इसमें प्रयुक्त मोम वस्तुतः रसायनज्ञ की देन है ; प्राकृतिक मोम तो अपेक्षाकृत कम होने से महँगा पड़ता है। आदिम मानव की महत्वपूर्ण खोज को अधिक महत्व देने के लिए रसायन ने कितने सस्ते और अच्छे पदार्थों को बनाया है !

दीपक की लौ को स्थिर रखने के लिए ऐसे पदार्थ की आवश्यकता पड़ती है जिससे वायु प्रवेश न कर सके, किन्तु प्रकाश निकल सके। शीशे में ऐसे गुण हैं और उसकी बनी चिमनी का इस कार्य के लिए उपयोग होता है। किन्तु चिमनी को बनाने के लिए यदि मामूली शीशे का उपयोग किया जाय तो वह शीघ्र ही चिटख जायगी, क्योंकि मामूली शीशा एकाएक गरम या ठंडा होने पर चिटख जाता है। रसायनज्ञ ऐसा शीशा बना सकते हैं जिस पर तापक्रम के अचानक परिवर्तन का प्रभाव अपेक्षाकृत कम हो। प्रयोगशाला में रसायनज्ञ जिस शीशे का उपयोग,

करते हैं उससे काफ़ी ऊँचे और नीचे तापक्रमों पर कार्य लिया जा सकता है। फलतः रसायनज्ञ द्वारा बताये गये पदार्थों और उनकी विधि से बताये शीशे से इच्छित गुणोंवाली चिमनियाँ बनाई जाती हैं।

जलानेवाले पदार्थ, वत्ती और चिमनी को मिला करके लालटेन बनती है। यह सतोषजनक प्रकाशोत्पादक पदार्थ है। इनका आज भी पिछड़े हुए क्षेत्रों में प्रचार है। किन्तु इनको जलाया कैसे जाय ?

माचिस

आजकल कितनी सरलता से अग्नि बनाई जा सकती है ! पहले तो चकमक पत्थर को रगड़ करके बड़ी कठिनाई से अग्नि उत्पन्न की जाती थी। इस कठिनता से बचने के लिए अग्नि को जलती हुई अवस्था में रखने के लिए बड़ा प्रयत्न किया जाता था। कहा जाता है कि 'अग्नि-होत्री ब्राह्मण' होली में जलाई गई अग्नि को वर्ष भर बनाये रखते थे और प्रत्येक वर्ष होली पर इनके यहाँ से लाई गई आँच से होलिका प्रज्ज्वलित की जाती थी। किन्तु अब इन सबकी आवश्यकता नहीं, क्योंकि सरल विधि से अग्नि उत्पन्न करने की विधि रसायनज्ञ ने हमको बता दी है।

सब रासायनिक प्रतिक्रियाओं में ताप का कुछ थोड़ा बहुत परिवर्तन अवश्य होता है—कुछ प्रतिक्रियाओं को पूर्ण करने के लिए ताप देने की आवश्यकता होती है और कुछ में से ताप स्वतः निकलता है। १९वीं शताब्दी के रसायनज्ञों ने सोचा कि यदि अधिक ताप देनेवाली रासायनिक प्रतिक्रियाओं में भाग लेनेवाले पदार्थ शीघ्र जलनेवाली लकड़ी की ताली के सिरे पर लगा दिये जायें तो प्रतिक्रिया से निकला ताप सम्भवतः लकड़ी में लौ उत्पन्न कर देगा। इसी विचार से आधुनिक माचिस का बिकास निम्नलिखित प्रकार से आरम्भ हुआ:—

(१) बरथोले साहब ने पता लगाया कि लकड़ियों के सिरे पर पोर्टेसियम क्लोरेट, शकर और गोंद के घेप से बनी घुंडी को यदि गंधक के अम्ल में डुबाया जाय तो क्लोरेट और अम्ल की रासायनिक प्रतिक्रिया से उत्पन्न ताप द्वारा लकड़ी जलने लगती है। किन्तु इसमें गंधक के अम्ल को सावधानी से अलग बोतलों में रखना पड़ता था।

(२) जॉन वाकर नामक एक अंग्रेज ने १८२६ में बताया कि पोर्टेसियम क्लोरेट, ऐंटीमनी सल्फाइड और स्टार्च के घेप को लकड़ी के सिरे पर लगाने से जो तोली बनती थी उसको रंगमाल आदि खुरखुरे स्थानों पर रगड़ने से अग्नि बनाई जा सकती थी। किन्तु इसमें कठिनाई यह थी कि इनको काफ़ी जोर से और देर तक रगड़ना पड़ता था। रगड़ने पर उत्पन्न ताप से प्रतिक्रिया आरम्भ हो जाती है। उपर्युक्त पदार्थों की रासायनिक प्रतिक्रिया को आरम्भ करने के लिए काफ़ी ताप की आवश्यकता होती है, इसलिए इनको काफ़ी जोर से रगड़ना पड़ता था।

(३) एलोजो फ़िलिप्स ने सोचा कि यदि कम ताप से आरम्भ की जा सकनेवाली रासायनिक प्रतिक्रिया में भाग लेनेवाले पदार्थों को चिपकानेवाले पदार्थों के साथ तौलियों पर लगाया जाय तो जल्दी घिस कर अग्नि प्राप्त की जा सकती है। ऐंटीमनी सल्फाइड के स्थान पर सफ़ेद फ़ासफ़ोरस के प्रयोग से आपने उपर्युक्त समस्या को सुलझाया। किन्तु इस पदार्थ के उपयोग से मसूढ़ों को बीमारी हो जाती थी। इसलिए ऐसे पदार्थ को जानना था, जिसमें फ़ासफ़ोरस के गुण तो हों किन्तु उससे बीमारी न उत्पन्न हो सके। फ़ासफ़ोरस सेस्क्वी आक्साइड के उपयोग से इस कठिनाई पर विजय प्राप्त की जा सकी। किन्तु इसके प्रयोग में एक अड़चन थी—ये तौलियाँ कभी-कभी जेब की रगड़ से

ही प्रज्ज्वलित हो उठती थीं, अतः आग लगने का बड़ा भय रहता था।

(४) भयरहित दियासलाईयों के बनाने के लिए रसायनज्ञों ने सोचा कि यदि रासायनिक प्रतिक्रिया के कुछ पदार्थ माचिस की डिब्बी पर लगा दिये जायें और कुछ तीली के सिरे पर, तो दोनों के रगड़ने पर ही रासायनिक प्रतिक्रिया पूर्ण हो सकेगी और प्रयास करने पर ही तीलियाँ जल सकेंगी। फलतः आधुनिक माचिस की डिब्बी पर लाल फ़ासफ़ोरस लगा होता है। इसके साथ ऐंटीमनी सल्फ़ाइड और चिपकाने वाले पदार्थ भी होते हैं। तीली के सिरे पर पोटैसियम क्लोरेट और सूक्ष्म मात्रा में पोटैसियम डाइक्रोमेट, मँगनीज डाइआक्साइड, गंधक और फ़ेरिक आक्साइड घेपरूप में लगे होते हैं। दोनों के रगड़ने पर ही प्रतिक्रिया आरम्भ होती है और तब अग्नि की लौ बनती है। इस प्रकार आवश्यकता के समय सरलता से अग्नि बनाई जा सकती है। रसायनज्ञों ने कितनी कठिनाइयाँ पार करके इतनी आवश्यक चीज़ को बनाया है !

लौ का उपयोग करके माचिस की तीली को पूर्णरूप से बुझाये बिना फेंक देने की साधारण प्रवृत्ति है। कभी-कभी वह कुछ देर तक दहकती रहती है। पहले इसके दहकने से अनेक स्थानों पर आग लग चुकी है; इसलिए पूर्ण सुरक्षा के लिए आवश्यक है कि तीली लौ बुझने पर दहके नहीं। इसके लिए रसायनज्ञों ने ज्ञात किया है कि यदि बोरैक्स (सुहागे) के घोल में तीलियों को डुबा लिया जाय तो दहकना एकदम बंद हो जाता है। कितना महत्वपूर्ण है उनका यह आविष्कार ! भारतीय सरकार को इस प्रकार की तीलियों के उत्पादन पर जोर देना चाहिए। रासायनिक ज्ञान से लाभ उठाकर भयंकर दुर्घटनाएँ कौसी सरलता से कम की जा सकती हैं !

सिगरेट जलाने के लिए सिगरेट लाइटर में ऐसे धातुसंकरों का उपयोग किया जाता है जो थोड़ा-सा खुरचने पर अग्नि के छोटे-छोटे कण फेंकते हैं। ये चिनगारियाँ जब पास में रखे पेट्रोल से भीगी रुई के सम्पर्क में आती हैं तो लौ उत्पन्न होती है। कितने उपयोगी हैं ये धातु-संकर! प्राकृतिक चकमक पत्थर और रसायनज्ञ के बनाये धातु-संकर में कितना साम्य है!

पेट्रोमैक्स

दीपक के उपयोग के लिए सस्ते पदार्थों और अग्नि बनाने की सरल विधियों को ही बताकर रसायनज्ञ को संतोष नहीं हुआ। उसने तेज रोशनी देनेवाली लालटेनों का भी आविष्कार किया। पेट्रोमैक्स इसका उदाहरण है।

इसके बनाने का सिद्धान्त बड़ा सरल है। वेल्श बॉक नामक एक रसायनज्ञ ने देखा कि (मोनोजाइट बालू में पाये जानेवाले रासायनिक पदार्थों में) सोरियम और थोरियम के यौगिकों को जब जलाया जाता है तो वे काफ़ी अधिक प्रकाश से जलते हैं। पेट्रोमैक्स की जाली में इन्हीं यौगिकों की एक महीन पर्त होती है। एक बार प्रज्ज्वलित करने पर ये यौगिक दहकते रहते हैं। उपर्युक्त यौगिकों की मात्रा को निर्धारित करके विशिष्ट घोल के उपयोग से जाली में लगी पर्त काफ़ी दिनों तक चलती है। इस प्रकार रासायनिक ज्ञान के उपयोग से एक पेट्रोमैक्स द्वारा काफ़ी तेज रोशनी प्राप्त की जा सकती है।

विद्युत्-प्रकाश

आजकल तो विद्युत्-प्रकाश का संसार में सबसे अधिक प्रचार है।

इसके लिए आवश्यक बल्बों के बनाने और उनके जीवन को बढ़ाने में रसायन ने महत्वपूर्ण भाग लिया है। यह देखा गया कि यदि विद्युत्-धारा को वायुशून्य स्थान में महीन तार से भेजा जाय तो वह चमक करके प्रकाश उत्पन्न करती है। रसायनज्ञ के लिए समस्या यह थी कि तार के लिए किस पदार्थ को लिया जाय? एडोसन महोदय ने अनेक तारों की परीक्षा की और कार्बन के महीन तार को सबसे अधिक चमकनेवाला पाया। किन्तु यह शीघ्र ही जल जाता था, जिससे बल्ब का जीवन कुछ घंटों तक ही सीमित था। रसायनज्ञों ने सोचा कि यदि अधिक तापक्रम पर पिघलनेवाली धातुओं के महीन तारों का उपयोग किया जाय तो समस्या सुलभ सकती है। टेंटेलम और टंगस्टन धातु के तारों ने अच्छा काम दिया। किन्तु इन तारों के बनाने में एक कठिनाई थी। साधारण रीति से अधिक तापक्रम पर धातु को पिघला अथवा ढीला करके तार बनाये जाते हैं। किन्तु इन धातुओं के पिघलने का तापक्रम क्रमशः 2800° श० और 3315° श० था। इतने अधिक तापक्रम पर काम करना कठिन समस्या है।

जिन विधियों से टंगस्टन धातु तैयार की जाती है, उनसे वह चूर्ण (पाउडर) रूप में प्राप्त होता है। चूर्ण से तार बनाने के लिए रसायनज्ञों ने बारीक चूरे को दबाकर महीन नालियों में भरा और जब हाइड्रोजन गैस में ऊँचे तापक्रम पर ये गरम की गईं तो तार बन गया। इन तारों के बनने से ही बल्ब अधिक दिनों तक चलनेवाले बन सके। तब ही जनता में उनका प्रचार हुआ। बल्ब में पहले प्रयुक्त प्लैटिनम धातु को बदलने के लिए रसायनज्ञों ने जिस धातु-संकर का पता लगाया, उसका धातु-संकर के अध्याय में वर्णन हो चुका है।

बल्ब की रोशनी को अधिक सुखद बनाने के लिए रसायनज्ञों ने एक

और महत्त्वपूर्ण बात का पता लगाया। बल्ब का स्थान वायुशून्य रहता है। यदि इसमें अक्रियाशील गैसों भर दी जायें तो इनकी उपस्थिति में तार विभिन्न रंगों में चमकता है। नियॉन भरे ट्यूब में से सफ़ेद दूधिया रोशनी निकलती है। इनका उपयोग आजकल कितना फ़ैशनदार समझा जाता है! दिन तक में इनसे काम करना पसंद किया जाता है। रसायनज्ञ ने लालटेन, पेट्रोमैक्स, बल्ब आदि को बनाकर रात्रि को प्रकाशमय बनाया। नियॉन ट्यूब की रोशनी ने तो सूर्य-प्रकाश से भी बाजी मार ली है।

किन्तु रसायनज्ञ को अब भी संतोष नहीं। उपर्युक्त सब प्रकाशोत्पादक पदार्थों में प्रकाश के साथ-साथ ताप भी निकलता है। रसायनज्ञ ऐसे प्रकाश-स्रोत की खोज में हैं जिससे केवल प्रकाश मिल सके, ताप नहीं। जुगनू अपने प्रकाश से चमकता है, तपता नहीं। उसका प्रकाश भी तो किन्हीं रासायनिक क्रियाओं द्वारा ही होता है। यदि ये पूर्णरूप से जानी जा सकें तो वैसा ही प्रकाश रासायनिक पदार्थों से भी उत्पन्न किया जा सकता है। ऐसे प्रकाश-स्रोत की प्रतीक्षा करनी होगी।

पदार्थों की रक्षा

[संघर्षमय जीवन; जंग न लगना; धातु-रक्षा; पेंट; वार्निश;
कीटाणुनाशक पदार्थ; जल-अभेद्य पदार्थ; अग्नि-अभेद्य पदार्थ]

संघर्षमय जीवन

जीवन संघर्षमय है। जीवित रहने के लिए प्रत्येक जीव को अपने से विरोधी प्राकृतिक शक्तियों से संघर्ष करना पड़ता है। सफल संघर्ष का नाम ही तो जीवन है। रसायनज्ञ के पदार्थ-जगत् में भी यह बात देखने में आती है। रसायनज्ञ एक ओर तो शुद्ध चमकीले पदार्थों का निर्माण करता है, किन्तु दूसरी ओर प्रकृति उसके रूप को नष्ट करने में तत्पर रहती है। फलतः धातु की चीजों में जंग लग जाता है, उनके रंगों की चमक जाती रहती है, लकड़ी आदि की वस्तुएँ कीटाणुओं अथवा फफूँदी से नष्ट होती रहती हैं। यदि वस्तुओं को उपयोगी एवं सुंदर अवस्था में रखना है तो उनके नष्ट होने का कारण और नाश से बचने के उपायों का अध्ययन करना होगा।

जंग न लगना

पदार्थों को नष्ट करने में जल और आक्सीजन का सबसे अधिक भाग रहता है। ये दोनों ही चीजें हवा में पाई जाती हैं। यद्यपि

आक्सीजन के बिना हम जीवित नहीं रह सकते, तथापि धातुएँ इसी के आक्रमण से खराब होती हैं। इस गैस की प्रवृत्ति धातु से मिल करके विभिन्न प्रकार की आक्साइड बनाने की होती है। लोहे की आक्साइड लाल रंग की होती है और मोर्चे के रूप में हम इससे परिचित हैं। नमी के कारण आक्साइड शीघ्र बनने लगती है; वस्तुतः इसके पूर्ण अभाव में आक्साइड का बनना सम्भव नहीं। जल से एक और हानि है। इसकी उपस्थिति में फूँदों, काई अदि लगने लगती है। यदि आक्सीजन और जल से पदार्थों का रक्षा की जा सके तो उनको उनके मूलरूप में रखा जा सकता है।

धातु-रक्षा

जंग लगने पर कुछ धातुओं में एक ऊपरी महीन आक्साइड की पर्त बन जाती है। एक बार पूरी पर्त बन जाने पर धातु का नाश रुक जाता है, क्योंकि इस पर्त (आक्साइड) में आक्सीजन से मिलने की प्रवृत्ति नहीं होती। रसायनज्ञों ने सोचा कि यदि धातुओं के ऊपर एक महीन पर्त ऐसी ही दूसरी धातु की चढ़ा दी जाय जिसकी बनी ऊपर की आक्साइड की पर्त स्वयं जंग लगने को रोकती है, तो नीचेवाली धातु सुरक्षित रहेगी। एलुमिनियम पेंट से कदाचित् आप परिचित होंगे। इस धातु के छोटे-छोटे महीन कण इस पेंट में लटकी हुई अवस्था में रहते हैं। इस पेंट को किसी वस्तु पर चढ़ाने से एलुमिनियम के छोटे-छोटे कण सारी वस्तु पर फैल जाते हैं और उपर्युक्त सिद्धांत के अनुसार धातु की रक्षा करते हैं। एलुमिनियम के अतिरिक्त जस्ते के महीन कणों से बने पेंट का भी इसी भाँति प्रयोग किया जा सकता है।

‘धातु’ के अध्याय में मुलम्मे का जिक्र किया जा चुका है। इसके

द्वारा बनाई गई महीन पर्त से धातु की रक्षा की जा सकती है। मुलम्मा चढ़ाने के लिए निकिल धातु का सबसे अधिक उपयोग होता है, क्योंकि इसकी पर्त सख्त और चमकीली होती है। यह आसानी से नहीं उखड़ती। कोबाल्ट और क्रोमियम धातुओं की पर्त भी काफी सख्त होती है। सीसा, चाँदी, टिन, प्लैटिनम आदि धातुओं का भी मुलम्मा चढ़ाया जाता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि मुलम्मे से केवल सुंदरता ही नहीं बढ़ती, किन्तु धातु-रक्षा भी होती है।

साधारण रीति से धातुओं के धोल में वस्तुओं को रख करके (पिछले अध्याय में बताई गई विधि से) बिजली चलाने पर मुलम्मा चढ़ाया जाता है। किन्तु इस विधि से कभी-कभी खुरचे हुए स्थान नहीं भर पाते। इनको भरने के लिए विशेष प्रकार के पाउडरों को रसायनज्ञ ने जन्म दिया है।

रसायनज्ञों ने ज्ञात किया कि जल, आक्सीजन और धातु में विद्युत्-रासायनिक (Electro-chemical) क्रियाओं द्वारा जंग लगता है। ये क्रियायें तभी पूर्ण होती हैं जब ऋण और धन विद्युत्वाले कण आपस में मिल पाते हैं। यदि धातुओं में केवल एक प्रकार की विद्युत् भेजी जाय जिससे इन दोनों कणों का मिलना सम्भव न हो तो धातुओं को जंग लगने से रोका जा सकता है। इस सिद्धांत के अनुसार एक प्रकार की ही विद्युत्—धन अथवा ऋण—धातु से भेजी गई। इस विधि से रखी गई धातु की चीजों में जंग लगना कम किया जा सका। जहाजों की धातुओं की इसी प्रकार रक्षा की जाती है।

विशेष प्रकार के धातु-संकरों को बनाने से धातुओं की जंग से रक्षा होती रहती है। जंग न लगनेवाले इस्पात (स्टेनलेस स्टील) का जिक्र किया जा चुका है। 'मोनेल' धातु-संकर में निकिल, ताँबा और

कोबॉल्ट होता है। इसका उद्योग में काफ़ी प्रयोग होता है। इसके बने बर्तनों का घरों में भी उपयोग होता है। दूध के पास्चराइजेशन में प्रयुक्त बर्तन, आइसक्रीम जमानेवाले बर्तन साधारणतः इसी धातु-संकर के होते हैं। ऐलकुमाइट धातु-संकर एलूमिनियम और ताँबे का होता है। इसका भी काफ़ी प्रयोग होने लगा है। कम मात्रा में पाई जानेवाली धातुओं की सहायता से विभिन्न प्रकार की ऐसी धातु-संकरों को बनाया गया है, जिन पर जंग अपेक्षाकृत धीमी गति से लगता है।

रसायनज्ञों द्वारा बनाये घोल से परीक्षा करके धातु में जंग लगने की अवधि एवं उसके नष्ट होने के समय को इंजीनियर अंदाज़ सकते हैं। इस प्रकार रसायनज्ञ से सहायता लेकर वे धातु-जीवन को बढ़ा सकते हैं; पुलों अथवा इमारत के कमज़ोर होने की अवधि जान सकते हैं। इस ज्ञान से बड़ा लाभ हुआ है। पहले धातु धीरे-धीरे कमज़ोर होती रहती थी और उसके अचानक टूट जान से माल अथवा जान का भयंकर नाश होता था। धातु-रक्षा के विभिन्न उपायों से परिचित होकर ऐसी घटनाओं को कम किया जा सका है। ऐसा अनुमान किया जाता है कि अमरीका में जंग आदि से लगभग दो अरब रुपये की धातु का नुकसान होता है। पूर्णरूप से इस नुकसान से तो नहीं बचा जा सकता, किन्तु रसायनज्ञों द्वारा बताई गई विधियों से इसको कम अवश्य किया जा सका है। विदेशों में धातु की रासायनिक रक्षा के लिए रसायन के अन्वेषक रहते हैं और इनसे समय-समय पर हर प्रकार की सहायता ली जाती है।

पेंट

धातु-रक्षा के लिए ऊपर केवल ऐसे पेंट का वर्णन किया गया है

जिनमें कुछ धातुओं के महीन कण रहते हैं। अब तो अनेक प्रकार के पेंट बाज़ार में मिलते हैं। इनमें प्रयुक्त पदार्थ भी इस प्रकार के होते हैं जिन पर आक्सीजन अथवा जल का प्रभाव कम हो। अच्छे पेंट को (क) शीघ्र न खराब होनेवाला, (ख) काफ़ी दिनों तक चमकीला रहनेवाला, (ग) आसानी से चिपकनेवाला, (घ) जल्दी सूखनेवाला और (ङ) अधिक स्थान घेरनेवाला होना चाहिए।

सफ़ेद पेंट के लिए जिंक आक्साइड, सफ़ेद सीसा (लेड कार्बोनेट, हाइड्रेटेड) और लाइथोपोन (बेरियम सल्फ़ेट और जिंक आक्साइड) का प्रयोग होता है। सफ़ेद सीसा अधिक चमकीला होता है और जल्दी काला नहीं पड़ता। चमकीले रंगों को बनाने के लिए विभिन्न प्रकार के रासायनिक पदार्थ—लेड क्रोमेट, मरक्यूरिक सल्फ़ाइड, एलीज़रीन ब्लू, ग्रेफ़ाइट, कार्बन, कोर्मीन आदि—बनाये गये हैं। साधारण रीति से इन सबका प्रयोग सफ़ेद पेंट में मिलाकर किया जाता है। आसानी से चिपकने और जल्दी सूखनेवाले पेंटों को बनाने के लिए रसायनज्ञ ने विभिन्न प्रकार के घोलक बनाये हैं। साधारणतः तारपीन का तेल, फ़रफ़्यूराल (सूखी घास से बनाया जानेवाला महत्वपूर्ण यौगिक), स्प्रिट आदि का इसके लिए उपयोग किया जाता है। विशिष्ट रासायनिक पदार्थों के मिलाने से पेंट को अधिक स्थान घेरनेवाला बनाया जा सकता है। उदाहरणतः सफ़ेद रंग के लिए यदि टाइटेनियम डाइआक्साइड का उपयोग किया जाय तो वह अन्य सफ़ेद रंगों की अपेक्षा काफ़ी स्थान घेरता है।

आमतौर से एक ही पेंट में ये सब गुण नहीं होते किन्तु धन और आवश्यकता के अनुसार उनमें चयन करना पड़ता है। रसायनज्ञ ने इनके विभिन्न मिश्रणों से विभिन्न प्रकार के पेंटों को बना करके वस्तुओं को

चमकील बनाये रखने का प्रयत्न किया है।

वानिश

अलसी के तेल अथवा स्प्रिट में लाख, लाह अथवा चपड़े को भिगो करके वानिश बनाई जाती है। रसायनज्ञों ने फ़रफ़ूराल, एमाइल, एसीटेट, ब्यूटाइल एसीटेट, डाई-इथाइल कार्बोनेट, इथाइल लैक्टेट आदि घोलकों के आविष्कार से एवं कोपल (डामर), अम्बर (Amber) और विभिन्न प्रकार की रेज़ीन के उपयोग से अच्छी वानिशों को बनाया है।

आजकल पायरॉक्सिलीन लैकर्स (Pyroxylin lacquers) का भी उपयोग होने लगा है, क्योंकि ये जल्दी लगाई जा सकती हैं, शीघ्र सूखती हैं और इनके लगाने में आसानी होती है। ये रसायनज्ञों द्वारा निर्मित पायरॉक्सिलीन को विभिन्न घोलकों में घोलने से बनती हैं। विभिन्न प्रकार के रंगों को मिलाकर इनको रंगीन भी बनाया जा सकता है।

कीटाणुनाशक पदार्थ

कीटाणुओं और फफूँदी से पदार्थों का काफ़ी नाश होता है। रसायनज्ञ ने विभिन्न प्रकार के कीटाणु-नाशक पदार्थ बनाये हैं। ये दो प्रकार के होते हैं—(१) कुछ पदार्थों के स्पर्श से कीड़े मर जाते हैं, या उनके जीवन-सम्बन्धी सब कार्य धीमे पड़ जाते हैं। गंधक चूर्ण, निकोटीन, साबुन के घोल, मिट्टी के तेल और विभिन्न तेलों के इमल्शन

इस प्रकार के पदार्थ हैं। (२) कुछ पदार्थ गैस-अवस्था में बहुत धीरे-धीरे परिवर्तित होते रहते हैं। नैफ्थलीन की गोलियों की गैस के जहरीले प्रभाव से कीटाणु नष्ट होते रहते हैं।

डी० डी० टी० एक प्रसिद्ध कीटाणु-नाशक पदार्थ है। घोल अथवा चूर्ण रूप में इसका उपयोग किया जाता है। भारत सरकार ने मलेरिया के कीटाणुओं को मारने के लिए इसका उत्पादन आरम्भ किया है। इसका काफ़ी प्रयोग होने लगा है। कार्बोलिक एसिड (फ़िनोल), फ़िनायल, डेटॉल, पोटेशियम परमेगनेट आदि विभिन्न रासायनिक पदार्थ कीटाणु-विनाश के लिए सुलभ एवं सस्ते पदार्थ हैं।

फफूंदी से फसलों का बड़ा नुकसान होता है। यह महीन स्पोरों—आँख से न देखे जा सकनेवाले काफ़ी महीन कणों—से फैलती है। वस्तुतः फफूंदी को मारना बड़ा कठिन होता है। इन नवजात, अकुम्रा फूटते हुए, कोमल स्पोरों पर रासायनिक आक्रमण से फफूंदी से बचा जा सकता है। कुछ कीटाणुनाशक पदार्थों से भी इनको मारा जा सकता है।

जल-अभेद्य पदार्थ (Water-proof maters)

जल से केवल जंग ही नहीं लगता किन्तु उसकी उपस्थिति में फफूंदी आदि लगने का भी भय रहता है। वार्निश, पेंट, तेल आदि से जल और आक्सीजन दोनों से ही बचा जा सकता है। किन्तु इनके अतिरिक्त रसायनज्ञ ने ऐसे कपड़ों और कागज़ों को भी बनाया है जो जल-अभेद्य होते हैं अर्थात् जिनमें से जल निकल नहीं पाता।

कपड़े को जल-अभेद्य बनाने में एक विशेष कठिनाई है। जल-

अभेद्य होने पर वस्तुओं में से हवा नहीं निकल पाती है किन्तु कपड़ों में ऐसा नहीं किया जा सकता। उनमें से तो हवा निकलनी चाहिए। इस कठिनाई को पूर्णरूप से हल नहीं किया जा सका है। तब भी अनेक कपड़े ऐसे मिलते हैं जिनमें से जल नहीं छन पाता। पहले कपड़ों को एल्यूमिना घोल में डुबाया जाता है, फिर उनके ऊपर विशेष प्रकार के साबुनों के घोल से मोम पैराफ़ीन आदि पदार्थ जमाये जाते हैं। एल्यूमिनियम एसिटेट, जिलेटिन और केसीन के घोलों से भी कपड़े जल-अभेद्य बनाये जाते हैं। किरमिच (Canvas) के कपड़ों को बनाने के लिए भी ऐसी ही विधियाँ प्रयुक्त होती हैं। इनके लिए ऐसाफ़ाल्टम (Asphaltum), रबड़ और ऊँचे तापक्रमों पर पिघलनेवाली पैराफ़ीन का अधिक प्रयोग होता है।

कागज को जल-अभेद्य बनाने के लिए लुगदी में विशेष प्रकार की रासायनिक विधियों से मोम, पैराफ़ीन आदि पदार्थों को मिलाया जाता है।

अग्नि-अभेद्य पदार्थ

आक्सीजन और जल के अतिरिक्त अग्नि से भी पदार्थों की रक्षा करनी पड़ती है। वस्तुतः कोई भी ऐसा पदार्थ नहीं है जिस पर अग्नि का प्रभाव न पड़ता हो—रुम या अधिक, यह बात दूसरी है। इसलिए पदार्थों की अग्नि से रक्षा के लिए केवल इतना प्रयत्न किया जा सकता है कि अग्नि से कम प्रभावित होनेवाली वस्तुओं को अग्नि से अधिक प्रभावित होनेवाली वस्तुओं के ऊपर चढ़ा दिया जाय। लकड़ी के ऊपर जब सोडियम सिलिकेट-जैसे पदार्थों का लेप किया जाता है तो लकड़ी

अपेक्षाकृत धीमी गति से जलती है। फलतः ऐसी वस्तुओं से आग का फैलना कम किया जा सकता है।

अग्नि बुझाने के लिए रसायनज्ञों ने बड़े प्रयत्न किये हैं। रासायनिक दृष्टिकोण से आग को बुझाने के लिए सरल तरीका यह है कि उसके जलने के लिए आवश्यक पदार्थों को उसके सम्पर्क में न आने दिया जाय। आक्सीजन की अनुपस्थिति में आग स्वतः बुझ जाती है। आक्सीजन को हटाना तो सम्भव नहीं, क्योंकि वह जीवन के लिए अत्यंत आवश्यक गैस है। किन्तु आग लगने के स्थान पर यदि दूसरी भारी गैस को अधिक मात्रा में छाड़ दिया जाय तो आक्सीजन उस गैस के दबाव से हट जाती है और तब उसकी अनुपस्थिति से आग बुझ जाती है। कार्बन आई आक्साइड ऐसी ही गैस है। बड़े दफ़्तरो में ऐसी व्यवस्था रहती है, जिससे यह गैस आसानी से काफ़ी मात्रा में निकल सके। इस गैस को शीघ्र उत्पन्न करनेवाले रासायनिक पदार्थ पास-पास रहते हैं और वे किसी सरल यांत्रिक विधि से मिलाये जाने पर अधिक मात्रा में इस गैस को बनाते हैं।

अब ऐसी भी विधियाँ ज्ञात हैं जिनसे यह गैस आग लगने पर अपने आप निकलती है। महीन शीशे के बर्तन में कुछ द्रव रखे रहते हैं। आग लगने पर तापक्रम की थोड़ी-सी वृद्धि से ये द्रव गैस-अवस्था में परिवर्तित हो जाते हैं। गैस के दबाव से महीन शीशा टूट जाता है और उसके टूटते ही कार्बन डाई आक्साइड निकलने लगती है। इसलिए इन यंत्रों के उपयोग से आग लगने के भय को कम किया जा सकता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि पदार्थ की किसी विशेष अवस्था के स्थायित्व के लिए, उसको चमकीला या सुंदर बनाये रखने के लिए रसायनज्ञ ने अनेक पदार्थ निकाले हैं जिनसे जल, आक्सीजन, कीटाणु,

अग्नि आदि से बचा जा सकता है। धातु की रक्षा करके रसायनज्ञ ने इंजीनियर की सहायता की है, वानिश और विभिन्न पेंटों से सौंदर्य की वृद्धि की है, कीटाणु-नाशक पदार्थों से वस्तुओं के जीवन को बढ़ाया है और जल तथा अग्नि अभेद्य पदार्थों के उत्पादन से मनुष्य को आराम देने की चेष्टा की है।



शीशा

[शीशा बनाना; विभिन्न प्रकार; रंगीन शीशे; लेंस; प्रतिबिम्ब बनानेवाले शीशे; घिसने और काटने वाले पदार्थ]

पुरातत्त्वशास्त्र-वेत्ताओं ने ज्ञात किया है कि शीशे का प्रयोग ६००० वर्ष पहले भी होता था। किन्तु विभिन्न प्रकार के अच्छे शीशों का उत्पादन पिछली शताब्दी के रासायनिक ज्ञान से ही सम्भव हो सका है। पदार्थ के रासायनिक ज्ञान से वस्तुओं के गुणों एवं उत्पादन की मात्रा दोनों को ही बढ़ाया जा सकता है। रसायनज्ञ ने शीशे के सम्बन्ध में जो कार्य किये हैं, उनसे यह बात स्पष्ट हो जायगी।

शीशा बनाना

जब पथरीले चूने और सोडे को रसायनज्ञों द्वारा साफ़ की गई सफ़ेद बालू के साथ मिलाकर गरम किया जाता है तो शीशा बनता है। रसायनज्ञों द्वारा निर्धारित इन पदार्थों की मात्राओं को बड़े बड़े टैंकों में ऊँचे तापक्रम (१४००° श०) पर पिघलाया जाता है। कुछ टैंक १५० फ़ीट लम्बे, ३० फ़ीट चौड़े और ५ फ़ीट तक गहरे होते हैं। इनमें ५०-६० हजार मन तक पिघला हुआ शीशा एक बार में आ सकता है। शीशे को पिघलाने के बाद उसे धीरे-धीरे ठंडा किया जाता है। इस विधि से

बनाने पर शीशा मजबूत बनता है। इस काम के लिए ऐसी भट्टियाँ बनाई जाती हैं जिनका तापक्रम धीरे-धीरे कम होता रहता है।

शीशा बहुत अधिक ठंडा किया हुआ द्रव है जो काफी ज्यादा चिपचिपा होता है। साधारण प्रकार के शीशे में लगभग ७३ प्रतिशत बालू, १२½ प्रतिशत चूना, १२½ प्रतिशत सोडियम ऑक्साइड और लगभग २ प्रतिशत अन्य पदार्थ होते हैं।

खिड़कियों का शीशा बनाने के लिए एक लोहे का बड़ा बेलन पिघले हुए शीशे में डालकर उठाया जाता है। बेलन के साथ शीशा चिपक जाता है; शीशे की मुटान बेलन के उठाने की रफ़्तार पर निर्भर होती है। बेलन से चिपके शीशे के ऊपर रोलर फेर दिया जाता है और फिर उसको धीरे-धीरे ठंडा करने पर शीशे की उपयुक्त प्रकार की चदरें बनाई जाती हैं।

शीशे की प्लेट बनाने के लिए अधिक शुद्ध पदार्थ उपयुक्त होते हैं छोटी-छोटी भट्टियों में पिघला हुआ शीशा बड़ी मेजों पर उँडेला जाता है। इन पर बेलन चलाने से इच्छित मोटान का शीशा प्राप्त किया जा सकता है। इनको भी धीरे-धीरे ठंडा (Annealing) करना पड़ता है। यह क्रिया घूमती हुई मेजों पर की जाती है। इसके साथ प्लेटों की पालिश और घिसाई भी होती रहती है, क्योंकि बेलन चलाने के बाद भी शीशे की प्लेटों में कुछ खराबियाँ रह ही जाती हैं।

विभिन्न प्रकार के साँचों के ऊपर शीशा जब विविध प्रकार की भट्टियों में रखा जाता है तो तापक्रम बढ़ाने पर मुलायम शीशा साँचे के अनुसार ढलने लगता है। इस प्रकार शीशे के विभिन्न टेढ़े रूप प्राप्त किये जाते हैं।

जब पिघले हुए शीशे में हवा फूँकी जाती है तो वह गुब्बारे की

तरह से फूल उठता है। उसी सिद्धान्त के अनुसार बोतलें और इसी प्रकार की अन्य वस्तुएँ बनाई जाती हैं।

विभिन्न प्रकार

रसायनज्ञों ने एक ऐसा शीशा बनाया जिसमें ८० प्रतिशत बालू, ४ प्रतिशत सोडियम ऑक्साइड, २ प्रतिशत एल्यूमिनियम ऑक्साइड, १२ प्रतिशत बोरॉन ऑक्साइड और २ प्रतिशत कैल्सियम, पोटेशियम और मैग्नीसियम की ऑक्साइड होती है। साधारण शीशे में बालू की मात्रा को अधिक कर देने और उसमें बोरॉन ऑक्साइड के मिलाने से जो शीशा बनता है उसको पायरेक्स शीशा कहते हैं। यह साधारण शीशे की अपेक्षा ढेर में टूटनेवाला होता है; तापक्रम के अचानक परिवर्तन से इस पर प्रभाव कम होता है। गरम करने पर यह शीघ्र ही मुलायम पड़ जाता है। इन सब गुणों के कारण प्रयोगशाला के यंत्रों के बनाने में इसका काफ़ी प्रयोग होता है। इसका मूल्य अधिक होता है किन्तु इसके बने बर्तन काफ़ी दिनों तक चलते हैं।

वाइकर ब्रैंड के शीशे में ९६ प्रतिशत बालू होती है। यह पायरेक्स शीशे से सस्ता और काफ़ी सख्त होता है। बर्फ़ के टुकड़े पर रखी इसकी तश्तरी पर यदि उबलता हुआ पानी छोड़ा जाय तब भी वह नहीं चिटखती। इस प्रकार शीशे के बनाने में प्रयुक्त पदार्थों के अनुपात के परिवर्तन से रसायनज्ञ अधिक उपयोगी गुणोंवाले शीशे को बना सकते हैं।

सूर्य-किरणों में अल्ट्रावायलेट (Ultraviolet) किरणें भी होती हैं। ये स्वास्थ्य के लिए बड़ी लाभदायक होती हैं। खिड़कियों

में प्रयुक्त मामूली शीशे से ये किरणें निकलकर कमरों में नहीं पहुँच पातीं। रसायनज्ञों द्वारा बनाये फास्फेट शीशे (Phosphate glass) में इन किरणों के सोखने की शक्ति नहीं होती। फलतः इनके उपयोग से सूर्य-किरणों के सब उपयोगी अंश कमरे में पहुँचकर उसको अधिक स्वच्छ और स्वास्थ्यप्रद बनाते रहने हैं।

दो शीशों की प्लेट में जुड़ी हुई प्लास्टिक प्लेट से शीशे के समान पारदर्शक एक प्लेट बनाई जाती है। यह आसानी से नहीं चिटखती। बंदूक की गोली इस शीशे को छेद करके इस प्रकार निकल जाती है, मानों धातु का टुकड़ा लगा हुआ हो। शीशे और धातु के गुणों को मिलानेवाला यह विशेष प्रकार का शीशा स्यानों को सुरक्षित एवं प्रकाशमय रखने के लिए काफ़ी प्रयुक्त होता है। मोटर की खिड़कियों में लगा शीशा साधारणतः इसी प्रकार का होता है।

रंगीन शीशे

शीशे के बनाने में प्रयुक्त बालू में फ़्लेक्स सिलोकेट नाम की थोड़ी अशुद्धि रहती है। इससे शीशे में थोड़ा-सा हल्का हरा रंग रहता है। बिल्कुल रंगहीन शीशा इन अशुद्धियों को दूर करने पर प्राप्त होता है।

शीशे को पिघलाते समय विभिन्न रासायनिक पदार्थों के मिलाने से सुन्दर रंगों के शीशे बनाये जा सकते हैं। क्यूप्रस ऑक्साइड मिलाने से गहरे लाल रंग का शीशा बनाया जाता है। १ प्रतिशत सेलीनियम और थोड़ा कैडमियम सल्फ़ाइड मिलाने पर मोटरों के पीछे लगा हुआ लाल शीशा बनाया जाता है। २ प्रतिशत सेलीनियम ऑक्साइड मिलाने से

पीला शीशा बनता है। अम्बर शीशा लोहे की सल्फाइड को मिलाने से बनाया जाता है। हरे शीशे में क्रोमियम ऑक्साइड मिलाई जाती है। कोबाल्ट ऑक्साइड मिलाने से गहरे नीले रंग का शीशा बनाया जाता है। अनेक प्रकार के रासायनिक पदार्थों के मिलाने से रंगीन शीशों के विविध प्रकार प्राप्त किये जा सकते हैं।

लेंस

लेंसों के बनाने में यदि साधारण शीशे का उपयोग किया जाय तो उससे इच्छित प्रकार के नम्बरों के शीशे बनाने में बड़ी कठिनाई होती है। मामूली शीशे से सूर्य-प्रकाश की किरण अपने वास्तविक सात रंगों में टूट सकती है। यदि इससे बने लेंस का उपयोग किया जाय तो सब वस्तुओं के विभिन्न रंगों के दिखाई देने की सम्भावना होती है। इस कठिनाई को दूर करने के लिए शीशा बनाने के पदार्थों में बोरोन, सीरियम आदि की ऑक्साइड का प्रयोग किया जाता है। इनके उपयोग से लेंस के लिए उपयुक्त प्रकार का शीशा बनाया जा सकता है। क्राउन और फ़्लिट (Crown and Flint) शीशे इसी प्रकार के होते हैं।

सर विलियम क्रुक्स एक प्रसिद्ध रसायनज्ञ थे। वह ऐसा शीशा बनाना चाहते थे जिससे नेत्रों की, अल्ट्रावायलेट (Ultraviolet) और इन्फ्रारेड (Infrared) दोनों, किरणों से, एक साथ रक्षा की जा सके। वह ऐसे दो प्रकार के शीशे बनाने में सफल हुए जिनके प्रयोग से एक प्रकार की किरणों से नेत्र की रक्षा की जा सकती थी। आप ही के नाम पर क्रुक्स लेंस बनना आरम्भ हुए, जो आज भी काफ़ी प्रचलित हैं।

पास और दूर की चीजों को देखने के लिए पहले अलग-अलग चश्मों का प्रयोग करना होता था, किन्तु रसायनज्ञ की सहायता से ऐसे लेंस बनाये जा सकते हैं, जिनसे दोनों काम एक साथ ही लिये जा सकें। दो लेंसों को इस खूबी के साथ जोड़ा जाता है, जिससे उनके जुड़ने के स्थल तक का भान नहीं होता।

यद्यपि लेंसों का प्रयोग भौतिक-शास्त्रवालों के क्षेत्र में है, तथापि उनके बनाने के लिए उपयुक्त पदार्थ बताना रसायन का कर्तव्य है। अच्छे लेंस रसायनज्ञ की प्रयोगशाला में ही बनते हैं।

प्रतिबिंब बनानेवाले शीशे

घर और व्यक्ति दोनों को ही सजाने के लिए ऐसे शीशों का बड़ा महत्त्व है। एक समय था जब ऐसे शीशे पारा घिसने से बनाये जाते थे। आजकल अच्छे प्रतिबिंब बनानेवाले शीशे इस प्रकार से बनाये जाते हैं:—

पहले शीशे की सतह को रासायनिक पदार्थों से खूब साफ़ किया जाता है, जिससे इस पर जमाई जानेवाली सतह भली भाँति जम पके। इसके पश्चात् चाँदी के योगिक के घोल में रासायनिक पदार्थों के मिलाने से चाँदी के महीन-महीन कण शीशे की सतह पर बिछा दिये जाते हैं। कई बार इस विधि को दोहराने पर चाँदी के कण, जो अधिक महीन होने के कारण काले दिखाई देते हैं, एक सजातीय सतह बना देते हैं। इस सतह को सुरक्षित रखने के लिए पेंट लगा दिया जाता है।

इस विधि में प्रयुक्त विभिन्न रासायनिक पदार्थों की घोल में मात्रा,

उनका अनुपात एवं उपयुक्त तापक्रम को बताना रसायनज्ञ का कार्य है। इससे शीशे पर चाँदी के महीन कणों को सजातीय, मजबूत और टिकाऊ सतह बनती है। इस विधि से शीशे सस्ते और अच्छे बनाये जा सकते हैं।

घिसने और काटने वाले पदार्थ

पहले हीरे को काटने से प्राप्त चूर्ण और टुकड़ों का इस कार्य के लिए उपयोग होता था। हीरे को केवल दूसरा हीरा ही खुरच सकता है, क्योंकि प्रकृति में पाया जानेवाला सबसे सख्त पदार्थ यही है। रक्त-मणि (Garnet) और कारंडम (Corrundum, अलूमिनियम आक्साइड के प्राकृतिक रवे) का भी इस कार्य के लिए उपयोग होता है।

रसायनज्ञों ने इनके अतिरिक्त अन्य पदार्थ भी बनाये हैं। सिलिकॉन कार्बाइड (कार्बोरंडम, ऐलंडम, या ऐलाक्साइट) इन सबमें अधिक महत्वपूर्ण है। कारंडम को भी कृत्रिमरूप से बनाया गया है। बोरॉन कार्बाइड (जिसे नाब्राइड कहकर बेचा जाता है), टंगस्टन कार्बाइड आदि अन्य अच्छे घिसनेवाले पदार्थों को रसायनज्ञ ने जन्म दिया है, जिनका काफ़ी उपयोग होता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि शीशे में प्रयुक्त पदार्थों की मात्रा एवं उनके अनुपातों के निर्धारण से शीशे के उत्पादन में वृद्धि की जा सकती है; शीशे में अन्य पदार्थों को मिला करके उसको अधिक उपयोगी बनाया जा सका है; विभिन्न रंगीन पदार्थों से उसकी सुन्दरता बढ़ाई गई है; प्रतिबिम्ब बनानेवाले शीशों में चाँदी की सतह को मजबूत

करने के लिए उपयुक्त धोलों को बनाया गया है और शीशे के काम करनेवालों के लिए अनेक महत्त्वपूर्ण घिसनेवाले पदार्थ बनाये गये हैं। रसायन ने शीशे की उपयोगिता, सुन्दरता और मात्रा सबमें वृद्धि की है।



सुगंधित पदार्थ

[सुगंधित पदार्थों के मुख्य अवयव; खुशबू निकालने की विधियाँ; कृत्रिम सुगंधित द्रव्य; भोजन के सुगंधित पदार्थ]

सुगंधित पदार्थों के मुख्य अवयव

पहले जितने भी सुगंधित पदार्थों का प्रयोग होता था, वे सब प्रकृति में पाये जाते थे। अब उनको रासायनिक विधियों से भी बनाया जा सकता है। फलतः अब अनेक प्रकार के सुगंधित पदार्थ सुलभ हैं।

साधारणतः सुगंधित पदार्थ के तीन मुख्य अवयव होते हैं—(१) घोलक, (२) खुशबू और (३) उसको स्थायित्व देनेवाले पदार्थ। इत्र को यदि शीशी से सूँघा जाय तो कोई खुशबू नहीं आती। किन्तु जरा-सा इत्र निकालकर जब हाथ पर घिसा जाता है तब ही उसकी खुशबू फैलती है। मनुष्य की इंद्रियों में नाक सबसे कमजोर है। हलकी खुशबू को नाक सूँघ पाती है, तेज एवं गाढ़ी खुशबू का नाक को भान नहीं होता। अतः खुशबुओं को फूल के समान भीनी बनाने के लिए हलका करनेवाले घोलकों को मिलाना होता है। आमतीर से सब खुशबुओं के लिए इथाइल एल्कोहल और साफ़ स्पिट का उपयोग होता है।

कुछ प्राकृतिक पेड़ों के विशेष भागों से खुशबू निकाली जाती है।

गुलाब, चमेली, लैवंडर की खुशबू पुष्पों से निकाली जाती है; खस की उसके पेड़ की जड़ों से; पिपरमिट और यूक्लिप्टस की उसकी पत्तियों से; संतरे और नींबू की उसके फलों के छिलके से; पेड़ की छालों और गोंद से भी खुशबू प्राप्त होती है। इन विभिन्न स्रोतों से पूर्णरूप से खुशबू निकालने की ऐसी विधि बताना, जिससे उसके गुण नष्ट न हों, एक कुशल रसायनज्ञ का कार्य है।

खुशबू को स्थायित्व देने के लिए रसायनज्ञ ने कुछ विशेष पदार्थ बनाये और बताये हैं। ऐसे पदार्थों की संख्या कम है। इनकी सूक्ष्म मात्राओं के मिलाने से ही खुशबुओं को अधिक दिनों तक रखा जा सकता है।

खुशबू निकालने की विधियाँ

खुशबू निकालने की सबसे सरल विधि यह है कि सुगंधित पदार्थ को यांत्रिक विधियों से खूब दबाया जाय। निचोड़े हुए रस में खुशबू आ जाती है, किन्तु इस विधि से खुशबू का अल्पांश ही निकल पाता है।

दूसरी विधि में सुगंधित पदार्थ—जैसे फूल की पत्तियाँ—की महीन पर्त बिछा ली जाती है। इसके ऊपर विशेष चिकने पदार्थ (सुअर की चर्बी) लगे हुए शीशे के फ्रेम रख दिये जाते हैं। फ्रेम को दबाने के लिए अन्य फ्रेम भी रख दिये जाते हैं। लगभग २४ घंटे बाद पत्तियों की खुशबू फ्रेम के चिकने पदार्थ में आ जाती है। रोज-रोज पत्तियाँ बदलने पर चिकना पदार्थ थोड़े दिनों में खुशबू से सम्पृक्त हो जाता है। इस विधि से हलकी खुशबुओं को भी पृथक् किया जा सकता है किन्तु इसमें मेहनत बहुत पड़ती है और खुशबू की थोड़ी मात्रा ही तैयार हो पाती है।

रसायनज्ञों ने पेट्रोलियम ईथर आदि अनेक घोलक ऐसे बनाये

हैं, जिनमें सुगंधित पदार्थों को रखने से घोलक में खुशबू आ जाती है। गुलाब के फूल की पत्तियों को तांबे के बर्तन में रख दिया जाता है। इनके ऊपर पेट्रोलियम ईथर बूंद-बूंद टपकता रहता है। बर्तनों के अंदर घोलक की वाष्प का दबाव जब कम कर दिया जाता है तो थोड़ी-सी गरमी पा करके ही द्रव उबलने लगता है। घोलक की वाष्प के साथ-साथ गुलाब की खुशबू निकल आती है। इसको ठंडा करने पर घोलक में खुशबू आ जाती है, जिसको आसानी से अलग कर लिया जाता है।

भपके से खुशबू पृथक् करने की विधि सबसे अधिक प्रयोग में आती है। सुगंधित पदार्थों को बड़े-बड़े रिटार्टों में रख दिया जाता है। उनके ऊपर पानी की भाप चलाई जाती है। जल-वाष्प के साथ-साथ खुशबू भी आ जाती है। वाष्प को ठंडा करने पर खुशबू, जो साधारणतः पानी में अघुलनशील होती है, अलग हो जाती है।

कृत्रिम सुगंधित द्रव्य

रसायनज्ञों द्वारा बनाये सुगंधित पदार्थ तीन प्रकार से प्राप्त किये जाते हैं। कुछ सुगंधित पदार्थ सस्ते स्रोतों से आसानी से निकाल लिये जाते हैं। विदेशों में जिरेनियम नाम का एक पौधा काफ़ी उगता है। इसकी सुगंध गुलाब से मिलती है। विदेशों में गुलाब कठिनाई से उगता है, इसलिए उसकी-सी खुशबू जिरेनियम वृक्ष से प्राप्त की जाती है। ऐसे प्रकार के पदार्थों का स्रोत प्रकृति ही होती है किन्तु उनको खोजना रसायनज्ञ का काय है। सरलता से पाई जानेवाली खुशबू द्वारा कठिनाता से प्राप्त की जानेवाली खुशबू की माँग को पूरा किया जाता है।

कपूर, मुस्क (कस्तूरी) आदि कृत्रिम पदार्थों को बनाने के लिए ऐसा

नहीं किया जाता। रसायनज्ञों ने इनके अणुओं का अध्ययन करके उनकी रचना ज्ञात कर ली। फिर इस रचना से मिलते-जुलते अन्य पदार्थों से आरम्भ करके इन पदार्थों को तैयार कर लिया। अतः इन पदार्थों का स्रोत प्रकृति ही है, किन्तु आंशिक रूप में। कृत्रिम सुगंधित पदार्थ प्राकृतिक द्रव्यों से बिलकुल मिलते-जुलते हैं। किन्तु एक बात ध्यान देने की है—प्राकृतिक कपूर में कपूर के अतिरिक्त और भी अन्य पदार्थ सूक्ष्म मात्रा में होते हैं, किन्तु रासायनिक विधि से बनाये कपूर में केवल कपूर ही होता है। कृत्रिम कपूर से केवल कपूर का ही काम लिया जा सकता है, अन्य पदार्थों का नहीं। बहुधा सुनने में आता है—“जैसी यह चीज पहले आती थी, अब नहीं आती।” इसका कारण यह है कि रसायनज्ञ कृत्रिम पदार्थों में वस्तु का शुद्ध रूप तैयार करते हैं। किन्तु प्रकृति में इस शुद्ध रूप के साथ-साथ और भी वस्तुएँ होती हैं—ये लाभदायक भी हो सकती हैं और हानिकर भी। अतः प्राकृतिक वस्तुओं का उपयोग समझ-बूझ कर करना चाहिए।

तीसरी विधि में कृत्रिम पदार्थ पूर्णरूप से रासायनिक विधि से ही बनाये जाते हैं। यह प्राकृतिक पदार्थों के समान हो सकते हैं या उनकी सुगंध से मिलते-जुलते। बेंजेलडीहाइड में कड़ुवे बादाम की गंध आती है; नाइट्रोबेंजीन में एक विशेष प्रकार की तीखी गंध होती है; डाईमिथाइल हाइड्रोक्वीनोन में नरगिस के पुष्पों की सुगंध आती है; सिनेमिक ऐल्डीहाइड में दालचीनी की-सी खुशबू होती है। इसी प्रकार के और भी अनेक पदार्थ नित्य प्रति काम में आते हैं।

भोजन के सुगंधित पदार्थ

स्वाद में बहुत कुछ स्थान सुगंध का भी रहता है। जुकाम में नाक

की सूंधने की शक्ति कम हो जाती है, इसलिए भोजन भी कम स्वादिष्ट मालूम पड़ता है। रसायनज्ञों ने इस तथ्य से परिचित होकर अनेक सुगंधित द्रव्य बनाये हैं, जिनका खाद्य पदार्थों के साथ उपयोग होता है।

संतरे और नींबू की खुशबू ऊपर बताई गई सरल विधि से बनाई जा सकती है। इनके अतिरिक्त वैनीला का सबसे अधिक प्रयोग होता है। मेक्सिको में पाये जानेवाले एक वृक्ष से इसको निकाला जाता था। जब इसकी माँग बढ़ी तो लकड़ी की लुगदी से लिग्निन सल्फोनिक एसिड प्राप्त किया गया और इससे वैनीलीन बनाया गया। इसका वैनीला के साथ काफ़ी प्रयोग किया जाता है।

मिथाइल एन्थ्रानिलेट में अंगूर की-सी खुशबू आती है; ईथाइल ब्यूटिरेट में ईख की मदिरा की-सी। डाई ऐसीटाइल और ऐसीटाइल मिथाइल कार्बिनाल मक्खन के हलके रंग और हलकी गंध को उत्पन्न करने के लिए मिलाये जा सकते हैं।

कृत्रिम सुगंधित द्रव्यों को बनाने का ध्येय फूलों की सुगंधों से होड़ करना और खाद्य पदार्थों को अधिक रुचिकर बनाना है। अधिकांशतः इन सस्ते पदार्थों को असली टहराकर कृत्रिम वस्तुओं के अधिक मूल्य लिये जाते हैं। प्रकृति के रहस्यों को समझने के लिए रसायनज्ञ ने अपनी विधि से कार्य किया, किन्तु खेद की बात है कि व्यापारियों ने रसायनज्ञ के परिश्रम से अनुचित लाभ उठाने की चेष्टा की है। अब तो रसायनज्ञ को जनता की स्वास्थ्य-रक्षा के लिए उसके ही बनाये कृत्रिम पदार्थों को पहिचानने के लिए मनुष्योपयोगी पदार्थों का रासायनिक विश्लेषण करना पड़ता है !

प्लास्टिक और रबड़

[प्लास्टिक; सेलुलोज से प्लास्टिक; प्रोटीन से प्लास्टिक; फ़िनोल और ऐल्डीहाइड; रबड़; वल्कनाइजेशन; कृत्रिम रबड़]

प्लास्टिक

गीली मिट्टी में एक प्रकार की लचक होती है, जिससे उसको विविध प्रकार के साँचों में ढाला जा सकता है। किन्तु इसकी बनी वस्तुएँ मजबूत नहीं होतीं। वे शीघ्र ही टूट जाती हैं। धातु की वस्तुएँ आसानी से नहीं टूटतीं, किन्तु उनके ढालने में बड़ी कठिनाई होती है क्योंकि वे साधारणतः ऊँचे तापक्रमों पर पिघलती हैं। रसायनज्ञों द्वारा बनाये प्लास्टिक-पदार्थों में मिट्टी की-सी लचक और धातुओं के न टूटने के गुण दोनों ही थोड़ी मात्रा में होते हैं। इसके अतिरिक्त ये काफ़ी हलके, टिकाऊ और मजबूत भी होते हैं। साधारणतः ये पारदर्शक भी होते हैं; पानी का इन पर कोई प्रभाव नहीं होता। रंग-बिरंगे होने के कारण ये सुंदर भी होते हैं। गुणों के इस अनुपम मेल से इन पदार्थों का बहुत उपयोग किया जाने लगा है। हमारे प्रयोग में आनेवाली अनेक वस्तुएँ इनकी बनी होती हैं। बटन, चश्मे के फ़्रेम, फ़ाउन्टेन पेन, दूध ब्रुश का हैंडिल, बिजली के स्विच, रेडियो के बक्से (Cabinets), टेलीफ़ोन, विभिन्न प्रकार के आवरण आदि पदार्थ प्लास्टिक के विभिन्न रूप हैं।

अभी हाल में अमरीका में प्लास्टिक की एक रेल तैयार की गई है। घातु के समान इन पदार्थों का उपयोग अत्यन्त विस्तृत है।

ये तीन भिन्न प्रकार के पदार्थों—(क) रूई और सेलुलोज, (ख) प्रोटीन और (ग) फिनोल एवं ऐल्डीहाइड—से बनाये जाते हैं।

सेलुलोज से प्लास्टिक

बेकार रूई के रेशों के ऊपर जब शोरे के अम्ल की अपूर्ण प्रतिक्रिया की जाती है तो पायरॉक्सिलीन नामक एक पदार्थ बनता है। पायरॉक्सिलीन (Pyroxylin) को थोड़े कपूर और ऐल्कोहल के साथ जब गरम किया जाता है तो एक मुलायम पदार्थ बनता है जिसको सेलुल्वायड कहते हैं। सबसे पहले यही प्लास्टिक बनाया गया था। जब हाथी-दाँत की कमी पड़ी तो रसायनज्ञों ने इस पदार्थ को बनाया; थोड़ा-सा काम इससे निकाला भी जा सका। विविध प्रकार के रंगों को मिलाने से इसे और सुंदर बनाने का प्रयत्न किया गया। किन्तु इसमें एक दोष भी है। इसके पिघलने का तापक्रम कम है, इसलिये उबलते पानी से ही यह मुलायम पड़ जाता है। तब भी सवा करोड़ पाँड सेलुल्वायड की प्रतिवर्ष खपत है।

इन पदार्थों के बनाने के लिए कपूर की काफी आवश्यकता होती है। जापान और फ़ारमूसा में पाये जानेवाले पेड़ों से यह निकाला जाता था। जब इसकी माँग बढ़ी तो रसायनज्ञों ने इसको कृत्रिमरूप से बनाने की विधि ज्ञात कर ली। अब अधिकांश कपूर कृत्रिमरूप से ही बनाया जाता है।

एक विशेष प्रकार का सेलुल्वायड बड़ा उपयोगी होता है। इसको

बनाने के लिए पहले विशेष रीति से बनी पायराक्सिलीन में थोड़ा कपूर डाला जाता है, फिर घोलक—मिथेनाल और एमाइल एसिटेट—इस प्रकार मिलाये जाते हैं जिससे गाढ़ा पदार्थ एकदम से नीचे बैठ जाय। इससे कपूर की मात्रा प्लास्टिक में कम रह पाती है। इसके लम्बे-लम्बे फ़ीते काट लिये जाते हैं। इनके ऊपर जिलेटिन और सिल्वर ब्रोमाइड के लेप चढ़ाने से फ़िल्म तैयार कर ली जाती है। पहले फ़िल्मों को शीशे की प्लेटों के ऊपर बनाया जाता था। चूँकि इनको मोड़ा नहीं जा सकता था, इसलिए कैमरे में बार-बार प्लेट बदलनी पड़ती थी। इस प्रकार के प्लास्टिक पदार्थ के आविष्कार से बड़ी-बड़ी रीलों का बनाना सम्भव हुआ है।

इन प्लास्टिक-पदार्थों में आग लग जाने का बड़ा भय रहता है क्योंकि ये जल्दी जल उठते हैं। इनके प्रयोग के समय काफ़ी सावधानी रखनी चाहिए।

प्रोटीन से प्लास्टिक

जब दूध खट्टा हो जाता है या जब उसमें अम्ल छोड़ दिया जाता है तो उसमें केसीन बच रहती है। इस प्रोटीन की जब फ़ार्मैल्डीहाइड (Formaldehyde) से प्रतिक्रिया की जाती है तो यह काफ़ी सख्त बन जाती है और इसमें प्लास्टिक के गुण आ जाते हैं। सफ़ेद प्लास्टिक प्रायः इसी प्रकार की होती है।

प्रोटीन प्राप्त करने के लिए सोयाबीन का भी काफ़ी प्रयोग होता है। इसकी प्रोटीन भी फ़ार्मैल्डीहाइड की प्रतिक्रिया से सख्त हो जाती है। जितने प्रकार की प्रोटीन फ़ार्मैल्डीहाइड से सख्त हो जाती है, उन-

सबका प्लास्टिक पदार्थों के बनाने में उपयोग किया जा सकता है। नवीन, सस्ते स्रोतों से प्रोटीन प्राप्त करके विभिन्न प्रकार के नवीन प्लास्टिक पदार्थ नित्य प्रति ही बाजार में आते रहते हैं।

जिन गाढ़े द्रवों से रेयान अथवा कृत्रिम कपड़े के रेशे बनाये जाते हैं, उनको ठंडा करके जमाने से इस प्रकार के प्लास्टिक पदार्थ भी बनाये जा सकते हैं।

फ़िनोल और ऐल्डीहाइड

ये दोनों ही पदार्थ ऐसे हैं जिनका बड़ी मात्रा में उत्पादन किया जा सका है। ये अपेक्षाकृत सस्ते पदार्थ हैं। विभिन्न प्रकार के फ़िनोल की जब विविध ऐल्डीहाइड से प्रतिक्रिया कराई जाती है तो दोनों के अणु आपस में मिल जाते हैं। इन दोनों के संयोग के समय पानी निकल जाता है। इन दोनों पदार्थों के अणुओं में बराबर संयोग करने की शक्ति होती है जिससे अणु का आकार बढ़ता जाता है। इस आकार-वृद्धि से बने बड़े अणु में प्लास्टिक के गुण उत्पन्न हो जाते हैं। ऐसे पदार्थों को रेज़ीन भी कहा जाता है।

हाल ही में इनका एक और उपयोग होने लगा है। विशेष प्रकार से बनाये गये कृत्रिम रेज़ीन पदार्थों में विशिष्ट प्रकार के तत्त्वों को छानने की शक्ति होती है। जैसे कुछ रेज़ीनों की मोटी तह में से यदि खारे पानी को निकाला जाय तो उसका खार दूर हो जाता है, क्योंकि जिन रासायनिक पदार्थों की उपस्थिति से पानी खारी बनता है, वे सब इस क्रिया से सरलतापूर्वक छन जाते हैं। रासायनिक पदार्थों के पृथक् करने की यह बड़ी सुगम विधि है।

ताँबा बनाने की ब्रिटेन में एक बड़ी फ़ैक्ट्री है। इसका बेकार पानी जब विशेष रेज़ीन पदार्थों से निकाला गया तो ताँबे के अल्प अंश, जो इस पानी में घुलकर समुद्र में जा पहुँचते थे, इस विधि द्वारा सरल विधि से पृथक् किये जा सके। पानी को वाष्प बनाकर उड़ाने से जो धन खर्च होता, उससे इस अल्प अंश को निकालना आर्थिक दृष्टिकोण से लाभप्रद न होता। किन्तु इस विधि से ईंधन का खर्च बचा और सरल विधि से ताँबा निकाला जा सका। इन पदार्थों के इसी प्रकार के अन्य उपयोग भी है।

रबड़

यह प्लास्टिक से अधिक लचकीला पदार्थ है। यह देर में घिसता है और साधारण तापक्रम का इस पर कोई विशेष प्रभाव नहीं होता। फलतः इसका जूते, पेटी, बरसाती, गेटिस, डायफ़्राम, लचकीली डारी आदि पदार्थों के बनाने में बहुलता से प्रयोग होता है।

दक्षिण अमरीका, ईस्ट और वेस्ट इंडीज तथा पूर्वी एशिया के टापुओं में विषुवत् रेखा के समीप रबड़ के वृक्ष पाये जाते हैं। इनके तनों में तेज़ छुरों से स्थान-स्थान पर फाँके काट ली जाती हैं। इनसे एक दिन में लगभग दो तोला दूध-जैसा पदार्थ निकलता है, जो नीचे लगे बतनों में इकट्ठा होता रहता है। इसमें जब एसिटिक एसिड आदि अन्य पदार्थ डाल दिये जाते हैं तो ठोस रबड़ नीचे बैठ जाता है। एक वृक्ष से एक वर्ष में ३-४ सेर तक ठोस रबड़ प्राप्त किया जा सकता है।

बल्कनाइजेशन

प्राकृतिक रबड़ से बने पदार्थ गर्मियों में मुलायम और चिपचिपे हो

जाते हैं। इनसे एक विशेष प्रकार की दुर्गंध निकलने लगती है। जाड़े में वे सख्त होकर भुरभुरे बन जाते हैं। चार्ल्स गुड ईयर नामक एक रसायनज्ञ ने १० वर्षों के कठिन परिश्रम के पश्चात् ज्ञात किया कि रबड़ को यदि गंधक मिलाकर गरम किया जाय तो उसके ये सब दोष दूर हो जाते हैं; साधारण तापक्रम का उस पर कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ता। इसको वल्कनाइजेशन (Vulcanization) कहते हैं। आजकल प्रयोग में आनेवाले रबड़ के प्रायः सब पदार्थ वल्कनाइज किये हुए रबड़ से बनाये जाते हैं।

कृत्रिम रबड़

दूसरे विश्वव्यापी युद्ध के पहले ६० प्रतिशत रबड़ प्राकृतिक स्रोतों से प्राप्त किया जाता था; अब ५० प्रतिशत से अधिक कृत्रिम रबड़ का प्रयोग किया जाता है। युद्ध के समय जब रबड़ की माँग बढ़ी तो रसायनज्ञों ने रबड़ के ऐसे पदार्थों को बनाने की सुगम विधियाँ निकालीं। वास्तव में प्राकृतिक रबड़ का रसायनज्ञ ने संश्लेषण नहीं किया है; कृत्रिम रबड़ में उन पदार्थों को शामिल किया जाता है जिनके गुण प्राकृतिक रबड़ से मिलते-जुलते होते हैं। ब्यूटाडाईन, स्टीरीन, ऐक्रीलो-नाइट्राइल, क्लोरोप्रीन, निओप्रीन आदि पदार्थों को सरल रासायनिक क्रियाओं से व्यापारिक मात्रा में सस्ते तरीके से बनाया जा सकता है। विशेष परिस्थितियों में ये पदार्थ जमने लगते हैं और रबड़-जैसे पदार्थ बनाते हैं। रसायनज्ञों द्वारा बनाये कृत्रिम रबड़ में कुछ ऐसे भी होते हैं जो वल्कनाइज किये हुए प्राकृतिक रबड़ से भी अच्छा काम देते हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि वल्कनाइजेशन-विधि को ज्ञात करके रसायनज्ञों ने

प्राकृतिक रबड़ को अधिक उपयोगी बनाया और इसके साथ-साथ नए स्रोतों से ऐसे कृत्रिम रबड़ बनाये जो और अधिक उपयोगी होते हैं। रबड़ पर किये गये रासायनिक अनुसंधान से स्पष्ट है कि रसायन की सहायता से बनाये गये पदार्थ प्राकृतिक वस्तुओं से भी अच्छे बन सकते हैं।

बेकार रूई और चिथड़ों, बेकार जानेवाले प्रोटीन पदार्थों से रसायनज्ञ ने प्लास्टिक के रूप में अत्यन्त महत्वपूर्ण पदार्थ बनाये हैं; बेकार वस्तुओं से उपयोगी वस्तुएँ बना करके अन्य बेकार जानेवाले पदार्थों को बचाया गया है ; प्राकृतिक रबड़ को अधिक उपयोगी बनाया गया है और उसके-जैसे गुणोंवाले अन्य अधिक उपयोगी पदार्थों का आविष्कार किया गया है। रसायनज्ञ की सेवा का क्षेत्र कितना विस्तृत है !

रसायन और युद्ध

[नवीन स्रोतों की खोज ; स्फोटनशील पदार्थ ; शत्रु को अक्रियाशील बनाना ; रासायनिक युद्ध से नाश]

युद्ध में कुछ इतना अधिक उत्साह आ जाता है कि मनुष्य प्राणों की बाजी लगाकर शत्रु के नाश के लिए तत्पर हो जाते हैं। युद्ध के पागलपन में जब जीवन का ही महत्त्व नहीं रहता तो पदार्थों का तो कहना ही क्या ! जिन विधियों से भी हो सके विभिन्न पदार्थों द्वारा शत्रु को नष्ट करने की बात सोची जाती है। पदार्थ-जगत् का ज्ञानी रसायनज्ञ है ; इसलिये युद्ध में भी उससे बड़ी सहायता ली जाती है।

नवीन स्रोतों की खोज

आधुनिक युद्ध के समय देश के आयात-निर्यात में बड़ी बाधा रहती है। शांतिकाल में जो कच्चा माल देश में नहीं उत्पन्न होता उसको साधारणतः विदेशों से मँगाया जाता है। किन्तु युद्ध के समय शत्रु चालाकी से इन कच्चे मालों के आने का रास्ता रोक देता है। फलतः सम्पूर्ण युद्धकाल के लिए देश की आर्थिक व्यवस्था गड़बड़ हो जाती है।

पिछले संसारव्यापी युद्ध में जर्मनी को रबड़ और पेट्रोलियम की

बड़ी आवश्यकता पड़ गई। पेट्रोलियम के बिना किसी प्रकार के इंजन नहीं चलाये जा सकते थे और अन्य उद्योगों का चलाना भी कठिन था। जर्मनी के हाइडिलबर्ग विश्वविद्यालय के रसायनज्ञों ने कोयले और जल से पेट्रोलियम को बना लिया। वस्तुतः इसके बनाने की विधि १८३६ में ही ज्ञात थी किन्तु कोयले और जल की पूर्ण रासायनिक क्रिया के लिए विशेष परिस्थितियों को जान करके पेट्रोलियम का व्यापारिक उत्पादन इन रसायनज्ञों द्वारा किया जा सका। इसी प्रकार ब्यूटाडाईन से, जिनको आसानी से बनाया जा सकता है, रबड़ के ऐसे गुणोंवाले पदार्थ बना लिये गये। कहा जाता है कि रसायन के इन्हीं विशेषज्ञों ने जर्मनी की हार को तीन साल तक बचाये रखा।

इसी प्रकार अमरीका में पोटाश की बड़ी आवश्यकता थी। शांति-काल के समय यह आवश्यक पदार्थ विदेशों से मँगा लिया जाता था, क्योंकि अमरीका में सस्ते तरीके से इसको बनाने के लिए उपयुक्त पदार्थ न थे। युद्ध के समय जब इसकी माँग बढ़ी तो रसायनज्ञों ने विविध स्रोतों की परीक्षा की। फ़ेल्डस्पार, सीमेंट की धूल और समुद्री जल से इसको निकालने की सुगम विधियाँ बताई गईं। इनसे पोटाश अपेक्षाकृत महँगा पड़ता था किन्तु आवश्यकता के समय वस्तु की प्राप्ति मुख्य ध्येय होता है, न कि उसका मूल्य।

नवीन स्रोतों की खोज से देश की युद्धकालीन आवश्यकताओं की पूर्ति के अतिरिक्त कुछ पदार्थों के उत्पादन में वृद्धि करना होती है। युद्ध के समय ओषधियों एवं कीटाणु-नाशक पदार्थों की काफ़ी आवश्यकता होती है। ऐसे समय में सैद्धान्तिक अध्ययन को छोड़कर सब रसायनज्ञ इस प्रकार की आवश्यक समस्याओं को सुलभाने में व्यस्त हो जाते हैं।

युद्धकालीन समय में खाद्य पदार्थों की रक्षा की भी आवश्यकता होती है। यदि सौभाग्यवश फ़सल अच्छी हो जाती है तो आवश्यकता से अधिक अनाजों को सुरक्षित रख लिया जाता है, नहीं तो अच्छी फ़सल उगाने के लिए विभिन्न रासायनिक पदार्थों का सहारा लिया जाता है। संक्षेप में, युद्ध के समय देशवासियों और योद्धाओं के लिए हर प्रकार के सामान के जुटाने में रसायनज्ञ मुख्य भाग लेते हैं।

स्फोटनशील पदार्थ

शत्रु के विनाश के लिए रसायनज्ञों ने ऐसे पदार्थ बनाये हैं जिनमें थोड़ी-सी आग लगाने से स्फोटन—बड़ी मात्रा में गैस का अचानक निकलना—होता है। सबसे पहले बारूद का प्रयोग होता था। इसमें प्रयुक्त रासायनिक पदार्थों के ठीक अनुपात में होने की बड़ी आवश्यकता होती है। बारूद-सम्बन्धी रासायनिक अज्ञान से उसके प्रयोग में बड़ी असुविधा रहती थी—कहीं उसमें रखे-रखे ही आग लग जाती थी, या उड़ते समय पहले ही आग लग जाने से आक्रमणकारी का ही नाश हो जाता था। रसायनज्ञों ने अच्छे प्रकार की बारूद बनाकर इस प्रकार की सम्भावनाओं को दूर कर दिया।

बारूद के अतिरिक्त रसायनज्ञों द्वारा बनाये अनेक पदार्थों का आजकल प्रयोग होता है। ट्राइनाइट्रोटालुओल—टी० एन० टी०—पिकरिक एसिड, नाइट्रोग्लिसरीन, डाइनेमाइट, नाइट्रोसेलुलोज आदि अनेक पदार्थ ऐसे हैं जिनका इस कार्य के लिए काफी उपयोग होता है।

शांति के समय भी इन पदार्थों का उपयोग किया जाता है—पहाड़ों

चट्टानों, टीलों आदि को काटने या उड़ाने के लिए। इन पदार्थों को बनानेवाली कम्पनियों का कहना है कि उनका अधिकांश लाभ उनके पदार्थों के युद्धकालीन उपयोग से नहीं, प्रत्युत् शांतिकालीन उपयोग से होता है। नोबेल महोदय ने डायनेमाइट को निकाला था। इसके व्यापारिक उत्पादन से शांति के समय में ही उनको काफ़ी लाभ हुआ।

शत्रु को अक्रियाशील बनाना

स्फोटनशील पदार्थों के साथ अनेक ऐसे पदार्थों का भी युद्ध में प्रयोग होता है, जिससे शत्रु को अचम्भे में डालकर या सैनिकों को अस्थायीरूप से अक्रियाशील बनाकर अचानक आक्रमण किया जा सकता है।

क्लोरोएसिटोफ़िनोन एक ऐसी गैस है जिसके आँख में लगाने से आँसुओं की झड़ी लग जाती है; अस्थायीरूप से सैनिक किसी प्रकार के काम करने में असमर्थ हो जाते हैं। ऐसे समय, शत्रुओं पर आक्रमण करने से बड़ा लाभ होता है। भीड़ को हटाने में आँसू लानेवाली गैस यही है। रसायनज्ञ ने और भी अनेक पदार्थ ऐसे बनाये हैं जिनसे थोड़ी देर के लिए जोर से छींकें आना आरम्भ हो जाती हैं या बदन में खुजली होने लगती है। ऐसे रासायनिक पदार्थों का अस्थायी प्रभाव होता है; स्थायी हानि साधारणतः नहीं होती।

टाइटेनियम क्लोराइड की फुहार जब हवा में छोड़ दी जाती है तो धुआँरहित एक पर्दा-सा हवा में टँग जाता है। इस पर्दे के पीछे सैनिक भाग निकलते हैं या अन्य गुप्त रीति से किये जानेवाले कार्यों

को समाप्त कर लेते हैं। ऐसे रासायनिक पदों से अपेक्षाकृत कम खतरे में काम किये जा सकते हैं।

आक्रमणकारियों को सुरक्षित रखने के लिए और शत्रु की तुलना में उनको अधिक अवसर देने के लिए रसायनज्ञ ने और भी कार्य किये हैं। बन्दूक की गोली से अभेद्य इस्पातों के बड़े टैंक बनाये जाते हैं, जिनमें बैठे सैनिक काफ़ी सुरक्षित रहते हैं। बन्दूक की गोली में कुछ विशेष पदार्थ लगा दिये जाते हैं, जो गोली के चलते समय वायु की रगड़ से चमकते रहते हैं। इन गोलियों द्वारा सरलता से जाना जा सकता है कि शत्रु पर आक्रमण इच्छित प्रकार से किया जा सका है, या नहीं।

रासायनिक युद्ध से नाश

ऐसी कल्पना की जाती है कि रासायनिक युद्ध में वायुयान द्वारा फेंके पदार्थों से ऐसी जहरीली गैसों का प्रयोग होता है जिनसे शत्रु का शीघ्र नाश हो सकता है। किन्तु यह व्यर्थ की कल्पना है। रासायनिक पदार्थों का घातक प्रभाव तब होता है जब अधिक मात्रा में उनका व्यक्ति के ऊपर अचानक प्रभाव होता है। खुले स्थानों में इन गैसों के फैल जाने से उनकी प्रभाव-शक्ति कम हो जाती है। कुछ जहरीली गैसों के प्रभाव से और कुछ ऑक्सीजन की कमी से व्यक्ति घुट कर मर सकता है। जब पहली बार ऐसे पदार्थों का प्रयोग किया गया तो सैनिक इस प्रकार के आक्रमण से परिचित न थे, इसलिए वे अपनी रक्षा न कर सके। किन्तु आज के सैनिकों को ऐसे युद्ध से अपेक्षाकृत कम भय लगता है।

रसायन और अर्थशास्त्र का ज्ञान ऐसा ज्ञान है जिसके ज्ञानी युद्ध के समय घर बैठे ही महत्वपूर्ण काम कर सकते हैं। रसायनज्ञ देश में आवश्यक पदार्थों का उचित मात्रा में उत्पादन कर सकते हैं; स्फोटनशील, शत्रुओं को अक्रियाशील बनानेवाले एवं अपने सैनिकों को अधिक लाभ देनेवाले पदार्थों को बना सकते हैं। अर्थशास्त्री देश के व्यवसाय को सतुलित रख करके राष्ट्रीय धन से पूर्ण लाभ उठाने में सरकार की सहायता कर सकते हैं। रसायन-ज्ञान का विस्तार हर क्षेत्र में है।

सफ़ाई

[जल ; कूड़े और गंदे पानी की सफ़ाई ; साबुन और परिमार्जक]

जल

जल का हमारे जीवन में बड़ा महत्वपूर्ण स्थान है और इसलिए इसकी सफ़ाई सबसे अधिक जरूरी है। बिल्कुल शुद्ध जल की तो केवल प्रयोगशालाओं में ही आवश्यकता होती है और उसका बनाना भी कठिन है। जिस जल की साधारणतः आवश्यकता पड़ती है और जो नलों से हमारे घरों में आता है उसमें साबुन रगड़ने से भाग उठना चाहिए; उसको रंग, गन्ध और स्वादहीन होना चाहिए एवं उससे स्वास्थ्य पर किसी प्रकार का बुरा प्रभाव न पड़ना चाहिए। प्राकृतिक स्रोतों से प्राप्त जल में म्युनिसिपैलिटी रासायनिक पदार्थों को मिला करके:—

- (१) हर प्रकार के कीटाणुओं के नाश की चेष्टा करती है;
- (२) साबुन से भाग न उठनेवाले पदार्थों को दूर करती है;
- (३) पानी की सफ़ेदी हटाती है;
- (४) सूक्ष्म मात्रा में पाये जानेवाले रासायनिक पदार्थों को अलग करती है और

(५) आवश्यकता पड़ने पर स्वाद की वृद्धि करती है।

प्राकृतिक जल सदैव गतिशील अवस्था में नहीं रहता। कभी-कभी या कुछ स्थानों पर जल के स्थिर हो जाने से उसमें कीड़े पड़ने लगते हैं, या नदियों में जिन स्थानों पर नाले आदि मिलते हैं वहाँ पानी में मच्छर आदि उत्पन्न हो जाते हैं। इसलिए जल को प्रयोग के योग्य बनाने के लिए विभिन्न प्रकार के कीटाणुओं का नाश करना होता है। इस कार्य के लिए क्लोरीन गैस का सबसे अधिक उपयोग होता है। क्लोरीन मिलाने से जल में हाइड्रोक्लोरिक एसिड और परमाणु-अवस्था में आक्सीजन बनती है। कोई भी तत्त्व परमाणु-अवस्था में नहीं रहता; अतः वह अन्य पदार्थों से संयोग करने की चेष्टा करता है। परमाणु-अवस्था में आक्सीजन भी योगिक बनाने के लिए क्रियाशील हो जाती है, इसलिए उसकी तीव्र क्रिया जीवों को नष्ट करने लगती है। फलतः क्लोरीन-युक्त जल में कीटाणुओं का नाश हो जाता है। जहाँ क्लोरीन बनाना सुगम नहीं होता वहाँ ब्लीचिंग पाउडर मिलाने से जल में क्लोरीन उत्पन्न की जाती है। इससे भी कीटाणुओं का नाश हो जाता है। विशेष स्थानों पर जल में अमोनिया और क्लोरीन दोनों गैसों चलाई जाती हैं। मरकरी ग्रॉक लैम्प से उत्पन्न करके अल्ट्रावायलेट प्रकाश की किरणों से भी कीटाणुओं का नाश किया जाता है। कई आदि उगने को रोकने के लिए जल में तूतिया मिलाया जाता है।

कुछ कुओं के पानी में कैल्सियम, मैगनीसियम के बाई-कार्बोनेट, क्लोराइड और सल्फेट इतनी अधिक मात्रा में होते हैं जिनसे पानी खारी हो जाता है। इसमें साबुन रगड़ने से भाग नहीं उठता। नदी और तालाबों के जल में भी ये पदार्थ हो सकते हैं किन्तु इतनी अधिक मात्रा में नहीं जिससे वह कुएँ के जल के समान खारी हो जाय। इसलिए साधारणतः

म्यूनिसिपैल्टीवालों को जल से भाग उठाने के लिए रासायनिक पदार्थों को नहीं मिलाना पड़ता। किन्तु रसायनज्ञ को ऐसे पदार्थ ज्ञात हैं जिनसे पानी का खारापन दूर किया जा सकता है। जब खारी पानी को चूने, सोडा ऐश या जिब्रोलाइट आदि पदार्थों से छाना जाता है तो उसका खार दूर हो जाता है। अधिक खारी पानी को इन रासायनिक पदार्थों की बड़ी-बड़ी तहों में से छानना पड़ता है और तब वह घरों के इस्तेमाल के योग्य बन पाता है।

कभी-कभी पानी में थोड़ी सफ़ेदी रहती है। इसको हटाने के लिए रासायनिक पदार्थों को सूक्ष्म मात्राओं में ही मिलाना होता है। ऐलूमिनियम सल्फ़ेट, जिसको छाननेवाली फिटकरी कहते हैं, का इसके लिए साधारणतः प्रयोग होता है। जब क्लोरीन-युक्त जल में मरे कीटाणुओं की संख्या अधिक होती है तो उसके मिलाने पर वे भी नीचे बैठ जाते हैं।

जल में लौह की सूक्ष्म मात्रा से बड़ी हानि हो सकती है। इससे स्वास्थ्य बिगड़ सकता है और नलों में यदि यह धीरे-धीरे जमता रहे तो वे भरकर बंद भी हो सकते हैं। यदि उपर्युक्त पदार्थों के मिलाने के बाद पानी को थोड़ी देर स्थिर कर दिया जाय तो लौह हवा की आक्सीजन और इन पदार्थों से मिलकर नीचे बैठ जाता है। जल की परीक्षा से लौह को दूर करने की अन्य विधियाँ भी बताई जा सकती हैं।

यह साधारणतः सुनने में आता है कि अमुक स्थान का पानी भारी है; उससे स्वास्थ्य बिगड़ जाता है। वस्तुतः भारी पानी का कारण अन्य तत्त्वों का सूक्ष्म मात्रा में होना है। जल की रासायनिक परीक्षा से इन अशुद्धियों को ज्ञात किया जाता है और उनको दूर करने के लिए रसायनज्ञों द्वारा निर्दिष्ट पदार्थों का उपयोग होता है। इस तरह

से रसायनज्ञों ने भारी पानी के अस्वास्थ्यकर अवयवों को दूर करने की चेष्टा की है।

किसी-किसी भील, तालाब या कुएँ का पानी मीठा होता है—मीठे का अर्थ कुछ उपयोगी रासायनिक पदार्थों की उपस्थिति है। किन्हीं स्थानों के पानी में इन पदार्थों के न होने से पानी का स्वाद अच्छा नहीं लगता। यदि भपके से प्राप्त (डिस्टिल्ड) जल को पिया जाय तो वह फीका-सा जान पड़ता है। वस्तुतः हम शुद्ध जल को नहीं, किन्तु मीठे जल को पसंद करते हैं; अधिकतर मोठा जल उपयोगी होता है। रसायनज्ञ जल-विश्लेषण से बता सकते हैं कि किन पदार्थों के मिलाने से जल का स्वाद बढ़ाया जा सकता है।

इन बातों को ध्यान में रखकर म्युनिसिपैल्टियों द्वारा रासायनिक विधि से शुद्ध किया जल नित्य प्रति हमारे काम में आता है। यह स्पष्ट हो गया होगा कि जल को साफ़ करने में केवल कुछ गन्दे पदार्थों को हटाना ही नहीं पड़ता, किन्तु कभी-कभी उसमें कुछ मिलाना भी पड़ता है।

कूड़े और गन्दे पानी की सफ़ाई

हमारे घरों में दो प्रकार का कूड़ा होता है—एक तो भाड़-बुहार कर एकत्रित किया हुआ ठोस कूड़ा और दूसरा नाली आदि से निकलने वाला गन्दा पानी। ठोस कूड़े को विभिन्न साधनों से एकत्रित करके शहर से बाहर ले जा करके फेंक दिया जाता है। इससे खाद भी बनाई जा सकती है; इसलिए बड़े-बड़े गढ़ों को खोद करके उसमें यह फेंक दिया जाता है और इसको सड़ने दिया जाता है। इसमें साधारणतः रसायनज्ञ की आवश्यकता नहीं पड़ती।

गन्दे पानी में यदि अधिक पानी मिला दिया जाय तो गन्दगी चलते पानी में अपने आप नीचे बैठने लगती है। इसलिए स्नान-गृहों से निकली नालियों के गन्दे पानी को साफ़ करने की आवश्यकता नहीं होती। किन्तु मलनिष्कासन द्वारा निकल पदार्थों को साफ़ करने में रसायनज्ञ की आवश्यकता पड़ती है।

मल-निष्कासन की नालियों के सब पदार्थ बड़े-बड़े टैंकों में एकत्रित किये जाते हैं। इसके पश्चात् उसमें हवा चलाई जाती है। इससे कार्बन डाई आक्साइड और मीथेन गैस फेने के रूप में ऊपर आ जाती है। विदेशों में इन गैसों से इंजन चलाने का काम लिया जाता है। हमारे यहाँ ये गैसें बेकार जाती हैं। इसके पश्चात् टैंकों में जल को स्थिर करने से सब मल नीचे बैठ जाता है और पानी ऊपर निथर आता है। पानी में क्लोरीन मिला दी जाती है और उसको बहने दिया जाता है। विशेष कीटाणुओं से मल-सड़ाया जाता है। इस क्रिया द्वारा मिट्टी-जैसे पदार्थ नीचे बैठने लगते हैं और जल ऊपर निथर आता है। जल को बहा दिया जाता है। समय-समय पर टैंक को साफ़ करने की आवश्यकता होती है। इससे निकले पदार्थों का खाद के रूप में प्रयोग किया जा सकता है। इनको जला भी दिया जाता है।

साबुन और परिमार्जक

इसके भाग में गंदगी और धूल के कणों को दूर करने की अनुपम क्षमता होती है। हर प्रकार की सफ़ाई के लिए इनकी आवश्यकता पड़ती है। विविध प्रकार के कार्यों के लिए रसायनज्ञों ने विभिन्न प्रकार की साबुनें बनाई हैं।

तेल या चिकने पदार्थों को कास्टिक सोडा या कास्टिक पोटाश या अन्य क्षारों के साथ मिलाने से साबुन मिलती है। सब चिकने पदार्थों में तीन प्रकार के अम्ल पाये जाते हैं—ओलिक, पॉमिटिक और स्टियरिक। ये ग्लिसरीन के साथ संयुक्त अवस्था में होते हैं। इन तीनों में यदि क्षार मिलाया जाय तो तीन प्रकार के विविध गुणोंवाले साबुन बनते हैं। किन्तु एक अम्ल से ही बने साबुन में इच्छित प्रकार के गुण नहीं होते, इन तीनों के विविध मेलों से ही बनी साबुन उपयोगी होती है। अच्छी साबुनों में किस अम्ल को कितना होना चाहिए और क्यों, इसकी परीक्षा रसायनज्ञ करते हैं।

प्रकृति में पाये जानेवाले चिकने पदार्थों में इन अम्लों के विविध अनुपात में होने से ही उनके विशिष्ट गुण होते हैं। फलतः उनसे बनी साबुनों के भिन्न-भिन्न गुण होते हैं। नारियल के तेल से बनाई गई साबुन सख्त होती है किन्तु पानी में घुलनशील होने के कारण घिसती जल्दी है, इसलिए इसका उपयोग सामुद्रिक जल के साथ किया जाता है। खजूर के तेल में भूरा रंग होता है। रंगहीन बना करके इसकी बनी साबुन का स्नान के लिए उपयोग किया जाता है। रेड़ी के तेल से बनी साबुन पारदर्शक होती है। घटिया मेल के जैतून के तेल से बनी साबुन बहुत बढ़िया होती है। कपड़ा धोनेवाली साबुनों में भी थोड़ा जैतून का तेल मिलाया जाता है। विभिन्न प्रकार के कपड़ों को धोने के लिए विविध गुणोंवाली साबुन बनाई जाती है। साबुन के पाउडर में लगभग २० प्रतिशत साबुन, ४० प्रतिशत सोडियम कार्बोनेट और बाक़ी पानी होता है। वस्तुतः साबुन को बहुत अधिक सुखाने पर सोडियम कार्बोनेट के मिलाने से साबुन का पाउडर बन जाता है।

क्षार के मिलाने का भी बड़ा प्रभाव होता है। जिन साबुनों को

बनाने में कास्टिक सोडा मिलाया जाता है, वे अधिक सख्त होती हैं। कास्टिक पोटाश से बनी साबुन मुलायम होती है और इसका स्नान के लिए उपयोग किया जा सकता है। कास्टिक सोडा और पोटाश के अतिरिक्त और भी अन्य क्षारों का प्रयोग हो सकता है जैसे कैल्सियम, बेरियम मैगनीसियम हाइड्राक्साइड आदि। लेकिन इनसे बनी साबुन पानी में अघुलनशील होने के कारण चिपचिपी होती है; इसलिए ये व्यावहारिक नहीं हैं।

कुछ विशेष रासायनिक पदार्थों के मिलाने से इनके गुणों में काफ़ी अन्तर किया जा सकता है। साबुन में यदि थैलियम के लवण मिला दिये जाते हैं तो लोमनाशक (बाल साफ़ करनेवाली) साबुन बन जाती है। जस्ते की साबुन (ज़िंक स्टियरेट) का डाक्टर लोग प्रयोग करते हैं।

कुछ साबुनों का खारी पानी के साथ भी उपयोग हो सकता है। इसमें साबुन को अधिक घुलनशील नहीं बनाया जाता, किन्तु चिकने पदार्थों के स्थान पर उपयुक्त प्रकार के ऐल्कोहलों का प्रयोग किया जाता है। ऐसे पदार्थ साधारणतः 'परिमार्जक' कहलाते हैं। 'ड्रेफ़्ट' नाम का परिमार्जक (Detergent) देखने में साबुन-जैसा लगता है किन्तु यह खारी पानी के रासायनिक पदार्थों के साथ संयोग नहीं करता। इसलिए इसका नाविक लोग काफ़ी प्रयोग करते हैं।

इन सबसे बिलकुल भिन्न प्रकार के रासायनिक पदार्थों—ट्राई-सोडियम फ़ास्फ़ेट और सोडियम सिलीकेट आदि का भी परिमार्जक के रूप में उपयोग किया जा सकता है। इसके लिए नित्य प्रति हो अनुसंधान होते रहते हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि विभिन्न प्रकार के रासायनिक पदार्थों

के उपयोग से जल को शुद्ध किया जाता है ; मल आदि का नाश किया जाता है और रासायनिक ज्ञान से अच्छी और विभिन्न प्रकार की साबुनें बनाई जाती हैं। रसायन ने स्वास्थ्य-रक्षा एवं सफ़ाई के लिए कितना महत्त्वपूर्ण कार्य किया है !

स्वास्थ्य और ओषधि

[प्राकृतिक स्रोत से ओषधि; ग्रंथि-रस; रासायनिक ओषधि;
ददं कम करना; कीटाणु-नाशक पदार्थ;
जीव-नाशी ओषधियाँ]

भोजन के अध्याय में बताया जा चुका है कि रसायन ने (क) मनुष्य के शरीर की आवश्यकताओं को जान करके, (ख) खाद्य पदार्थों का विश्लेषण करके और (ग) उचित तथा उपयुक्त प्रकार के भोजन को बता करके मनुष्य को स्वस्थ बनाने में बड़ा महत्त्वपूर्ण कार्य किया है। विटामिन और सूक्ष्म मात्रा में विभिन्न तत्त्वों के ज्ञान से कुछ बीमारियाँ कैसे दूर की जाती हैं—इस पर भी प्रकाश डाला जा चुका है। इनके अतिरिक्त, रसायन ने मनुष्य को नीरोग करने की जो अन्य चेष्टाएँ की हैं, उनका इस अध्याय में वर्णन किया जायगा।

ओषधियों से रसायन का घनिष्ठ सम्बन्ध है। 'रसायन' शब्द आयुर्वेद का है। वास्तव में रसायन के ज्ञान का विकास ओषधियों और पारस पत्थर की खोज से ही आरम्भ होता है। प्राचीन काल में जब सब रसायनज्ञ पारस पत्थर की खोज में निमग्न हो गये तो उस समय के प्रसिद्ध रसायनज्ञ पारसेल्सस (Paracelsus) ने रसायनज्ञों को याद दिलाया—“रसायन का सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य ओषधियों और अमृत की खोज भी है।” यदि आज वह जीवित होते तो अपने उत्तरा-

धिकारियों के कार्य को देखकर हर्ष और आश्चर्य से रोमांचित अवश्य हो जाते।

प्राकृतिक स्रोत से ओषधि

सभ्यता के विकास के साथ-साथ मनुष्य को जड़ी-बूटियों के रूप में कुछ ओषधियाँ ज्ञात होती रही हैं। किसी के चोट लगी, रक्त बहा और उसने अनायास ही पास में लगे कुकरौंदे के पत्ते का रस उसके ऊपर चुआ लिया या घाव में पत्ती भर दी। यदि उसे लाभ हुआ तो उसने उस पौधे को ओषधि मान लिया और अवसर पड़ने पर दूसरों को अपने अनुभव से परिचित करा दिया। इस प्रकार के अनुभव क्रमशः एकत्रित होते गये। आयुर्वेदिक और यूनानी ओषधियाँ वस्तुतः इस प्रकार के एकत्रित अनुभव हैं। उनमें वर्णित ओषधियों की उपादेयता निस्संदेह है।

यहाँ पर एक महत्वपूर्ण प्रश्न उठता है और वह यह कि इन ओषधियों से हमें सदैव लाभ क्यों नहीं होता। इसके कई कारण हैं। परंतु अवस्था में बहुत दिनों तक रहने के कारण हमारे ज्ञान का क्रमिक नाश होने लगा। दवावाले पौधों को ठीक परिस्थितियों में उगाना और उनको पहिचानना तक हम भूल गये। न वैसी ओषधियाँ रहें और न वैसा ज्ञान। जब अनुभव पर आधारित ज्ञान की कोई सैद्धांतिक पृष्ठभूमि नहीं होती तब उपयुक्त साहित्य के अभाव में बहुधा उसका ऐसा ही पतन होता है।

रसायन ने जड़ी-बूटियों के पीछे एक वैज्ञानिक विचार-धारा को जन्म देकर ओषधियों के क्षेत्र में एक अपूर्व परिवर्तन किया। यदि

किसी पत्ते के रस से अमृक बीमारी में लाभ होता है, तो क्यों? क्या उस रस के सब अंश उपयोगी हैं? यदि नहीं, तो कौन-सा अंश उपयोगी है? क्या उस अंश को और दूसरे स्रोतों से प्राप्त किया जा सकता है? यदि नहीं, तो उस अंश को रस से पृथक् करने की ऐसी कौन-सी सुगम विधि है, जिससे उसकी उपयोगिता में अंतर न पड़े? इन सब समस्याओं के हल करने में रसायन ने चिकित्सकों की बड़ी सहायता की है। एक उदाहरण से यह स्पष्ट हो जायगा।

शौलमुग्र नामक वृक्ष से एक तेल निकाला जाता था। कोढ़ की बीमारी में इसके उपयोग से लाभ होता है। जब अंग्रेज भारत में आये तो वे इस तेल के लाभकारी गुणों को और आकृष्ट हुए। उन्होंने इस तेल की परीक्षा का कार्य रसायनज्ञों को सौंपा। उन्होंने ज्ञात किया कि इस तेल में कुछ विशेष प्रकार के अम्ल होते हैं जो ओषधि का काम देते हैं। ध्यान देने की बात यह है कि जब तक इन अम्लों के बारे में ज्ञान न था तो सम्पूर्ण तेल का प्रयोग करना पड़ता था, किन्तु जब उपयोगी अंश ज्ञात हो गया तो उसके निकालने की सरल विधि निकाली गई और इस प्रकार उचित ज्ञान से इसका प्रयोग दिन-पर-दिन बढ़ता गया। इस विधि से ज्ञात ओषधियों में भूल को गुजायश कम हो जाती है। दवा देने और लेने वालों को बड़ी सुविधा रहती है। हकीम या वैद्य की दवा लेते समय आप निश्चित नहीं होते कि दवा ठीक मिली है या नहीं, किन्तु केमिस्ट की दूकान से दवा लेते समय आप अपेक्षाकृत अधिक निश्चित रहते हैं। दवा से लाभ होने का प्रश्न बिलकुल दूसरा है।

विभिन्न प्रकार के पौधों से और भी अनेक उपयोगी पदार्थों को पृथक् किया गया है। चाय में से 'केफीन' को पृथक् किया गया और बताया गया कि इस पदार्थ के कारण ही उसमें उत्तेजना-

शक्ति होती है। सिनकोना नामक पेड़ की छाल से कुनीन निकाली गई, जिसको मलेरिया के बुखार में दिया जाता है। बेलोडोना के पौधे से 'एंट्रोपीन' निकाली गई; इसको आँख में छोड़ने से पुतली का छिद्र बड़ा हो जाता है, जिससे नेत्र-परीक्षा में सुविधा होती है। अफ्रीम के कच्चे फलों से मार्फीन को निकाला जाता है। इसके इंजेक्शन से स्नायु-क्रियाएँ मंद पड़ जाती हैं। इसी प्रकार के अनेक उदाहरण दिये जा सकते हैं।

प्राकृतिक स्रोतों की परीक्षा करके उसके उपयोगी अंश (ओषधि) को ज्ञात करने का कार्य बड़ा कठिन है और विस्तृत भी। अनेक लाभकारी पौधों के बारे में रासायनिक ज्ञान की प्राप्ति वांछनीय है। नीम के लाभकारी अवयव को ही अभी तक पृथक् नहीं किया जा सका है। रसायनज्ञ आज भी इस महान् कार्य में संलग्न हैं। भारत सरकार ने इस प्रकार की ज्ञान-प्राप्ति के लिए लखनऊ में 'केंद्रीय ओषधि अनुसन्धानशाला' खोली है। आशा की जाती है कि निकट भविष्य में इससे अनेक उपयोगी ओषधियों का ज्ञान प्राप्त हो सकेगा।

ग्रंथि-रस

रसायनज्ञों ने वनस्पतियों के अतिरिक्त अन्य स्रोतों से भी ओषधियों को प्राप्त करने की चेष्टा की है। मनुष्य में कुछ ग्रंथियाँ ऐसी होती हैं जिनकी रासायनिक प्रयोग-शालाओं से तुलना की जा सकती है। शरीर में पहुँचे भोजन द्वारा ये कुछ रासायनिक पदार्थों का निर्माण करती हैं। ये पदार्थ रक्त में पहुँच करके शारीरिक क्रियाओं का संचालन करते हैं। पाचन, वृद्धि, लैंगिक लक्षणों, मानसिक अवस्थाओं का नियंत्रण इन्हीं

से होता है। रसायनज्ञों ने विभिन्न ग्रंथियों के रस को पृथक् किया, रस के लाभकारी अवयव को प्राप्त किया और रासायनिक विधियों से उसके संश्लेषण की चेष्टा की।

पेट के पास पाचक रस निकालनेवाली 'पैंक्रियाज' नाम की एक ग्रंथि होती है। बछड़ों के पैंक्रियाज में से इन्सुलीन नामक पदार्थ को पृथक् किया गया। इससे शकर की बीमारी (डायबेटीज) में बड़ा लाभ होता था, किन्तु निर्दिष्ट ग्रंथि में यह कम मात्रा में पाई जाती थी, इसलिए रोगी को ग्रंथि-रस काफ़ी मात्रा में दिया जाता था। [आज भी हकीमों के नुसखे में कटोरे भर काढ़े दिये जाते हैं।] इससे रोगी को बड़ी असुविधा होती थी। रसायनज्ञों ने इन्सुलीन को पूर्णरूप से पृथक् किया। अब रासायनिक विधियों से उसे शुद्ध अवस्था में प्राप्त किया जाता है। फलतः रोगी को कम मात्रा में ओषधि दी जाती है और उसे प्राप्त करने के लिए केवल ग्रंथि-रस पर ही निर्भर नहीं रहना पड़ता।

इसी प्रकार ऐड्रीनल ग्रंथियों से ऐड्रीनलीन को पृथक् किया गया है। थोड़ी मात्रा में ही इसका अपूर्व प्रभाव होता है। एक तोले के एक करोड़वें भाग से रक्त-चाप (ब्लड-प्रेसर) बढ़ जाता है; रक्त की नलियाँ सिकुड़ जाती हैं। इसलिए आपरेशन के समय इसका इंजेक्शन दिया जाता है; और भी इसके अनेक उपयोग हैं। पहले ४०,००० बैलों की ऐड्रीनल ग्रंथियों से एक पौंड ऐड्रीनलीन तैयार की जाती थी। किन्तु अब इसको रसायनज्ञों ने बना लिया है; अतः इस ग्रंथि-रस की प्राप्ति के लिए बछड़े को मारना नहीं पड़ता।

थायरवायड ग्रंथियों में थायरॉक्सीलीन रस बनता है। इसकी कमी से बालक की वृद्धि रुक जाती है और उसका मस्तिष्क कमजोर हो जाता है। रसायनज्ञों ने इसके अणु की रचना को ज्ञात किया। अब

रासायनिक संश्लेषण से इसको सरलता से प्राप्त किया जा सकता है। उन माता-पिताओं के आह्लाद की कल्पना कीजिये जिनका बालक रसायनज्ञों से इस ओषधि को प्राप्त करके होशियार और स्वस्थ बन जाता है !

इस प्रकार रसायन ने वनस्पतियों और विभिन्न ग्रंथियों के रस में अनेक ओषधियाँ ज्ञात कीं, उनको शुद्धरूप में प्राप्त किया और जब उनकी कमी पड़ी तो उनका रासायनिक विधियों से संश्लेषण भी किया।

रासायनिक ओषधि

अभी तक केवल उन ओषधियों का वर्णन किया गया है जिनके सम्बन्ध में प्रकृति से ज्ञान प्राप्त किया गया। किन्तु इनके अतिरिक्त और भी अनेक ओषधियाँ हैं जिनको रसायनज्ञ ने अपनी प्रयोगशाला में पहले बनाया और बाद में उनके उपयोगी गुण आविष्कृत हुए।

आर्सेनिक और पारे के यौगिकों से सिकलिस की भयंकर बीमारी पर विजय प्राप्त करने की चेष्टा की गई है। ऐस्प्रीन (एसोटाइल सैलीसिलिक एसिड) से सिर-दर्द कम किया जाता है। इससे और सोडियम सैलीसिलेट से बुखार भी कम हो जाता है। गठिये के रोग में स्टोफ्रन और नोवेटोफ्रन आदि ओषधियों का प्रयोग होता है।

इस क्षेत्र में सल्फा ओषधियों का महत्वपूर्ण स्थान है। १८३५ में दोमाँक (Domagk) महांदय ने एक विशेष प्रकार के यौगिक (सल्फोनामीडो रैंडिकल युक्त ऐजो यौगिक जिसको प्रोटोसिल भी कहते हैं) को बनाया। इससे उन कीटाणुओं पर विजय प्राप्त की जा सकती थी जिनके लिए उस समय तक कोई ओषधि ज्ञात न थी। इससे

चिकित्सकों के क्षेत्र में हलचल मच गई। इसी प्रकार के लगभग १५०० अन्य यौगिकों का शीघ्र निर्माण किया गया है। इनमें से कुछ ही लाभदायक सिद्ध हुए हैं किन्तु इनसे निमोनिया, गोनोरिया, प्रसव-सम्बन्धी ज्वरों, गले के रोगों, मस्तिष्क के फोड़ों आदि को ठीक करने में बड़ी सहायता मिली है। इनमें से बहुत-सी ओषधियाँ तो अब पुरानी हो चली हैं किन्तु कुछ का अब भी प्रयोग किया जाता है। दस्तों को रोकने के लिए सल्फा-ग्वानीडीन (Sulfaguanidine) अब भी कुछ क्षेत्रों में सबसे अच्छी ओषधि मानी जाती है।

दर्द कम करना

अठारहवीं शताब्दी तक जो आपरेशन किये जाते थे, उनके रोगियों की विह्वल दशा का वर्णन पढ़कर आज भी रोंगटे खड़े हो जाते हैं। रस्सियों से रोगी को बाँध दिया जाता था; नश्वर से चाहे जितना भी वह क्यों न चिल्लाये डाक्टर उसे तब तक न छोड़ते थे, जब तक आपरेशन पूरा न हो जाय। भयंकर दर्द से बचने का एकमात्र उपाय था—तीव्र दर्द से बेहोश हो जाना। आज न डाक्टरों को ही उतनी परेशानी उठानी पड़ती है और न रोगियों को ही। १८४६ में रसायनज्ञों द्वारा बहुत पहले ही बनाये यौगिक—ईथर—में व्यक्ति को थोड़ी देर तक बेहोश करने के गुण पाये गये। इसके प्रयोग से रोगियों को भयंकर दर्द से बचाया जा सका है। आजकल ईथर के अतिरिक्त क्लोरोफार्म, एथिलीन आदि का भी प्रयोग किया जाता है। रोगी की बेहोश अवस्था में आपरेशन कर दिया जाता है। बेहोशी जब समाप्त होती है तो पता चलता है कि आपरेशन नींद में ही हो गया।

आजकल कुछ दवाएँ ऐसी ज्ञात हैं जिनसे रागी के इच्छित भाग को ही सुन्न किया जा सकता है। पहले इसके लिए कोकेन का प्रयोग होता था, किन्तु यह महँगी पड़ती थी। कभी-कभी इससे सुन्न करने में कठिनाई होती थी और अधिक मात्रा में इसके प्रयोग से जहरीले प्रभाव होने की आशंका रहती थी। रसायनज्ञों ने इसके अणु की परीक्षा की और ज्ञात किया कि इसके एक अंश—४३ परमाणुओं के समूह—में ही सुन्न करने की शक्ति थी। इसको अब प्रोकेन कहते हैं। कोकेन के अणु को तोड़कर प्रोकेन प्राप्त की गई और अब इसका प्रचुरता से प्रयोग होता है। इसके अणु से मिलते हुए अन्य अणुओं को भी बनाया गया और इनमें से कुछ का प्रयोग अब भी होता है।

कुछ रासायनिक पदार्थों से नींद आ जाती है। सोडियम या पोटैसियम ब्रोमाइड से थोड़ी ही नींद आती है। बजोरान से अच्छी नींद आती है। वेरॉनॉल (Veronol) और ल्युमिनॉल (Luminol) रसायनज्ञों द्वारा निर्मित नींद उत्पन्न करनेवाले अच्छे पदार्थ हैं किन्तु इन सब पदार्थों का सावधानी से प्रयोग करना चाहिए क्योंकि इनकी शीघ्र ही आदत पड़ जाती है और इनके अधिक स्वा लेने से मृत्यु का भय रहता है।

कीटाणु-नाशक पदार्थ

पहले किसी भी प्रकार के नशतर से शरीर में विष फैल जाने का बड़ा भय रहता था। वायु में संक्रामक कीटाणु हमेशा ही रहते हैं और अवसर पाकर ये घातक सिद्ध हो सकते हैं। इस भय से बचने के लिए रसायनज्ञ ने ऐसे पदार्थ ज्ञात किये हैं जिनसे घाव संक्रामक न बन पावें।

हाइड्रोजन पर ऑक्साइड, टिन्क्चर आयोडॉन, मरक्यूरिक क्लोराइड, सोडियम हायपोसल्फाइट, क्लोरामीन —टी, कार्बोलिक एसिड (फ़िनोल), मरक्यूरिक्रोम, हेक्साइल रिस, र्सिनाल आदि संश्लेषण किये हुए ऐसे अनेक पदार्थ हैं, जिनसे किसी प्रकार के घाव की सुरक्षा की जा सकती है। इन यौगिकों में भीगी हुई चिमटियों से निस्संक्रामक रूई और पट्टी तक उठाई जाती है। अब घाव के विष से दुर्घटनावश ही मृत्यु होती है। पहले तो बड़े घाव का होना मृत्यु-सूचक समझा जाता था।

फ़सल और पदार्थों की रक्षा के लिए प्रयुक्त कीटाणु-नाशक पदार्थों के बारे में पहले ही बताया जा चुका है।

जीव-नाशी (Antibiotic) ओषधियाँ

सर अलेक्जेंडर फ्लेमिंग ने १९२९ में पेनिसिलीन के अन्वेषण से एक नई प्रकार की ओषधियों का जन्म दिया। इस महान् कार्य का श्रेय आपकी अनुपम परीक्षण-शक्ति है, जिसका विकास हर वैज्ञानिक के लिए आवश्यक है। आपने कुछ प्लेटों पर कुछ विशेष कीटाणुओं को बसा रखा था। इनमें से एक पर फफूँदी लग गई। अन्य व्यक्ति इसको बेकार समझकर फेंक देता और कदाचित् उसको नोबेल पुरस्कार मिलने का सौभाग्य प्राप्त न होता। किन्तु आपने देखा कि जिन स्थलों पर फफूँदी लगी हुई थी, वहाँ के सब कीटाणु नष्ट हो गये थे। आपने सोचा कि इस फफूँदी में कौन-से जीवनाशक पदार्थ हैं जिनसे ये कीटाणु मर गये। इस विचार से आपने फफूँदी को और अधिक उगने दिया। पर्याप्त फफूँदी को एकत्रित करके उसका रासायनिक विश्लेषण किया

गया और इससे पेनिसिलीन का आविष्कार हुआ। इसके सर्वतोमुखी गुणों से तो सबका परिचय होगा।

तब से विभिन्न प्रकार की फफूरियों की रासायनिक परीक्षा से लगभग ३० जीवनाशी (वस्तुतः कोशगुनाशी) पदार्थों का पृथक् किया जा सका है। इनका रासायनिक विधियों से बनाने की चेष्टा की जा रही है। भूतकाल में रसायनज्ञों को जैसी सफलता मिल चुकी है, उससे यह कार्य कुछ अधिक कठिन नहीं। समय चाहे जितना लगे किन्तु इनके सरल संश्लेषण में भाग्यफलता मिलेगी ही, जिसे इनका व्यापारिक उत्पादन किया जा सकेगा।

इस प्रकार हम देखते हैं कि मनुष्य को स्वस्थ रखने के उपायों के साथ-साथ रसायन ने औषधियों के ज्ञान में भी काफी वृद्धि की है। प्राकृतिक स्रोतों—वनस्पतों और अंगियों—से प्राप्त औषधियों के लाभकारी अवयवों को उनके विश्लेषण से जाना गया; उनको शुद्ध श्रुति से बनाने की विधियाँ निकाला गईं; उनका कमी पड़ने पर उनका रासायनिक विधियों से संश्लेषण किया गया; दर्द को कम करने के लिए, नींद लाने के लिए, घाव को विष से बचाने के लिए, दूखार कम करने के लिए अनेक रासायनिक पदार्थों में से उचित औषधियाँ छाँटी गईं; और जब फफूँदी से जीवनाशी अवयव को पृथक् करने का प्रश्न उठा तो रसायनज्ञ ने अपनी पूर्व-परिचित दक्षता का पुनः प्रदर्शन किया। रसायन ने औषधियों की सैद्धांतिक पृष्ठभूमि की नींव डाली और इस प्रकार चिकित्सा-विज्ञान का विकास किया।

२१

ईंधन

[तीन प्रकार के ईंधन; लकड़ी और कोयला; लकड़ी और कोयले का वायु-शून्य स्थान में स्रावण; पेट्रोलियम; रासायनिक पेट्रोल; गैस रूप में ईंधन—जल-गैस, प्रोड्यूसर गैस, कोयला-गैस]

ईंधन का हमारे जीवन में बड़ा महत्त्व है। केवल भोजन पकाने में ही इसकी आवश्यकता नहीं पड़ती प्रत्युत् सब प्रकार के इंजनों और उद्योगों को चलाने में इसका प्रयोग होता है। जो इंजन भाप से चलते हैं उनके लिए जल को भाप बनाने में ईंधन की आवश्यकता पड़ती है। मोटर और वायुयान के इंजनों में एक अन्य प्रकार के ईंधन की आवश्यकता होती है।

तीन प्रकार के ईंधन

ईंधन के रूप में हम केवल लकड़ी और कोयले से ही परिचित हैं। वस्तुतः ईंधन तीन प्रकार के होते हैं—(१) ठोस—लकड़ी और कोयला; (२) द्रव—पेट्रोलियम और गैसोलीन आदि और (३) गैस—ऐसे ईंधन का विदेशों में ही प्रयोग होता है और हम इनसे परिचित नहीं हैं। विभिन्न प्रकार के ईंधनों से अधिकतम उपयोग किस प्रकार लिया जा

सकता है? रसायनज्ञ ने इस क्षेत्र में जो कार्य किये हैं, उनका संक्षेप में वर्णन किया जायगा।

लकड़ी और कोयला

भारत में लकड़ी और कोयला प्रचुरता से पाया जाता है; इसलिए इनका उपयोग भी बिना किसी विचार के होता है। विदेशों में, जहाँ कम अथवा अधिक तापक्रम होने से वर्ष के कुछ विशेष महीनों में ही वृक्ष उगते हैं, लकड़ी को इस प्रकार बेकार नहीं किया जाता। आप कहेंगे कि क्या जलाने के अतिरिक्त लकड़ी का और कोई भी प्रयोग हो सकता है? जिस प्रकार लकड़ी को साधारणतः जलाया जाता है, उससे उसका रूप में एक आना भी उपयोग नहीं हो पाता है। एक सरल प्रयोग से यह स्पष्ट हो जायगा।

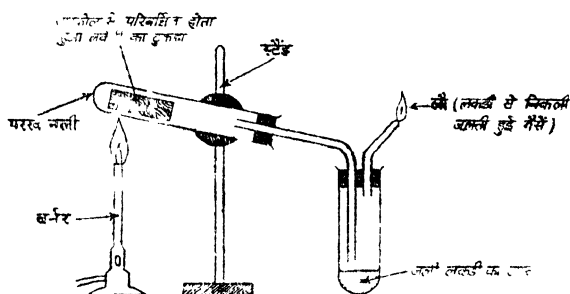
लकड़ी और कोयले का वायु-शून्य स्थान में स्रावण (Destructive Distillation)

परख नली में लकड़ी का एक छोटा टुकड़ा रख दिया जाता है और चित्र ७ में दिखाई गई विधि से उसका गरम किया जाता है। परख नली में काग इस प्रकार से फिट की जाती है, जिससे उसमें वायु का कहीं से प्रवेश न हो सके। इसलिए थोड़ी देर गरम करके परख-नली की सारी हवा निकाल दी जाती है। अधिक गरम करने पर लकड़ी वायु-शून्य स्थान में ही गरम होती है। थोड़ी देर में लकड़ी से गैसें निकलने लगती हैं। लकड़ी से लौ का सम्पर्क नहीं हो पाता,

इसलिए ये गैसें प्रज्वलित नहीं हो पातीं। ये तीन प्रकार की होती हैं:—

(क) भाप—लकड़ी का पानी भाप बनकर उड़ने लगता है।

(ख) जलनशील गैसें—कुछ गैसें ठंडी करने पर भी द्रवित नहीं हो पातीं। यदि इनमें दियासलाई लगा दी जाय तो ये जलने लगती हैं। इसमें मीथेन, कार्बन मोनॉक्साइड, कार्बन डाई ऑक्साइड, ऐसीटलीन और हाइड्रोजन आदि गैसें होती हैं।



चित्र ७. लकड़ी का वायु-शून्य स्थान में स्रावण

(ग) कुछ गैसें ठंडी होने पर दूसरी परख नली में द्रवरूप में परिवर्तित हो जाती हैं। यह भ्रमलीय होता है, इसलिए इसको 'जली लकड़ी का भ्रमल' कहते हैं। इस द्रव के रासायनिक विश्लेषण से ज्ञात हुआ कि इसमें बेंजोन, पैराक्रोन, कार्बोलिक एसिड, क्रीसोट, सिरका, ऐसीटोन और अनेक उपयोगी पदार्थ होते हैं। बड़े कारखानों में इनको पृथक् किया जाता है।

माधारणतः लकड़ी को लौ प्राप्त करने के लिए जलाया जाता है।

इसमें केवल 'ख' वर्ग की गैसों प्रयुक्त होती हैं। 'ग' वर्ग के अधिकांश पदार्थ वाष्प अवस्था में उड़ जाते हैं। लकड़ी को जलाकर हम इन पदार्थों को नित्य प्रति ही बेकार करते रहते हैं। विदेशों में, अधिकांश लकड़ी का बड़ी-बड़ी कम्पनियों द्वारा वायु-शून्य स्थान में स्रावण किया जाता है। जिस प्रकार नलों से घर में पानी आता है उसी प्रकार 'ख' वर्ग की गैसों घरों में पहुँचती हैं। और भी अनेक प्रकार की गैसों, जिनका आगे वर्णन किया गया है, इसी प्रकार भेजी जाती हैं। इनका जलकर भोजन पकाया जाता है। गृहिणियों को चूल्हा नहीं फूँकना पड़ता और 'ग' वर्ग के पदार्थों से बेकार जानेवाले राष्ट्र-धन की बचत भी हो जाती है।

परख नली में बचे पदार्थ को चारकोल कहा जाता है। यह छिद्र-युक्त हलका कोयला होता है, जिसको आसानी से जलाया जा सकता है।

इसी प्रकार कोयले के वायु-शून्य स्थान में स्रावण से विविध मात्राओं में निम्नलिखित पदार्थ निकलते हैं:—

१. जल की वाष्प;

२. कोयले की जलनशील गैसों (कोयला-गैस) जिनका ईंधन के रूप में प्रयोग होता है और

३. कोल-टार, जो काला-सा गाढ़ा द्रव होता है। पहले यह बेकार पदार्थ समझा जाता था; इसको फेंकने की बड़ी कठिन समस्या थी। शहर में यह कूड़ा माना जाता था। इसको गाड़ने में काफ़ी धन का व्यय होता था और नदी या समुद्र में इसको बहाने से जल-जीवों पर बुरा प्रभाव पड़ता था। रसायनज्ञ ने इसमें से बेंजीन, ऐनीलीन और नैफ़थलीन आदि पदार्थों को पृथक् किया है। ऐनीलीन से विभिन्न प्रकार के रंग बनाये जाते हैं।

सावण से बचे हुए पदार्थ को 'कोक' कहते हैं। इसको जलाने पर लौ नहीं निकलती। इसका भी अनेक स्थानों में प्रयोग होता है, विशेष कर धातुओं के शुद्ध करने में।

कितने उपयोगी पदार्थों को रसायनज्ञ की सहायता द्वारा लकड़ी और कोयले से पृथक् किया जा सका है!

पेट्रोलियम

भूकम्प अथवा प्राकृतिक विनाशकारी प्रवृत्तियों के फलस्वरूप जब वृक्ष जमीन के नीचे दब जाते हैं तो कोयले के रूप में उनका घीरे-घीरे परिवर्तन होता रहता है। इस क्रिया के साथ और भी अनेक प्रकार की क्रियाएँ पृथ्वी के अंतस्थल में होती रहती हैं। विशेष स्थानों पर इन क्रियाओं के फलस्वरूप बड़ी मात्रा में द्रव एकत्रित हो जाते हैं। संसार के अनेक स्थानों से ऐसे द्रवों को निकाला जाता है। यद्यपि स्रोत के अनुसार इनके गुणों में पर्याप्त अन्तर होता है, तथापि सामूहिक रूप से इनको पेट्रोलियम कहा जाता है। आधुनिक काल में लगभग २ अरब बैरल (१ बैरल में ४२ गैलन होते हैं) पेट्रोलियम की वार्षिक खपत है। इस संख्या से ही इसकी उपयोगिता स्पष्ट है।

पेट्रोलियम की शुद्धि का कार्य दक्ष रसायनज्ञ करते हैं। पहले इसको वाष्परूप में परिवर्तित कर लिया जाता है। विभिन्न तापक्रमों पर जब इन गैसों को ठंडा किया जाता है तो इसमें अनेक प्रकार के पदार्थ पृथक् होने लगते हैं:—

(१) पहले वाष्प को 40° - 60° श० पर ठंडा किया जाता है। इस तापक्रम पर सबसे अधिक वाष्पशील पदार्थ—पेट्रोलियम ईथर—

पृथक् हो जाता है। अच्छे, सस्ते घोलक के रूप में इसका प्रयोग किया जाता है।

(२) ८०° - १२०° श० तक ठंडी की हुई गैसों में नैपथा पृथक् हो जाता है। ऊनी कपड़ों के धोने में इसका प्रयोग होता है।

(३) ६०° - १६०° श० तक ठंडी की हुई गैसों से गेंसोलीन या पेट्रोल पृथक् होता है। मोटर और वायुयान आदि इजनों के चलाने में इसका बहुलता से प्रयोग होता है।

(४) १५०° - २५०° श० तक ठंडी की हुई वाष्प में मिट्टी का तेल बनता है, जिसका लालटेन आदि के जलाने में प्रयोग होता है।

(५) २५०° - ३५०° श० तक ठंडी की हुई वाष्प से ईंधन-तेल बनता है जिसका स्टोव आदि में प्रयोग किया जाता है।

(६) इसके पश्चात् विभिन्न चिकने पदार्थ और पैराफ्रीन मोम आदि अलग होते हैं।

(७) पेट्रोलियम के उच्च ज्ञान पर जो ठोस पदार्थ बच रहता है उसको ऐसफ़ाल्ट कहने हैं। इसका सड़को के बनाने में प्रयोग होता है।

वस्तुतः हर पेट्रोलियम रिफ़ाइनरी में पेट्रोलियम की क्रिस्म के अनुसार गैसों को ठंडे किये जानेवाले विभिन्न तापक्रमों को निर्धारित करना पड़ता है। उपर्युक्त तापक्रम केवल अन्दाज के लिए दिये गये हैं।

रासायनज्ञ की सहायता से प्राकृतिक द्रव-ईंधन से अनेक प्रकार के कार्यों का संचालन होता है। रासायनिक क्षेत्रों में एक उक्ति है—“एक देश द्वारा साफ़ किये गये पेट्रोलियम की मात्रा से उस देश की आर्थिक दशा का भान होता है।” यह बिलकुल ठीक है।

पेट्रोलियम के सम्बन्ध में एक गम्भीर प्रश्न है। क्या प्राकृतिक स्रोतों से सदैव इतना पेट्रोल निकाला जा सकेगा ? कुछ देशों में तो यह

अधिक मात्रा में पाया जाता है। इनके अतिरिक्त सब देशों के लिए यह बड़ा गम्भीर प्रश्न है। भारत में प्राकृतिक पेट्रोलियम के स्रोत अपेक्षाकृत बहुत कम हैं। यद्यपि हाल में दिग्बोई आदि स्थानों पर इसके नवीन क्षेत्रों का पता चला है और लगाया जा रहा है तथापि भारत में उद्योगों के पूर्ण विकास के लिए इसकी मात्रा कम पड़गी। तो क्या किया जाय ?

रासायनिक पेट्रोल

पेट्रोलियम के अभाव में पेट्रोलियम का काम चलाने के लिए रसायनज्ञों ने दो विधियाँ ज्ञात की हैं:—

(१) पेट्रोलियम का सघन अधिक उपयोगी अवस्था में गैसोलीन या पेट्रोल है। अन्य पदार्थों की कम मात्राओं से काम चलाया जा सकता है किन्तु इसकी थोड़ी-सी बर्बादी में गम्भीर समस्याएँ उत्पन्न हो सकती हैं। 300° श० तक जा गैस ठंडा की जाने पर द्रवरूप में परिणत नहीं हो पाती, उनके अणु पेट्रोल की अपेक्षा बहुत बड़े होते हैं; इसलिए इनके अणुओं को तोड़कर छोटा करने का प्रयत्न किया जाता है।

इन गैसों को काफी दबा लिया जाता है, जिसमें उनका दबाव २७५ पाउंड प्रति वर्ग इंच तक हो जाता है। ऐसी दबी हुई उपर्युक्त गैस को जब 525° श० तक गरम किया जाता है तो उसके अणु पेट्रोल के ऐसे अणुओं में टूटने लगते हैं। फलतः अपेक्षाकृत कम उपयोगी पदार्थों से पेट्रोल-जैसे उपयोगी पदार्थ का निर्माण कर लिया जाता है। इस प्रकार पेट्रोलियम की अपेक्षाकृत कम मात्राओं से अधिक पेट्रोल बना

लिया जाता है। छोटे अणुओं को मिला करके भी पेट्रोल के बड़े अणुओं को बनाने का प्रयत्न किया गया है।

(२) दूसरी विधि में पेट्रोल का रासायनिक सश्लेषण कोयले और जल जैसे सस्ते पदार्थों से किया जाता है। जिन विशेष परिस्थितियों में इनकी अधिकाधिक रासायनिक प्रतिक्रिया हो सके, उनको बताना रासायनज्ञ का कार्य है। युद्धकाल में पेट्रोल की कमी को इस विधि से जर्मनी के रासायनज्ञों ने किस प्रकार दूर किया, इस पर प्रकाश डाला जा चुका है।

गैस रूप में ईंधन

बाकू में पारसियों का एक पूज्य स्थान है। यहाँ प्राकृतिक अग्नि सदैव जलती रहती है। विविध प्राकृतिक क्रियाओं से कुछ गैसें ज़मीन के अन्दर एकत्रित हो जाती हैं जो रिक्त स्थान पाकर निकलती हैं। ये गैसें जलनशील होती हैं। बाकू के अतिरिक्त अन्य स्थानों पर भी ये पाई जाती हैं। टेक्सास, कॅलीफ़ोर्निया, लूशियाना और ओकलाहोमा आदि स्थानों पर बहुत अधिक मात्रा में ये निकलती हैं।

इन गैसों में कुछ भारी गैसें भी होती हैं, जो ठंडी हो जाने पर पेट्रोल बनाती हैं। संसार का ५ करोड़ बैरल पेट्रोल इस विधि से प्रति वर्ष बनाया जाता है। इन प्राकृतिक गैसों से अन्य उपयोगी पदार्थों को पृथक् कर लिया जाता है। बाक़ी गैस को घरों के ईंधन के प्रयोग के लिए भेज दिया जाता है।

रसायनज्ञों ने इस प्रकार की अन्य सस्ती गैसों को भी बताया है:—

(१) जल-गैस—यह भाप नहीं है, किन्तु पानी से बनाई गई

सबसे अधिक उपयोग में आनेवाली गैसों का मिश्रण है। इसके बनाने में दक्षता की बड़ी आवश्यकता होती है। दहकते हुए कोयले के अंगारों पर जब भाप चलाई जाती है तो जल-गैस बनती है। इसमें कार्बन मोनॉक्साइड, हाइड्रोजन, जल-वाष्प, कार्बन डाई आक्साइड आदि गैसें होती हैं। मीथेनाल, पेट्रोल आदि के संश्लेषण में इसका प्रयोग किया जाता है। यह लौ के साथ जलती भी है। लौ में कार्बन परमाणुओं की अनुपस्थिति के कारण चमक नहीं होती। चमक लाने के लिए सस्ते तेलों की वाष्प को मिला दिया जाता है। इसका ईंधन के रूप में भी प्रयोग हो सकता है।

(२) प्रोड्यूसर गैस—भट्टी में रखे कोयले या कोक के ऊपर हवा की थोड़ी मात्रा चलाई जाती है। बाहर निकलनेवाली गैसों में ३० प्रतिशत कार्बन मोनॉक्साइड, १० प्रतिशत हाइड्रोजन और मीथेन आदि तथा ६० प्रतिशत नाइट्रोजन होती है। इसको बनाने की विधि सरल है और इसका कार्फा प्रयोग भी होता है।

(३) कोयला-गैस—कोयले के वायु-शून्य स्रावण से इसको बनाया जाता है। इसमें ५० प्रतिशत कार्बन मोनॉक्साइड, ३५ प्रतिशत मीथेन और ५ प्रतिशत अन्य गैसों होती हैं।

ईंधन-गैस की तुलना में जल-गैस की ईंधन-शक्ति ३४ प्रतिशत, प्रोड्यूसर गैस की १४ प्रतिशत और कोयला-गैस की ६० प्रतिशत होती है।

कैल्सियम कार्बाइड द्वारा बनाई गई एसिटलीन के जलने में चमक अधिक होती है; इसलिए ताप के स्थान पर प्रकाश उत्पन्न करने में इसकी सहायता ली जाती है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि रसायन के ज्ञान से लकड़ी और कोयले

का पूर्ण लाभ उठाया जा सका है। पेट्रोलियम को साफ़ करके अनन्त उपयोगी रासायनिक पदार्थ बनाये गये हैं और विभिन्न प्रकार की ईंधन-गैसों के उपयोग से घरेलू और व्यापारिक ईंधन को सस्ता, सुलभ और सरल बनाया गया है। रसायन से विभिन्न प्रकार की ईंधनों के उपयोग जान करके हमने असीम शक्ति को एकत्रित किया है। हाल ही में इन सबसे भिन्न किन्तु विचित्र और भयानक शक्ति—परमाणु-शक्ति —का हमको ज्ञान हुआ है; इसका अगले अध्याय में वर्णन है।

परमाणु-शक्ति

[परमाणु-शक्ति क्या है; तीन शक्तियाँ; रेडियो ऐक्टिव खोजक; जीवन-क्रियाएँ; ओषधि, खेती; व्यवसाय; शक्ति]

परमाणु-शक्ति क्या है

आरम्भिक अध्यायों में बताया जा चुका है कि अणु में परमाणुओं के परिवर्तन से रासायनिक क्रियाएँ होती हैं। परमाणु के दो भाग होते हैं —

(१) केन्द्रीय भाग, जिसको केन्द्र (न्यूक्लियस) कहते हैं और

(२) बाहरी भाग, जिसमें इलेक्ट्रॉन रहते हैं; ये केन्द्र के चारों ओर घूमते रहते हैं।

साधारण रासायनिक क्रियाओं में परमाणुओं की इलेक्ट्रॉन-व्यवस्था में अंतर होता है। केन्द्र वैसा-का-वैसा ही बना रहता है। इलेक्ट्रॉन को हटाने के लिए कुछ शक्ति की आवश्यकता होती है। एक बार हटाने पर (अ) या तो ये स्वयं हटते चले जाते हैं और शक्ति उत्पन्न करते हैं (Exothermic reactions) या, (ब) इनको हटाने के लिए बाहर से शक्ति देना पड़ती है (Endothermic reactions)।

पहली अवस्था में रासायनिक क्रियाओं द्वारा शक्ति निकलती है। कभी-कभी यह बहुत अधिक भी हो सकती है; जैसे कोयले अथवा पेट्रोल

का जलना। यह शक्ति इलेक्ट्रॉन की स्थानापत्ति (Displacement) से विभिन्न अणुओं के बनने से उत्पन्न होती है, इसलिए इसको अणु-शक्ति कहा जाता है। दूसरी अवस्था में रासायनिक क्रियाओं को चलाने के लिए बाहर से शक्ति देना पड़ती है; इसलिए इन क्रियाओं से शक्ति नहीं प्राप्त की जा सकती। परमाणु-शक्ति के पहले केवल अणु-शक्ति का ही ज्ञान था।

परमाणु-शक्ति में इलेक्ट्रॉन का नहीं, किन्तु केन्द्र का परिवर्तन होता है। इस प्रक्रिया में परमाणु का कुछ भाग नष्ट हो जाता है और यह विनष्ट भाग शक्ति में परिवर्तित हो जाता है। 'पदार्थ' शक्ति का गाढ़ा रूप है; इसलिए थोड़े-से पदार्थ-नाश से ही बहुत शक्ति उत्पन्न हो जाती है। इलेक्ट्रॉन की स्थानापत्ति से पदार्थ-नाश नहीं होता, इसलिए इससे अपेक्षाकृत कम शक्ति उत्पन्न होती है।

परमाणु-शक्ति को उत्पन्न करने के लिए केन्द्र में परिवर्तन दो प्रकार से किया जा सकता है :—

(१) केन्द्र को तोड़ने से—यूरेनियम धातु प्रकृति में पाई जानेवाली धातुओं में सबसे अधिक भारी होती है। इसको शुद्ध अवस्था में प्राप्त करना कठिन है किन्तु रसायनज्ञ ने इसको प्राप्त करने की विधियाँ ज्ञात की हैं। साधारण यूरेनियम के परमाणु दो प्रकार के होते हैं—(अ) यूरेनियम २३५ और (ब) यूरेनियम २३८। बाद का भाग पहले से १४० गुना होता है। किन्तु केन्द्र को तोड़ने के लिए पहले भाग की ही आवश्यकता होती है। यूरेनियम २३५ को बड़ी कठिन विधियों से पृथक् किया जाता है।

कठिनता से प्राप्त यूरेनियम २३५ पर जब (न्यूट्रॉन-रूपी) गोलीयाँ बरसाई जाती हैं तो उसके परमाणु के केन्द्र टूटने लगते हैं।

साधारण गोलियों से काम नहीं चलता। गोली को तो ऐसा होना चाहिए जिससे अति सूक्ष्म परमाणु उसके सम्पर्क में आ सकें। इसलिए परमाणु के छोटे कण—न्यूट्रान—को इस कार्य के लिए प्रयोग किया जाता है। साइक्लोट्रान में इन सूक्ष्म कणों की गति बहुत तीव्र चलते हुए कणों से यूरेनियम २३५ के परमाणुओं की मुठभेड़ होती है तो वे टूट जाते हैं। कुछ परमाणुओं के तोड़ने से ही काम चल जाता है क्योंकि टूटने की क्रिया में जो न्यूट्रान निकलते हैं, वे स्वयं भी गोली का काम करते हैं। एक बार जब प्रतिक्रिया आरम्भ हो जाती है तो परमाणु टूटते चले जाते हैं, पदार्थ-नाश होता चला जाता है और अकल्पनीय मात्रा में शक्ति निकलने लगती है।

केन्द्रों को तोड़ने की और भी क्रियाएँ ज्ञात की गई हैं। इन सबमें यूरेनियम-२३५ का सबसे अधिक महत्त्व है। परमाणु-बम में प्लूटोनियम धातु के कणों को तोड़ा जाता है।

(२) केन्द्रों को जोड़ने से—हाइड्रोजन तत्त्व सबसे हलका होता है। वैज्ञानिकों ने सोचा कि यदि इसके केन्द्रों को किसी विधि से जोड़ा जा सके तो पदार्थ-नाश और असीम शक्ति की प्राप्ति हो सकती है। इस विचार का जन्म सौर्य-शक्ति के अध्ययन से हुआ। सूर्य में हाइड्रोजन के परमाणु मिलकर हीलियम गैस बनाते रहते हैं। सूर्य का लगभग सम्पूर्ण ताप इस क्रिया पर ही आधारित है। इस क्रिया को आरम्भ करने की विधि भी ज्ञात हो चुकी है। हाइड्रोजन बम इस प्रकार के ज्ञान का फल है।

तीन शक्तियाँ

तो हमने देखा कि परमाणुओं के परिवर्तन से पदार्थ-नाश होता है,

और इससे अणु-शक्ति की अपेक्षा बहुत अधिक शक्ति निकलती है। यह शक्ति एकदम से और अधिक मात्रा में निकलती है, इसीलिए इसके उत्पन्न करनेवाले स्रोतों को बम कहा जाता है। परमाणु के केन्द्र के टूटने से तीन प्रकार की शक्तियाँ निकलती हैं:—

(१) ताप—यह इतनी अधिक मात्रा में निकलता है जिससे मिट्टी के अवयव, द्रव और वाष्प अवस्था में परिवर्तित हो जाते हैं। इनसे एक बादल-सा बन जाता है, जो ऊपर उठने लगता है।

अधिक ताप होने के कारण इस स्थान की हवा बहुत हलकी हो जाती है। इसका स्थान घेरने के लिए दूसरे स्थानों से प्रचंड तूफ़ानों के रूप में वायु आती है।

(२) प्रकाश—एक रेगिस्तान में परमाणु-बम फेंका गया। उससे इतना अधिक प्रकाश निकला कि उस स्थल से १० मील दूर एक अंधे व्यक्ति को उसकी चमक दिखाई दी; उसने समझा कि उसे नेत्र-शक्ति प्राप्त हो गई है किन्तु इस अभूतपूर्व चमक का कारण परमाणु-शक्ति थी।

(३) हानिकारक किरणें—ताप और प्रकाश के साथ-साथ रेडियो ऐक्टिव किरणें भी निकलती हैं। इसके हानिकारक प्रभावों की अनुभूति बहुत दूर-दूर तक हो सकती है। परमाणु-शक्ति के इसी हानिकारक अवयव से वैज्ञानिकों को बड़ा भय लगता है। संसार को रेडियो ऐक्टिव किरणों से बचाने के लिए ही परमाणु-बमों के प्रयोगों तक को बंद करने की वैज्ञानिक अपील करते हैं।

१९४५ में पहली बार हिरोशिमा और नागासाकी पर पहला परमाणु-बम गिराया गया। उसके विस्फोट से जो हानि हुई और बड़ी मात्रा में विध्वंस हुआ उसको देखकर मानवता काँप उठी; परमाणु

की असीम शक्ति को देखकर सम्पूर्ण संसार भयभीत हो गया। सबको ऐसा लगा कि विज्ञान की इस प्रकार की सतत उन्नति से सम्भव है कि संसार से मनुष्य और उसकी सभ्यता के चिह्न तक नष्ट हो जायें। इस प्रकार का भय स्वाभाविक और उचित ही है। कदाचित् आध्यात्मिक और नैतिक रूप से अविकसित मनुष्य के हाथ में इस भीषण शक्ति का देना विज्ञान की भूल थी। किन्तु अब तो वह शक्ति मिल ही गई है, उसका ज्ञान हो ही गया है। उसे भुलाना तो सम्भव नहीं, किन्तु उसका उपयोग करना सम्भव है। यह कैसे हो सकता है ?

रेडियो ऐक्टिव खोजक (Radio-active tracers)

परमाणु-शक्ति द्वारा केन्द्रों में परिवर्तन करके कुछ ऐसे केन्द्रवाले परमाणु बनाये गये हैं जो पहले अज्ञात थे। इनको आइसोटोप (Isotope) कहते हैं। इनकी विशेषता यह होती है कि इनसे रेडियो ऐक्टिव किरणें निकलती रहती हैं। इन किरणों का पहिचानना बड़ा आसान है। एक परमाणु तक से भी इस प्रकार की जो किरणें निकलती हैं, उनको गाइगर मुलर काउंटर (Geiger Muller Counter) द्वारा ज्ञात किया जा सकता है। फलतः रेडियो ऐक्टिव आइसोटोप के एक परमाणु तक को रसायनज्ञ पहिचान सकते हैं। इस गुण के कारण ऐसे परमाणुओं को खोजक (Tracers) भी कहा जाता है क्योंकि इनके सूक्ष्म मात्रा में प्रयोग से क्रियाओं को जाना जा सकता है। ऐसे परमाणुओं से रेडियो ऐक्टिव किरणें थोड़ी मात्रा में ही निकलती हैं, इसलिए इनका सावधानी से प्रयोग करने पर कोई विशेष हानि नहीं होती। इनके रेडियो ऐक्टिव गुण सब परिस्थितियों में विद्यमान रहते

हैं। ऐसे रेडियो ऐक्टिव खोजकों का अनेक क्षेत्रों में उपयोग किया जाने लगा है।

जीवन-क्रियायें

जीवन-सम्बन्धी रासायनिक क्रियाओं के अध्ययन में इनसे बड़ी सहायता मिली है। पहले इन क्रियाओं का मृत अवस्था में अध्ययन किया जा सकता था, जीवित अवस्था में नहीं। पाचक रसों की रासायनिक क्रियाओं का अध्ययन पेट में नहीं किन्तु परख नली में, मनुष्य में नहीं किन्तु प्रयोगशाला में, किया जा सकता था। किन्तु इनसे इन क्रियाओं के अध्ययन की एक नवीन विधि ज्ञात हुई।

जैसे, हमको ज्ञात करना है कि घी खाने से उसका पाचन किस प्रकार होता है। घी के कुछ परमाणुओं को रेडियो ऐक्टिव बना दिया जाता है। इस तरह से बनाये घी को किसी व्यक्ति को खिला दिया जाता है। रेडियो ऐक्टिव खोजकों पर किसी प्रकार की क्रिया का प्रभाव नहीं पड़ता, उनसे रेडियो ऐक्टिव किरणें निकलती रहती हैं। इसलिए शरीर के जिन-जिन भागों में घी जाता है, उनको गाइगर मुलर काउंटर द्वारा ज्ञात किया जाता है। इस भाँति घी खाने के बाद वह शरीर के किन-किन भागों में जाता है और कितनी देर रहता है, इसका सरलता से पता लगाया जा सकता है।

वृक्षों में भी इस विधि का उपयोग किया जाता है। हवा से कार्बन डाई आक्साइड, पृथ्वी से जल और खनिज पदार्थ ले करके पौधे प्रकाश में प्रकाश-संश्लेषण-विधि से खाद्य पदार्थों को बना लेते हैं। पौधे किन रासायनिक क्रियाओं द्वारा यह कार्य करते हैं? रसायनज्ञ इसको

जानने के लिए बड़ा प्रयत्न करते रहे हैं। पत्तियों में पौधे द्वारा बनाये पदार्थों के रासायनिक विश्लेषण से ठीक प्रकार का ज्ञान प्राप्त नहीं हुआ। अब पौधों को ऐसी कार्बन डाई आक्साइड दी जाती है, जिसके अणु में कार्बन के रेडियो ऐक्टिव परमाणु रहते हैं। पौधों के जिन-जिन भागों में ये जाते हैं, उनको गाइगर मुलर काउंटर द्वारा सरलता से जाना जा सकता है। थोड़ी-थोड़ी देर बाद पत्तियों का रस निकाल लिया जाता है और उसमें रेडियो ऐक्टिव परमाणु की खोज से मालूम हो जाता है कि कौन-सा रासायनिक पदार्थ बना। इन सुगम विधियों से जीवन की रासायनिक क्रियाओं का जीवों में ही अध्ययन किया जाता है।

श्रोषधि

इन रेडियो ऐक्टिव खोजकों का श्रोषधि के क्षेत्र में सबसे अधिक उपयोग होता है। कैंसर के रोगी को रेडियो ऐक्टिव कोबाल्ट दिया जाता है। यह शरीर के उस भाग में पहुँचाया जाता है जहाँ कैंसर होता है। इससे निकली रेडियो ऐक्टिव किरणों द्वारा वहाँ के कोशों का नाश होने लगता है। कैंसर के रोग में कुछ तन्तुओं के कोश अनावश्यक ही बढ़ जाते हैं। उनको नष्ट करने का यह एक बड़ा सरल उपाय है।

गले में थायरवायड ग्रंथियाँ होती हैं। इनके बढ़ जाने या घट जाने से कई बीमारियाँ हो जाती हैं। सूक्ष्म मात्रा में (जिससे रेडियो ऐक्टिव किरणों का बुरा प्रभाव न हो) रेडियो आयोडीन देने से इस दोष को ज्ञात किया जा सकता है। थायरवायड ग्रंथि के कैंसर को भी इससे अच्छा किया जाता है।

हृदय अथवा मस्तिष्क के आपरेशन के पहले यह जानने की आवश्यकता होती है कि किस स्थान पर चीड़-फाड़ की जाय। इसके लिए कुछ रेडियो ऐक्टिव रंगों का प्रयोग किया जाता है। ये मस्तिष्क अथवा हृदय के रोगग्रस्त भाग पर जम जाते हैं। गाइगर मुलर काउंटर द्वारा इस स्थान को जाना जा सकता है।

सब बड़े अस्पतालों में इस प्रकार के रेडियो ऐक्टिव खोजक रहते हैं। चिकित्सकों को इनसे बड़ी सुविधा हो गई है।

खेती

उपयुक्त खाद का ज्ञान खेती के लिए बड़ा महत्वपूर्ण है। मिट्टी में रेडियो ऐक्टिव खोजक मिला दिये जाते हैं। यदि पौधे इनका उपयोग करते हैं तो रेडियो ऐक्टिव गुण पौधे में आ जाते हैं और इनको गाइगर मुलर काउंटर से जाना जा सकता है। यदि पौधे इनका उपयोग नहीं करते तो पौधे में इन खोजकों के गुण नहीं आ पाते। इस प्रकार आसानी से जाना जा सकता है कि कौन-से पौधे किस प्रकार की खादों को मिट्टी से लेते हैं।

कुछ खेतों के बीच में रेडियो कोबाल्ट भरे स्तम्भ को गाड़ दिया जाता है। रेडियो ऐक्टिव किरणें स्तम्भ से निकलती रहती हैं। पौधों पर उनकी प्रतिक्रियाओं का अध्ययन किया जाता है। ऐसे खेतों के पास मनुष्यों को नहीं जाने दिया जाता।

व्यवसाय

इस क्षेत्र में ये काफ़ी उपयोगी सिद्ध हुये हैं। खोजक परमाणुओं

की सहायता से जाना गया कि किस प्रकार के छर्रे सबसे कम घिसते हैं। मशीन में दिये गये चिकने पदार्थों को रेडियो ऐक्टिव बना दिया जाता है। जिन छर्रे में सबसे कम ऐसी चिकनई लग पाती है वे सबसे अधिक अच्छे माने जाते हैं। इसी प्रकार विभिन्न टायरों में इन खोजक परमाणुओं से ज्ञात होता है कि उसके कौन-से भाग अधिक घिसते हैं। टायरों के विभिन्न भागों के रेडियो ऐक्टिव गुणों की पहले परीक्षा कर ली जाती है। टायरों के चलने के बाद पुनः परीक्षा में उसके अधिक घिसनेवाले भागों का ज्ञान हो जाता है।

रबड़, धातु और कागज के महीन पत्तों के बनाने में भी इनसे सहायता मिलती है। खोजक परमाणुओं को इनके एक ओर रख दिया जाता है। दूसरी ओर रेडियो ऐक्टिव किरणों के मापन से ज्ञात हो जाता है कि पत्तर कितने मोटे हैं। यदि सब स्थलों पर एक ही मात्रा की किरणें निकलती हैं तो मोटापन एक-सा है, नहीं तो विभिन्न प्रकार का।

प्राकृतिक स्रोतों से जब तेल निकाला जाता है तो तेल के भिन्न-भिन्न तहों में होने के कारण एक के बाद दूसरे तेल के तेल नलों में आते रहते हैं। रेडियो ऐक्टिव परमाणुओं के मिला देने से आसानी से ज्ञात किया जा सकता है कि कब दूसरे तेल का तेल नलों में आ रहा है। इस ज्ञान से तेलों को पृथक् करने में बड़ी सुविधा होती है।

शक्ति

परमाणु-शक्ति को उद्योग में लगाने की बात भी सोजी जा रही है। इससे खिंची एक पनडुब्बी—नाटिलस—का प्रयोग हाल में ही आरम्भ हुआ है। आशा की जाती है कि निकट भविष्य में इससे इंजन चलाये जा सकेंगे और बड़ी मात्राओं में बिजली का प्रकाश उत्पन्न किया जा सकेगा।

यह बताया जा चुका है कि परमाणु-शक्ति एकदम से निकलती है। उसके नियंत्रण का प्रश्न बड़ा कठिन है। जब तक परमाणु-शक्ति का उत्पादन धीरे-धीरे नहीं होगा तब तक उद्योगों में इसको लगाना कठिन है। इसको नियंत्रित करने के लिए प्रयोग किये जा रहे हैं। एक और भी गम्भीर समस्या है। परमाणु-शक्ति को उत्पन्न करने में जिन रेडियो ऐक्टिव पदार्थों का उपयोग किया जायगा, उनको उपयोग के पश्चात् कहाँ फेंका जाय; ज़मीन में गाड़ देने से मनुष्यों पर बुरा प्रभाव होगा? समुद्रों में फेंकने से नाविकों और सामुद्रिक जन्तुओं को बड़ी असुविधा होगी। जब तक रेडियो ऐक्टिव किरणों से बचने के व्यावहारिक उपाय ज्ञात न होंगे तब तक परमाणु-शक्ति का अधिक मात्रा में उपयोग नहीं किया जा सकता। इस असीम शक्ति के खजाने को खोलने के सिद्धान्त तो ज्ञात हो ही गये हैं; इसके प्रयोग की विधि भी ज्ञात हो ही जायगी। मोटर के सिद्धान्त को जानने के बाद मोटर बनाने में ३० वर्ष लगे थे। परमाणु-शक्ति में खींचे जानेवाले इंजनों को भी बनाने में समय लगेगा।

इस प्रकार हम देखते हैं कि परमाणुओं के केन्द्रों को तोड़ करके परमाणु-शक्ति प्राप्त की गई है। रेडियो ऐक्टिव खोजक परमाणुओं का आज भी विभिन्न क्षेत्रों में उपयोग हो रहा है और ऐसी आशा की जाती है कि भविष्य में परमाणु-शक्ति के नियंत्रण से उसका अधिक प्रचार हो सकेगा। शान्ति-काल में भी परमाणु-शक्ति का उपयोग हो सकता है। उसके विनाशकारी गुणों से मानव दूर ही रहे तो अच्छा है, नहीं तो उसका सम्पूर्ण विनाश हो सकता है। परमाणु-शक्ति का किस दिशा में प्रयोग किया जायगा, इस पर मानव-जाति का भविष्य निर्भर है।

रसायन और आधुनिक अनुसंधान

पिछले अध्यायों में रसायन के उपयोगों का एक रेखा-चित्र प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया गया है। मनुष्य का किस प्रकार के और कितनी मात्रा में खाद्य पदार्थों का उपयोग करना चाहिए? भोजन से अधिकतम लाभ कैसे प्राप्त किया जाय? उपयुक्त खादों के प्रयोग से अच्छी फसल कैसे उगाई जाय? अच्छे पदार्थों द्वारा घरों, इमारतों और सड़कों को कैसे मजबूत बनाया जाय? विभिन्न धातुओं के ज्ञान से लाभ कैसे उठाया जाय? नवीन धातु-संकरों के प्रयोग से जीवन को अधिक सुखी कैसे बनाया जाय? विविध साधनों से यात्रा तीव्र और सुखद कैसे हो? भौतिक और मानसिक सम्पर्कों को वृहत्तर कैसे किया जाय? रात्रि को अधिक प्रकाशमय बनाने के लिए किन पदार्थों का प्रयोग किया जाय? पदार्थों की रक्षा से उनका अधिकतम उपयोग कैसे किया जाय? विभिन्न प्रकार के शीशे, प्लास्टिक, रबड़ और सुगंधित पदार्थों से जीवन को सुलभ, सुगम और सुखी कैसे बनाया जाय? भौतिक सफ़ाई किस प्रकार से की जाय? विभिन्न प्रकार की ओषधियों से रोगों को दूर करके मानवता को नीरोग कैसे किया जाय? आवश्यकता पड़ने पर बाह्य आक्रमणों से देश की सुरक्षा कैसे की जाय? सस्ती और अधिक ईंधन से अधिकतम शक्ति कैसे प्राप्त की जाय? क्या परमाणु-शक्ति को उपयोगी बनाया जा सकता है? इन आवश्यक समस्याओं के हल करने में रसायनज्ञ ने जो

भाग लिया है, उसको संक्षेप में बताने का इस पुस्तक में प्रयत्न किया गया है।

रसायनज्ञ का ध्येय पदार्थ का ज्ञान प्राप्त करना है; रसायन-नाटक में भाग लेते हुए विभिन्न तत्त्वों और यौगिकों को मूलरूप से समझने की उसकी आकांक्षा है; नवीन स्रोतों की परीक्षा करके नये उपयोगी पदार्थों को अधिक मात्रा में उत्पन्न करने का उसे हींसला है; उसकी उत्कट इच्छा है कि मानव-जाति को किसी प्रकार के भौतिक पदार्थ का कष्ट न हो। संसार की दरिद्रता को रासायनिक स्तर पर दूर कर लिया गया है। आज की दूनी जनसंख्या के लिए भी प्रत्येक प्रकार के पदार्थ बनाये जा सकते हैं। आर्थिक एवं राजनीतिक बाधाओं को दूर करके जितनी शीघ्र उत्पादन-वृद्धि हो सके, उतना ही अच्छा है।

रसायनज्ञ के विविध कार्यों के परिचय से यह न समझना चाहिये कि रसायन का ज्ञान ही सब कुछ है। वस्तुतः यह भी एक मौलिक (Fundamental) विज्ञान है। इसका हर क्षेत्र में विस्तार होता है। किन्तु जो कुछ भी अब तक किया गया है वह सब केवल रसायन पर नहीं, किन्तु सम्पूर्ण विज्ञान पर आधारित है। रसायनज्ञ को पग-पग पर विज्ञान के अन्य विभागों से सहायता लेनी पड़ती है। भौतिक शास्त्र से पदार्थों के गुणों के अध्ययन में, भूगर्भशास्त्रियों से पदार्थों के नए स्रोतों को खोजने में, जीव-शास्त्रियों से जीवन-सम्बन्धी रासायनिक क्रियाओं के समझने में, गणितज्ञ से सैद्धान्तिक पृष्ठभूमि के बनाने में रसायनज्ञ को अकथनीय सहायता मिलती है। केवल रसायन से नहीं, किन्तु सम्पूर्ण विज्ञान से इस प्रकार का पदार्थ-ज्ञान सम्भव हो सका है। “ज्ञान की धारा एक है। उसके कठोर विभाग करना मूर्खता है, क्योंकि सब प्रकार के विभागों के नीचे एक ही धारा

का प्रवाह होता रहता है।” सम्पूर्ण ज्ञान की शृंखला में रसायन का ज्ञान एक छोटी किन्तु महत्वपूर्ण कड़ी है।

पिछले अध्यायों में जो कुछ बताया गया है, उससे यह न समझना चाहिये कि रसायनज्ञ ने बहुत कुछ कर लिया है। वैज्ञानिकों के लिए पिछले कार्य का विशेष महत्त्व नहीं होता। पिछली सफलताओं से और अधिक कार्य करने का उत्साह मिलता है, आत्म-सन्तोष नहीं। इसलिये आज भी रसायनज्ञ पहले से भी तेज गति से अनुसन्धान-कार्य में निमग्न हैं।

खेती और विभिन्न उद्योगों में नित्य नई समस्याएँ आती रहती हैं। रसायनज्ञ इनके सुलभाने में जा महत्वपूर्ण भाग ले सकता है, उससे आप परिचित हो ही चुके हैं। किसी प्रकार के पदार्थ-उत्पादन को सफल बनाने में रासायनिक ज्ञान में दक्ष अन्वेषक का साथ में होना आवश्यक है। विदेशों में हर बड़ी कम्पनी की अपनी अलग अनुसन्धान-शाला होती है। भारत में भी इस विचार के अधिक प्रचार की आवश्यकता है।

औद्योगिक समस्याओं को सुलभाने के साथ-साथ पदार्थ-ज्ञान को विस्तृत करने में भी रसायनज्ञ सलग्न हैं। उनके अनुसन्धान की दो मुख्य दिशाएँ हैं:—

(१) सैद्धान्तिक पृष्ठभूमि की तैयारी और

(२) पदार्थ एवं जीवन के सम्बन्ध का ज्ञान।

बहुधा लोग कहते हैं — विज्ञान हमको 'कैसे' बताता है किन्तु 'क्यों' के उत्तर जानने की चेष्टा केवल दार्शनिक ही करते हैं। यह विचार भ्रममूलक है। १९वीं शताब्दी तक तो रसायनज्ञ केवल यह जानने में संलग्न रहे कि किन-किन पदार्थों से किन परिस्थितियों में कौन-कौन

से पदार्थ बनते हैं। रासायनिक क्रियाओं के इस परिचय से ही पिछली शताब्दी के वैज्ञानिक और रसायनज्ञ सन्तुष्ट हो जाते थे, किन्तु बीसवीं शताब्दी के रसायनज्ञों ने 'व्यों' का भी अध्ययन किया है। परमाणु-रचना के ज्ञान से तत्त्वों और योगिकों की अणु-रचनाओं का ज्ञान प्राप्त किया जाता है। विभिन्न परिस्थितियों में एक प्रकार के अणु में विविध परिवर्तन क्यों होते हैं—इसका उत्तर प्राप्त करने की चेष्टा की गई है। अमुक रासायनिक प्रतिक्रिया क्यों होती है? 'कैसे' से आरम्भ करके 'क्यों' तक क्षेत्र को विस्तृत करने के लिए एक सैद्धान्तिक पृष्ठभूमि को तैयार करने में रसायनज्ञ आज संलग्न हैं।

आरम्भिक अध्याय में बताया गया था कि वैज्ञानिकों ने भौतिक संसार को तीन श्रेणियों में विभक्त किया है:—

(१) शक्ति, (२) पदार्थ और (३) जीवन।

आधुनिक विज्ञान ने शक्ति और पदार्थ के सम्बन्ध को जान लिया है। पदार्थ के नाश से शक्ति का उत्पादन किस प्रकार होता है, इसको परमाणु-बम से दिखाया जा सकता है। यदि पदार्थ और शक्ति में सामंजस्य है तो क्या पदार्थ और जीवन में सामंजस्य नहीं? होना तो चाहिये, क्योंकि ईश्वर तो एक ही है।

इस समस्या पर नवीन दृष्टिकोण से विचार करने का प्रयत्न किया जा रहा है। जीवों में होनेवाली क्रियाओं को रासायनिक दृष्टिकोण से समझने का प्रयत्न हो रहा है। अभी तक पाचन-विधि का ही पूर्ण रासायनिक ज्ञान हो सका है; अन्य विधियों के रासायनिक अध्ययन का प्रयत्न किया जा रहा है। प्रकाश-संश्लेषण जैसी सरल रासायनिक प्रक्रियाओं को पूर्णरूप से समझने में रसायनज्ञ प्रयत्नशील हैं। विभिन्न प्रकार के पदार्थों को बनाने में रसायनज्ञ का जटिल प्रतिक्रियाओं की

सहायता लेनी पड़ती है। रबड़, शकर, सुगंध, जीवनोपयोगी पदार्थ बनाने में रसायनज्ञ के सम्मुख बड़े जटिल प्रश्न आते हैं, किन्तु इन्हीं पदार्थों के बनाने में पौधों अथवा जीवों को कोई विशेष कठिनाई नहीं होती। साधारण तापक्रम पर ही बिना जटिल यंत्रों के इनकी कार्यवाही चलती रहती है। क्यों और कैसे ?

यह सब जानने के लिए पदार्थ और जीवन के सम्बन्ध को जानना आवश्यक है। रसायनज्ञ के सम्मुख अब भी अज्ञान का क्षेत्र विशाल है। जैसे-जैसे यह क्षेत्र संकुचित होता जायगा वैसे-वैसे रसायन का दैनिक जीवन में उपयोग बढ़ता जायगा। भौतिक पदार्थों का तो वे नियंत्रण करते ही हैं, क्या वे जीवन-पदार्थों का भी नियंत्रण कर सकेंगे ? उत्तर भविष्य के गर्भ में है।

शुद्धि-पत्र

पृ० १२-ऊपर से नवीं लाइन-मंगनीसियम के स्थान पर मंगनीज पढ़िये ।

पृ० १६-अन्तिम लाइन-इस के स्थान पर इस दशा में पढ़िये ।

पृ० २१- „ „ -! के स्थान पर ? ।

पृ० २८-नीचे से तीसरी लाइन-चल के स्थान पर मिल पढ़िये ।

पृ० २८-अन्तिम लाइन-आयतन के स्थान पर भार पढ़िये ।

पृ० २९-ऊपर से सातवीं लाइन-आयतन के स्थान पर भार पढ़िये ।

पृ० २९-ऊपर से आठवीं „ -आयतन के स्थान पर भार पढ़िये ।

पृ० ४३-नीचे से तीसरी „ -की के स्थान पर के पढ़िये ।

पृ० ४६-पहली लाइन-अंशुए के स्थान पर अकुए पढ़िये ।

पृ० ४६-ऊपर से ग्यारहवीं लाइन-म के स्थान पर में पढ़िये ।

पृ० ७१-ऊपर से तीसरी लाइन-हिलरे के स्थान पर हिलरे पढ़िये ।

पृ० ७१-नीचे से सातवीं „ -गढ़ाई के स्थान पर गाढ़ाई पढ़िये ।

पृ० ७९-नीचे से पाँचवीं „ - के स्थान पर है पढ़िये ।

पृ० ८३-नीचे से सातवीं „ -सीमट के स्थान पर सीमेंट पढ़िये ।

पृ० ८७-ऊपर से दूसरी „ -जाते के स्थान पर जाती पढ़िये ।

पृ० ८८-नीचे से सातवीं „ -खान के स्थान पर खाने पढ़िये ।

पृ० १०८-ऊपर से चौदहवीं लाइन-डायनेमाइट के स्थान पर डायने-
माइट पढ़िये ।

